जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

प्रथम सत्र का निर्धारित पाठ्यक्रम

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

ॐ

॥ परमात्मने नमः ॥

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन ग्रन्थमाला, पुष्प–४

जैन-सिद्धान्त प्रवेशरत्नमाला

प्रथम सत्र का निर्धारित पाठ्यक्रम

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन
'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उ०प्र०)

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर–जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

पाँचवाँ संस्करण : 1100 प्रतियाँ (सम्पादित)
(दशलक्षण महापर्व के पावन अवसर पर प्रकाशित, मंगलवार, 03 सितम्बर 2019)

मूल्य –

— मुमुक्षुता की प्रगटता अथवा भावना/संकल्प ही
इस पुस्तक का उचित मूल्य है।

Available At -

— **TEERTHDHAM MANGALAYATAN**
Aligarh-Agra Road, Sasni-204216, Hathras (U.P.)
www.mangalayatan.com; info@mangalayatan.com

— **TEERTHDHAM CHIDAYATAN**
Dusari Nasiyan se Aage, Hastinapur, Distt. Meerut-250404 (U.P.)
Shri Mukeshchand Jain, Mob, 9837079003

— **SHRI KUNDKUND KAHAN DIG. JAIN SWADHYAY MANDIR**
29, Gandhi Road, Dehradun-248001 (Uttarakhand)
Ph. : 0135 - 2654661 / 2623131

— **AZAD TRADING COMPANY**
Jain Mandir ke Neeche, Lal Kauyan, Bulandshahar-203001 (U.P.)
Ph. : 9897096781

— **SHREE KUNDKUND-KAHAN PARMARTHIK TRUST**
302, Krishna-Kunj, Plot No. 30,
Navyug CHS Ltd., V.L. Mehta Marg,
Vile Parle (W), Mumbai - 400056
e-mail : vitragva@vsnl.com / shethhiten@rediffmail.com

टाइप सेटिंग :

मङ्गलायतन ग्राफिक्स, अलीगढ़

मुद्रक :

मङ्गलायतन मुद्रणालय, अलीगढ़

प्रकाशकीय

जगत के सब जीव, सुख चाहते हैं और दु:ख से भयभीत हैं। सुखी होने के लिये, जिनवचनों को समझना अत्यन्त आवश्यक है, इसी प्रयोजन हेतु जिनधर्म में प्रवेश पाने के इच्छुक छात्रों/मङ्गलार्थियों को आगमानुसार, जिनधर्म की शिक्षा प्रदान कर, भविष्य को शाश्वत सुख की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया जा रहा है। जिनधर्म के रहस्यों के उद्घोषक अध्यात्म युगपुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की शरण में रहकर, पूज्य पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी जैन ने समग्र जिनशासन के जिन मूलभूत सिद्धान्तों को सीखा, उन्हें 'जैन-सिद्धान्त प्रवेशरत्नमाला' के आठ भागों में गुंथित किया, जो जिनधर्म में प्रवेश पाने के लिये, अत्यन्त प्रयोजनभूत है। जैनधर्म के प्राणभूत जानकर, विद्यार्थियों की प्रारम्भ से लेकर बारहवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों के लिये यह पाठ्यक्रम में शामिल करने का निर्णय, विद्वानों की एक बैठक में लिया गया। **मङ्गलायतन** में प्रायोजित इस बैठक में, बालब्रह्मचारिणी बहिन कल्पना जैन, सागर/जयपुर; श्रीमती बीना जैन, देहरादून; पण्डित अशोक लुहाड़िया, भूतपूर्व निदेशक; पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर जैन, निदेशक; डॉ. सचिन्द्र जैन, प्राचार्य, भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, **तीर्थधाम मङ्गलायतन,** शामिल थे।

इस पाठ्यक्रम की सरलता, आत्मकल्याण हेतु महत्तानुसार सभी आध्यात्मिक विद्यालयों में प्रारम्भ कराने की ओर भी, हमारी भावना है।

सभी विद्यार्थी इन भागों में समाहित जिनधर्म की नींवरूप सिद्धान्तों को गम्भीरता से ग्रहणकर, अपने दृष्टि दोष दूरकर, आत्मानुभवता करें-यही मंगल भावना है।

निवेदक

प्रकाशक मण्डल

भूमिका

वीतरागी जिनेन्द्र परमात्मा का अनेकान्त-स्याद्वादमयी जिनशासन, चार अनुयोगमय है एवं जिनवाणी में अनेकान्तमय वस्तु का स्याद्वादशैली में प्रतिपादन किया गया है। आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने अनेकान्त को जिनेन्द्रभगवान का अलंघ्य शासन कहा है। इसलिए अनेकान्तमय वस्तु को जानकर, उसमें से सम्यक् एकान्तस्वरूप निज शुद्धात्मद्रव्य का अवलम्बन ही परम हितकारी है, इसलिए इस चौथे भाग में सर्व प्रथम अनेकान्त स्याद्वाद सम्बन्धी प्रश्नोत्तर दिये गये हैं।

आत्मा का हित मोक्ष ही है क्योंकि मोक्ष में आकुलता नहीं है; अतः निज चैतन्यस्वभावी भगवान आत्मा के आश्रय से मोक्षमार्ग प्रगट करना, प्रत्येक पात्र जीव का कर्तव्य है। अनादि काल से ही अज्ञानी जीव, शुभभावरूप पराश्रितभावों में मोक्षमार्ग की कल्पना करके अथवा शरीराश्रित क्रियाकाण्ड में मोक्षमार्ग मानकर, संसार परिभ्रमण का पात्र बना हुआ है; इसलिए दूसरे और तीसरे अध्याय में मोक्षमार्ग तथा मोक्षमार्ग सम्बन्धी प्रश्नोत्तरों का समावेश किया गया है; जिससे बन्धमार्ग में मोक्षमार्ग माननेरूप मिथ्याभ्रान्ति का अभाव होकर आत्मकल्याण का पथ प्रशस्त हो।

तत्त्वार्थसूत्र में जीवों के निज भावों का वर्णन करते हुए, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक एवं पारिणामिकभाव को जीव का स्वतत्त्व कहा गया है। इन भावों का स्वरूप पहचानकर, उपादेयभूत निज परमपारिणामिकभाव के अवलम्बन से, सर्व प्रथम औपशमिक, धर्म का क्षायोपशमिक और क्षायिकभाव प्रगट करना पात्र जीवों का कर्तव्य है। यद्यपि औदयिकभाव भी जीव की पर्याय में होता है, तथापि आकुलतामय होने से उसे हेय कहा गया है। इन सभी पंच भावों पर उपयोगी प्रश्नोत्तरों का समावेश भी इस पुस्तक में किया गया है।

पण्डित राजमलजी द्वारा रचित पंचाध्यायी ग्रन्थ अध्यात्म के सूक्ष्म एवं गम्भीर रहस्यों से भरपूर है। इसमें द्रव्य-गुण-पर्याय; निश्चय-व्यवहार आदि

नय; जीवों के पाँच भाव; सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्वरूप अत्यन्त सूक्ष्मता से प्रतिपादित किया गया है। अत: पात्र जीवों के लिये उपयोगी जानकर, इस ग्रन्थ के आधार पर प्रश्नोत्तरों का संकलन अन्त में परिशिष्टरूप से दिया गया है।

यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय है कि वर्तमान दिगम्बर जैन समाज में उक्त समस्त विषयों की चर्चा का उदय पूज्य गुरुदेवश्री की अध्यात्म क्रान्ति से ही हुआ है। पूज्य गुरुदेवश्री ने अपने प्रवचनों में जैन सिद्धान्तों का आत्महितकारी स्वरूप स्पष्ट करते हुए, निरन्तर आत्मकल्याण की पावन प्रेरणा भी प्रदान की है। इस उपकार के लिये पूज्य गुरुदेवश्री के चरणों में सादर वन्दन समर्पित करता हूँ।

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन एवं समादरणीय श्री रामजीभाई दोशी, श्री खीमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं के समय ही मैं इन विषयों को प्रश्नोत्तररूप से आत्महितार्थ लिखता रहा हूँ, जिसे देहरादून मुमुक्षु मण्डल ने अब तक तीन बार प्रकाशित किया है। अब यह चौथा संस्करण मेरी भावना के अनुरूप सम्पादित होकर प्रकाशित किया जा रहा है, जिसकी मुझे प्रसन्नता है।

हे जीवों! यदि आत्महित करना चाहते हो तो समस्त प्रकार से परिपूर्ण निज आत्मस्वभाव की रुचि और विश्वास करो। देहादि से सर्वथा भिन्न ज्ञानस्वरूप निज आत्मा का निर्णय करना ही सम्पूर्ण जिनशासन का सार है क्योंकि जो जीव, देहादि से भिन्न ज्ञान-दर्शनस्वभावी आत्मा का आश्रय लेते हैं, वे मोक्षमार्ग प्राप्त कर मोक्ष को चले जाते हैं और जो देहादि में ही अपनेपने का श्रद्धान-ज्ञान-आचरण करते हैं, वे चारों गतियों में घूमकर निगोद में चले जाते हैं।

सभी जीव इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किये गये प्रश्नोत्तरों का बारम्बार अभ्यास करके, आत्महित के मार्ग में प्रवर्तमान हों - इसी भावना के साथ-

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

अलीगढ़

अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी
(संक्षिप्त जीवनवृत्त)

भारत की वसुन्धरा, अनादि से ही तीर्थङ्कर भगवन्तों, वीतरागी सन्तों, ज्ञानी–धर्मात्माओं एवं दार्शनिक / आध्यात्मिक चिन्तकों जन्मदात्री रही है। इसी देश में वर्तमान काल में भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थङ्कर हुए हैं। वर्तमान में भगवान महावीर के शासनकाल में धरसेन आदि महान दिगम्बर सन्त, श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य आदि महान आध्यात्मिक सन्त, इस पवित्र जिनशासन की पताका को दिग्दिगन्त में फहराते रहे हैं।

वर्तमान शताब्दी में जिनेन्द्रभगवन्तों, वीतरागी सन्तों एवं ज्ञानी धर्मात्माओं द्वारा उद्घाटित इस शाश्वत् सत्य को, जिन्होंने अपने प्रचण्ड पुरुषार्थ से स्वयं आत्मसात करते हुए पैंतालीस वर्षों तक अविरल प्रवाहित अपनी दिव्यवाणी से, इस विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति का शंखनाद किया – ऐसे परमोपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी से आज कौन अपरिचित है! पूज्य गुरुदेवश्री ने क्रियाकाण्ड की काली कारा में कैद, इस विशुद्ध जिनशासन को अपने आध्यात्मिक आभामण्डल के द्वारा न मुक्त ही किया, अपितु उसका ऐसा प्रचार–प्रसार जिसने मानों इस विषम पञ्चम काल में तीर्थङ्करों का विरह भुलाकर, भरतक्षेत्र को विदेहक्षेत्र और पञ्चम काल को चौथा काल ही बना दिया।

भारतदेश के गुजरात राज्य में भावनगर जनपद के 'उमराला' गाँव में स्थानकवासी सम्प्रदाय के दशाश्रीमाली वणिक परिवार के श्रेष्ठीवर्य श्री मोतीचन्दभाई के घर, माता उजमबा की कूख से विक्रम संवत् 1946 के वैशाख शुक्ल दूज, रविवार (दिनाङ्क 21 अप्रैल, सन् 1890 ईस्वी) प्रातःकाल इन बाल महात्मा का जन्म हुआ।

सात वर्ष की वय में लौकिक शिक्षा लेना प्रारम्भ किया। प्रत्येक वस्तु के हृदय तक पहुँचने की तेजस्वी बुद्धिप्रतिभा, मधुरभाषीपना, शान्तस्वभाव, सौम्य व गम्भीर मुखमुद्रा, तथा निस्पृह स्वभाववाले होने से बाल 'कानजी' शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में प्रिय हो गये। विद्यालय और जैन पाठशाला के अभ्यास में

प्राय: प्रथम नम्बर आता था, किन्तु विद्यालय की लौकिक शिक्षा से उन्हें सन्तोष नहीं होता था। अन्दर ही अन्दर ऐसा लगता था कि मैं जिसकी खोज में हूँ, वह यह नहीं है।

तेरह वर्ष की उम्र में माता के अवसान से, पिताजी के साथ पालेज जाना हुआ। चार वर्ष बाद पिताजी के स्वर्गवास के कारण, सत्रह वर्ष की उम्र में भागीदार के साथ व्यवसायिक प्रवृत्ति में जुड़ना हुआ। दुकान पर भी धार्मिक पुस्तकें पढ़ते थे। वैरागी चित्तवाले कहानकुँवर रात्रि के समय रामलीला या नाटक देखने जाते, तो उसमें से वैराग्यरस का घोलन करते थे। जिसके फलस्वरूप पहली बार सत्रह वर्ष की उम्र में उज्ज्वल भविष्य की अभिव्यक्ति करता हुआ, बारह लाईन के काव्य की रचना करते हैं — **शिवरमणी रमनार तूं, तूं ही देवनो देव।**

सत्य की शोध के लिए दीक्षा लेने के भाव से 22 वर्ष की युवा अवस्था में दुकान का परित्याग करते हैं, और गुरु के समक्ष आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार करते हैं, फिर 24 वर्ष की उम्र में (विक्रम संवत् 1970) में जन्मनगरी उमराला में 2000 साधर्मियों के विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में स्थानकवासी सम्प्रदाय की दीक्षा अंगीकार करते हैं। दीक्षा के समय हाथी पर चढ़ते हुए धोती फट जाती है, तीक्ष्ण बुद्धि के धारक कानजी को शङ्का होती है कि कुछ गलत हो रहा है।

विक्रम संवत् 1978 में महावीरप्रभु के शासन-उद्धार का और हजारों मुमुक्षुओं के महान पुण्योदय का सूचक एक मङ्गलकारी पवित्र प्रसङ्ग बनता है :

विधि के किसी धन्य क्षण में श्रीमद्भगवत् कुन्दकन्दाचार्यदेव रचित 'समयसार' नामक महान परमागम, गुरुदेवश्री के हस्तकमल में आता है और इन पवित्र पुरुष के अन्तर में से सहज ही उद्गार निकलते है — **'यह तो अशरीरी होने का शास्त्र है।'** समयसार का अध्ययन और चिन्तन करते हुए अन्तर में आनन्द और उल्लास प्रस्फुटित होता है एवं अन्तरंग जीवन में भी परम पवित्र परिवर्तन होता है। भूली पड़ी परिणति निज घर देखती है। तत्पश्चात् श्री प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, मोक्षमार्गप्रकाशक, द्रव्यसंग्रह, सम्यग्ज्ञानदीपिका

इत्यादि दिगम्बर शास्त्रों के अभ्यास से आपको निःशंक निर्णय हो जाता है कि दिगम्बर जैनधर्म ही मूलमार्ग है और वही सच्चा धर्म है। इस कारण अन्तरंग श्रद्धा कुछ और तथा बाहर में वेष कुछ और — यह स्थिति आपको असह्य लगने लगती है। अतः अन्तरंग में अत्यन्त मनोमन्थन के पश्चात् सम्प्रदाय के परित्याग का निर्णय करते हैं।

परिवर्तन के लिये योग्य स्थल की शोध करते हुए सोनगढ़ आकर 'स्टार ऑफ इण्डिया' नामक एकान्त मकान में महावीर जन्मकल्याणक के दिवस, (चैत्र शुक्ल 13, संवत् 1991) दोपहर सवा बजे सम्प्रदाय का चिह्न, मुँहपट्टी का त्याग करते हैं और स्वयं घोषित करते हैं कि '**अब मैं स्थानकवासी साधु नहीं; मैं सनातन दिगम्बर जैनधर्म का श्रावक हूँ।**' सिंहवृत्ति के धारक इन महापुरुष ने 45 वर्ष की उम्र में महावीर्य उछाल कर यह अद्भुत पराक्रमी कार्य किया।

'स्टार ऑफ इण्डिया' में निवास करते हुए मात्र तीन वर्ष के दौरान ही जिज्ञासु भक्तजनों का प्रवाह दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया, जिसके कारण यह मकान एकदम छोटा पड़ने लगा। अतः भक्तों ने इन परम प्रतापी सत् पुरुष के निवास और प्रवचन का स्थल '**श्री जैन स्वाध्याय-मन्दिर**' का निर्माण किया। गुरुदेवश्री ने ज्येष्ठ कृष्णा 8, संवत् 1994 के दिन इस निवासस्थान में मंगल पदार्पण किया। यह 'स्वाध्यायमन्दिर' जीवनपर्यन्त इन महापुरुष की आत्मसाधना और वीरशासन की प्रभावना का केन्द्र बन गया।

यहाँ दिगम्बरधर्म के चारों अनुयोगों के छोटे बड़े 183 ग्रन्थों का गहनता से अध्ययन किया। उनमें से 38 ग्रन्थों पर सभा में प्रवचन किये। जिनमें श्री समयसार ग्रन्थ पर तो 19 बार अध्यात्म वर्षा की। प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, परमात्मप्रकाश, नियमसार, पंचास्तिकायसंग्रह, समयसार कलश-टीका इत्यादि ग्रन्थों पर भी बहुत बार प्रवचन किये हैं।

दिव्यध्वनि का रहस्य समझानेवाले और कुन्दकुन्दादि आचार्यों के गहन शास्त्रों के रहस्योद्घाटक इन महापुरुष की भवताप विनाशक अमृतवाणी को ईस्वी सन् 1961 से नियमितरूप से टेप में उत्कीर्ण किया गया, जिसके प्रताप से आज अपने पास नौ हजार से अधिक प्रवचन सुरक्षित उपलब्ध हैं। यह

मङ्गल गुरुवाणी, देश–विदेश के समस्त मुमुक्षु मण्डलों में तथा लाखों जिज्ञासु मुमुक्षुओं के घर–घर में गुंजायमान हो रही है। इससे इतना तो निश्चित है कि भरतक्षेत्र के भव्यजीवों को पञ्चम काल के अन्त तक यह दिव्यवाणी ही भव के अभाव में प्रबल निमित्त होगी।

इन महापुरुष का धर्म सन्देश, देश–विदेश के समस्त मुमुक्षुओं को नियमित उपलब्ध होता रहे, इस हेतु से विक्रम संवत् 2000 के मार्गशीष माह से (दिसम्बर 1943 से) **'आत्मधर्म'** नामक मासिक आध्यात्मिक पत्रिका का प्रकाशन सोनगढ़ से मुरब्बी श्री रामजीभाई माणिकचन्द दोशी के सम्पादकत्व में प्रारम्भ हुआ, जो वर्तमान में भी गुजराती एवं हिन्दी भाषा में नियमित प्रकाशित हो रहा है।

सोनगढ़ में विक्रम संवत् 1997 – फाल्गुन शुक्ल दूज के दिन नूतन दिगम्बर जिनमन्दिर में कहानगुरु के मङ्गल हस्त से श्री सीमन्धर आदि भगवन्तों की पञ्च कल्याणक विधिपूर्वक प्रतिष्ठा हुई। ईस्वी सन् 1941 से ईस्वीं सन् 1980 तक सौराष्ट्र–गुजरात के उपरान्त समग्र भारतदेश के अनेक शहरों में तथा अफ्रीका के नैरोबी में कुल 66 पञ्च कल्याणक तथा वेदी प्रतिष्ठा इन वीतरागमार्ग प्रवर्तक सत्पुरुष के पावन कर–कमलों से हुई।

श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा के निमित्त समग्र उत्तर और पूर्व भारत में मङ्गल विहार ईस्वी सन् 1957 और ईस्वी सन् 1967 में ऐसे दो बार हुआ। इसी प्रकार समग्र दक्षिण और मध्यभारत में ईस्वी सन् 1959 और ईस्वी सन् 1964 में ऐसे दो बार विहार हुआ।

दिनांक 28 नवम्बर 1980 शुक्रवार (मार्गशीष कृष्णा 7, संवत् 2037) के दिन ये प्रबल पुरुषार्थी आत्मज्ञ सन्त पुरुष देहादि का लक्ष्य छोड़कर, अपने ज्ञायक भगवान के अन्तरध्यान में एकाग्र हुए, अतीन्द्रिय आनन्दकन्द निज परमात्मतत्त्व में लीन हुए। सायंकाल आकाश का सूर्य अस्त हुआ, तब सर्वज्ञपद के साधक सन्त ने भरतक्षेत्र से स्वर्गपुरी में प्रयाण किया। वीरशासन को प्राणवन्त करके यहाँ से अध्यात्म युग सृजन कर गये।

अनुक्रमणिका

1.	भेदज्ञान	3
2.	विश्व : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ	13
3.	द्रव्य : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ	32
4.	जीवद्रव्य	77
5.	पुद्‌गलद्रव्य	92
6.	धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य	121
7.	आकाशद्रव्य	128
8.	कालद्रव्य	133
9.	अभ्यास : द्रव्य शब्द से द्रव्यों की पहिचान	137
10.	गुण : स्वरूप, भेद एवं परिज्ञान से लाभ	140
11.	अस्तित्वगुण	153
12.	वस्तुत्वगुण	173
13.	द्रव्यत्वगुण	188
14.	प्रमेयत्वगुण	205
15.	अगुरुलघुत्वगुण	224
16.	प्रदेशत्वगुण	240
17.	पर्याय : स्वरूप, भेद एवं लाभ	252
18.	चार अभाव : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ	301

ॐ

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

भाग – 1

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमो उव्ज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥1 ॥

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम् ॥2 ॥

आत्मा ज्ञानं स्वयं ज्ञानं, ज्ञानादन्यत्करोति किम्।
परभावस्य कर्तात्मा, मोहोऽयं व्यवहारिणाम् ॥3 ॥

अज्ञान तिमिरान्धानां, ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥4 ॥

देव गुरु दोनों खड़े किसके लागू पाँव।
बलिहारी गुरुदेव की, भगवन दियो बताय ॥5 ॥

करुणानिधि गुरुदेव श्री, दिया सत्य उपदेश।
ज्ञानी माने परख कर, करे मूढ़ संक्लेश ॥6 ॥

निरन्तर स्मरण रखने योग्य.........

1. अनादि काल से आज तक किसी भी परद्रव्य ने मेरा भला–बुरा किया ही नहीं;
2. अनादि काल से आज तक मैंने भी किसी भी परद्रव्य का भला–बुरा किया ही नहीं;
3. अनादि काल से आज तक नुकसानी का ही धन्धा किया है; यदि नुकसानी का धन्धा न किया होता तो संसार–परिभ्रमण मिट गया होता, सो हुआ नहीं;
4. वह नुकसानी, मात्र एक समय की पर्याय में हैं, द्रव्य–गुण में नहीं है;
5. यदि पर्याय की नुकसानी मिटानी हो और पर्याय में शान्ति लानी हो तो एकमात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड की ओर दृष्टि कर।

1

भेदज्ञान

प्रश्न 1 – तुम कौन हो ?

उत्तर – मैं ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड आत्मा हूँ।

प्रश्न 2 – तुम कौन नहीं हो ?

उत्तर – अत्यन्त भिन्न परपदार्थ; आँख, नाक, कानरूप, शरीर; मन, वाणी, आठ कर्म; शुभाशुभ विकारीभाव, मैं नहीं हूँ।

प्रश्न 3 – तुम कब से हो ?

उत्तर – मैं तो जन्म–मरणरहित अनादि–अनन्त अनादि काल से हूँ।

प्रश्न 4 – जन्म–मरण तो होता है, क्या यह बात असत्य है ?

उत्तर – शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्रश्न 5 – तुम दुःखी क्यों हो ?

उत्तर – ज्ञान–दर्शनादि अभेद एक निज आत्मा को भूलकर, मोहरूपी शराब पीने के कारण, अनादि काल से एक–एक समय करके, अपनी मूर्खता से ही दुःखी हो रहा हूँ।

प्रश्न 6 – अपनी मूर्खता क्या है ?

उत्तर – परपदार्थों में अपनेपने की मान्यता, अर्थात् मिथ्यात्व ही अपनी मूर्खता है।

प्रश्न 7 – मिथ्यात्व कैसा पाप है ?

उत्तर – मिथ्यात्व, जुआ, माँसभक्षणादि आदि सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है।

प्रश्न 8 – मिथ्यात्व सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है, यह कहाँ आया है ?

उत्तर – श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 191 में लिखा है कि ‘जिनधर्म में तो यह आम्नाय है कि पहले बड़ा पाप छुड़ाकर, फिर छोटा पाप छुड़ाया है; इसलिए इस मिथ्यात्व को सप्त व्यसनादिक से भी बड़ा पाप जानकर पहले छुड़ाया है। इसलिए जो पाप के फल से डरते हैं; अपने आत्मा को दुःख समुद्र में डुबाना नहीं चाहते, वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोड़ें। सर्व प्रकार के मिथ्यात्वभाव को छोड़कर, सम्यग्दृष्टि होना योग्य है क्योंकि संसार का मूल, मिथ्यात्व है और मोक्ष का मूल, सम्यक्त्व है।

प्रश्न 9 – मिथ्यात्व कितने प्रकार का है ?

उत्तर – दो प्रकार का है। (1) अगृहीतमिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र, जो अनादि काल से एक–एक समय करके चला आ रहा है, और (2) गृहीतमिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र, जो विशेषरूप से मनुष्यजन्म पाने पर, कुदेव, कुगुरु, कुधर्म से समय–समय पर नया–नया ग्रहण किया जाता है।

प्रश्न 10 – अगृहीतमिथ्यादर्शन–ज्ञान चारित्र किसे कहते हैं और सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर – ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा के अलावा, अनन्त आत्माएँ, जिसमें चौबीस तीर्थङ्कर, देव, गुरु, स्त्री, पुत्रादि; तथा अनन्तानन्त पुद्गल, जिनमें – सोना

–चाँदी, मकान; दुकान, शरीर, मन, वाणी आदि नोकर्म; आठ कर्म; धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्यों में; चारों गतियों के शरीरों में; और शुभाशुभ विकारीभावों में – इन सबमें एकत्वबुद्धि अगृहीतमिथ्यादर्शन है। इन सबमें एकत्व का ज्ञान, अगृहीतमिथ्याज्ञान है। इन सब में एकत्वरूप आचरण, अगृहीत–मिथ्याचारित्र है। –इन सबसे भिन्नत्व जानकर निज आत्मा की श्रद्धा, सम्यग्दर्शन हैं। –इन सबसे भिन्नत्व जानकर, निज ज्ञानमयी आत्मा का ज्ञान, सम्यग्ज्ञान है। इन सबसे भिन्नत्व जानकर, निज आत्मा में आचरण–लीन होना, सम्यक्चारित्र है।

प्रश्न 11 – तुमने आज तक क्या किया?

उत्तर – परपदार्थों को अपना मानकर, मात्र मोह–राग–द्वेष किया।

प्रश्न 12 – अब सुखी होने के लिए क्या करें?

उत्तर – ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्त गुणों का पिण्ड जो स्वयं आत्मा है, उसकी पहिचान कर।

प्रश्न 13 – मैं अपनी पहिचान कैसे करूँ ?

उत्तर – मिथ्यादृष्टि के कार्यक्षेत्र की मर्यादा, विकारीभावों तक है; ज्ञानियों की मर्यादा, शुद्धभावों तक है, परन्तु परपदार्थों में ज्ञानी –अज्ञानी कुछ भी नहीं कर सकता है। ऐसा जानकर अपनी आत्मा का आश्रय ले तो स्वयं की पहिचान हो।

प्रश्न 14 – संसार और मोक्ष क्या है?

उत्तर – (1) आत्मा, अपने ज्ञाता–दृष्टा के उपयोग को, जब परपदार्थ की ओर लक्ष्य करके, पर में दृढ़ कर लेता है कि यह 'मैं', इसका नाम संसार है। (2) आत्मा, अपने ज्ञाता–दृष्टा के उपयोग

को, जब स्व की ओर लक्ष्य करके, स्व में दृढ़ कर लेता है कि यह 'मैं' इसका नाम मोक्ष है।

प्रश्न 15 – संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति के लिए क्या करें ?

उत्तर – अपनी आत्मा का आश्रय लिए बिना, संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है; इसलिए अपने निज ज्ञायकस्वभाव का आश्रय लें तो संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति हो।

पदार्थों को जानने का उपाय

प्रश्न 16 – किसी भी वस्तु को जानने के लिए क्या-क्या जानना आवश्यक है ?

उत्तर – उसका लक्षण जानना आवश्यक है।

प्रश्न 17 – लक्षण किसे कहते हैं ?

उत्तर – अनेक मिले हुए पदार्थों में से किसी एक पदार्थ को पृथक करनेवाले हेतु को लक्षण कहते हैं; जैसे–जीव का लक्षण, चैतन्य।

प्रश्न 18 – लक्ष्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिसका लक्षण किया जाए, उसे लक्ष्य कहते हैं; जैसे, जीव का लक्षण चैतन्य कहा, तो इसमें जीव, लक्ष्य है और चैतन्य, लक्षण है।

प्रश्न 19 – लक्षणाभास किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो लक्षण, सदोष हो, उसे लक्षणाभास कहते हैं।

प्रश्न 20 – लक्षण के कितने दोष हैं ?

उत्तर – तीन हैं। अव्याप्तिदोष, अतिव्याप्तिदोष, असम्भवदोष।

प्रश्न 21 – अव्याप्तिदोष किसे कहते हैं?

उत्तर – लक्ष्य के एक भाग में लक्षण का रहना (अर्थात्, थोड़े में पाया जाये), उसे अव्याप्तिदोष कहते हैं; जैसे–पशु का लक्षण, सींग।

प्रश्न 22 – अतिव्याप्तिदोष किसे कहते हैं?

उत्तर – लक्ष्य और अलक्ष्य में लक्षण का रहना (अर्थात्, ज्यादा में पाया जाये) उसे अतिव्याप्तिदोष कहते हैं; जैसे–गाय का लक्षण, सींग।

प्रश्न 23 – अलक्ष्य किसे कहते हैं?

उत्तर – लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य पदार्थों को अलक्ष्य कहते हैं।

प्रश्न 24 – असम्भवदोष किसे कहते हैं?

उत्तर – लक्ष्य में लक्षण की असम्भवता को (अर्थात्, पाया ही ना जाये), असम्भवदोष कहते हैं; जैसे–जीव का लक्षण, जड़।

प्रश्न 25 – सच्चे लक्षण की पहिचान क्या है?

उत्तर – जो लक्षण, लक्ष्य में तो सर्वत्र हो और अलक्ष्य में किसी भी स्थान पर न हो, यही सच्चे लक्षण की पहिचान है; जैसे–जीव का लक्षण, चैतन्य।

प्रश्न 26 – नय के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं (1) निश्चयनय, और (2) व्यवहारनय।

प्रश्न 27 – निश्चयनय किसे कहते हैं?

उत्तर – वस्तु के किसी असली (मूल) अंश को ग्रहण करनेवाले ज्ञान को निश्चयनय कहते हैं; जैसे–मिट्टी के घड़े को मिट्टी का घड़ा कहना।

प्रश्न 28 – व्यवहारनय किसे कहते हैं?

उत्तर – किसी निमित्त से एक पदार्थ को, दूसरे पदार्थरूप जाननेवाले ज्ञान को व्यवहारनय कहते हैं; जैसे–मिट्टी के घड़े को, घी रखने के निमित्त से घी का घड़ा कहना।

प्रश्न 29 – व्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं – सद्भूतव्यवहारनय और असद्भूत–व्यवहरारनय।

प्रश्न 30 – सद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो एक पदार्थ में गुण–गुणी को भेदरूप ग्रहण करे, उसे सद्भूतव्यवहारनय कहते हैं।

प्रश्न 31 – सद्भूतव्यवहारनय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं। उपचरितसद्भूतव्यवहारनय और अनुपचरित–सद्भूतव्यवहारनय।

प्रश्न 32 – उपचरितसद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो उपाधिसहित गुण–गुणी को भेदरूप से ग्रहण करे, उसे उपचरितसद्भूतव्यवहारनय कहते हैं; जैसे – संसारीजीव के मतिज्ञानादि पर्याय और नर–नारकादि पर्यायें।

प्रश्न 33 – अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो नय, निरुपाधिक गुण–गुणी को भेदरूप ग्रहण करे, उसे अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनय कहते हैं; जैसे–जीव के केवलज्ञान, केवलदर्शन।

प्रश्न 34 – असद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो मिले हुए भिन्न पदार्थों को अभेदरूप से कथन करे, उसे असद्भूतव्यवहारनय कहते हैं; जैसे – यह शरीर मेरा है।

प्रश्न 35 – असद्भूतव्यवहारनय कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं। उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय और अनुपचरित –असद्भूतव्यवहारनय।

प्रश्न 36 – उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – अत्यन्त भिन्न पदार्थों को जो अभेदरूप से ग्रहण करे, उसे उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय कहते हैं; जैसे – जीव के महल, घोड़ा, वस्त्रादि कहना।

प्रश्न 37 – अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो नय, संयोगसम्बन्ध से युक्त दो पदार्थों के सम्बन्ध को विषय बनावे; जैसे – जीव का शरीर, जीव का कर्म कहना।

प्रश्न 38 – यह चार प्रकार व्यवहार किसे होता है और किसे नहीं होता है ?

उत्तर – साधक छदमस्थ जीवों को लागू पड़ता है; मिथ्यादृष्टि और केवली को लागू नहीं पड़ता है।

प्रश्न 39 – उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – मेरा लड़का, मेरा गुरु , मेरा भगवान आदि अत्यन्त भिन्न परपदार्थों को अपना कहना, परन्तु मानना नहीं।

प्रश्न 40 – अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – आँख–नाक–कान–दन्त आदि नोकर्म व आठ कर्मों को अपना कहना, परन्तु मानना नहीं।

प्रश्न 41 – उपचरितसद्भूतव्यवहारनय को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – शुभाशुभविकारीभावों को अपना कहना, परन्तु मानना नहीं।

प्रश्न 42 – अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनय को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – शुद्धपर्याय को अपनी कहना, परन्तु त्रिकाली स्वभाव की तरह अपना नहीं मानना।

प्रश्न 43 – (1) मेरा सोने का हार है; (2) मेरे 32 दाँत हैं; (3) मैं पूजा का भाव करता हूँ; (4) मैं सम्यग्दृष्टि हूँ, आदि कथन किस-किस व्यवहारनय के हैं।

उत्तर – (1) उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय; (2) अनुपचरित-असद्भूतव्यवहारनय; (3) उपचरितसदभूतव्यवहारनय; (4) अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनय के हैं।

प्रश्न 44 – चार प्रकार का अध्यात्मव्यवहार किस प्रकार है ?

उत्तर – (1) उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय :— साधक ऐसा जानता है कि मेरी पर्याय में विकार होता है; उसमें जो व्यक्त राग, अर्थात् बुद्धिपूर्वक राग, प्रगट ख्याल में लिया जा सकता है, ऐसे राग को आत्मा का कहना। (2) अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय:- जिस समय बुद्धिपूर्वक राग है, उसी समय अपने ख्याल में न आ सके, ऐसा अबुद्धिपूर्वक राग भी है, उसे जानना। (3) उपचरितसद्भूत -व्यवहारनय :- 'ज्ञान, पर को जानता है' अथवा ज्ञान में राग, ज्ञात होने से 'राग का ज्ञान है' – ऐसा कहना। अथवा ज्ञातास्वभाव के भानपूर्वक ज्ञानी 'विकार को भी जानता है' – ऐसा कहना। (4) अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनयः – ज्ञान और आत्मा इत्यादि गुण-गुणी का भेद करना।

प्रश्न 45 – थोड़े में अध्यात्म के नयों का स्वरूप समझाइए ?

उत्तर – (1) बुद्धिपूर्वकराग को आत्मा का कहना, उपचरित-असद्भूतव्यवहारनय है। (2) उसी समय अबुद्धिपूर्वकराग भी

है, उसे आत्मा का कहना, अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय है। (3) बुद्धिपूर्वक-अबुद्धिपूर्वक दोनों प्रकार के राग का ज्ञान - ऐसा कहना, उपचरितसद्भूतव्यवहारनय है। (4) ज्ञान,सो आत्मा, अर्थात् ज्ञानवाला आत्मा, दर्शनवाला आत्मा, - ऐसा कहना अनुपचरित-सद्भूतव्यवहारनय है।

प्रश्न 46 - पाँचवें गुणस्थान की अपेक्षा चारों प्रकार के आध्यात्मिकव्यवहारनय किस प्रकार हैं?

उत्तर - (1) बारह अणुव्रतादि का राग, मेरी पर्याय में है, ऐसा जानना, उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय है; (2) बारह अणुव्रतादि के राग के समय, अबुद्धिपूर्वकराग भी है; उस राग को, मेरी पर्याय में है - ऐसा जानना, अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय है; (3) बुद्धिपूर्वक -अबुद्धिपूर्वक दोनों प्रकार के राग का ज्ञान - ऐसा कहना, परन्तु ऐसा मानना नहीं, उपचरितसद्भूतव्यवहारनय है। (4) ज्ञान तो ज्ञान का है, ऐसा जानना, अनुपचरितसद्भूतव्यवहारनय है।

प्रश्न 47 - प्रमाणज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर - प्रत्येक वस्तु, सामान्य-विशेषात्मक होती है; इसलिए वस्तु के सच्चे ज्ञान को प्रमाणज्ञान कहते हैं।

प्रश्न 48 - नय किसे कहते हैं?

उत्तर - प्रमाण द्वारा निश्चित हुई अनन्त धर्मात्मक वस्तु के एक-एक अङ्ग का ज्ञान मुख्यरूप से कराये, उसे नय कहते हैं। नय सापेक्षरूप है।

प्रश्न 49 - नय का तात्पर्य क्या है?

उत्तर - वस्तु अनन्त धर्मात्मक है। वस्तु में किसी धर्म की

मुख्यता करके, अविरोधरूप से साध्य पदार्थ को जानना, यह नय का तात्पर्य है।

प्रश्न 50 – जिसे कुछ भी पता नहीं है, वह क्या करे, तो संसार का अभाव होकर, मोक्ष की प्राप्ति हो ?

उत्तर – (1) विश्व क्या है ? (2) जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म –आकाश और काल; इन द्रव्यों की सब दोषों से रहित पहिचान; (3) गुण का स्वरूप; (4) पर्याय का स्वरूप; (5) अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व, प्रदेशत्व – इन सामान्यगुणों का रहस्य; (6) चार अभाव का रहस्य; (7) मिले–जुले प्रश्नोत्तर। — इस प्रकार जाने तो कल्याण का अवकाश है। इसलिए इस प्रथम भाग में इन सबका क्रम से प्रश्नोत्तर के रूप में वर्णन किया जाता है। जिसमें भव्य जीव इनको समझकर, संसार का अभाव कर, मोक्ष की प्राप्ति कर सके। ●●

2

विश्व : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1 – विश्व किसे कहते हैं ?

उत्तर – छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्रश्न 2 – विश्व के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – जगत, लोक, दुनिया, ब्रह्माण्ड, संसार, वर्ल्ड आदि विश्व के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 3 – विश्व में कितने द्रव्य हैं ?

उत्तर – विश्व में छह द्रव्य हैं।

प्रश्न 4 – हमें तो विश्व में बहुत से द्रव्य दिखते हैं, आप छह ही क्यों कहते हो ?

उत्तर – जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; संख्या अपेक्षा अनन्तानन्त हैं।

प्रश्न 5 – जाति एवं संख्या अपेक्षा छह द्रव्य कौन-कौन से हैं ?*

उत्तर – जाति अपेक्षा – जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल। संख्या अपेक्षा-जीवद्रव्य, अनन्त; पुद्गलद्रव्य, अनन्तानन्त; धर्म-अधर्म-आकाशद्रव्य, एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात, कालद्रव्य हैं।

---

* छहों द्रव्यों का स्वरूप एवं इनके परिज्ञान से होनेवाले लाभ का वर्णन 'द्रव्य' नामक पाठ में दिया गया है।

प्रश्न 6 – जीवद्रव्य कितने हैं और कहाँ रहते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य अनन्त हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुए हैं।

प्रश्न 7 – पुद्गलद्रव्य कितने हैं और कहाँ रहते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य से अनन्तगुणें अधिक, पुद्गलद्रव्य हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे पड़े हैं।

प्रश्न 8 – धर्म, अधर्म, द्रव्य कितने-कितने हैं और कहाँ रहते हैं ?

उत्तर – धर्म और अधर्मद्रव्य एक-एक हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त हैं।

प्रश्न 9 – आकाशद्रव्य कितने हैं और कहाँ रहते हैं ?

उत्तर – आकाशद्रव्य एक है और वह लोकाकाश तथा अलोकाकाशरूप में व्याप्त है।

प्रश्न 10 – कालद्रव्य कितने हैं और कहाँ पर रहते हैं ?

उत्तर – लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं; वे लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नों की भाँति जड़े हुए हैं।

प्रश्न 11 – विश्व में छह जाति के द्रव्य हैं, इसे जानने से हमें क्या लाभ हैं ?

उत्तर – हम केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते हैं।

प्रश्न 12 – विश्व में छह जाति के द्रव्यों को जानने से हम केवली भगवान के लघुनन्दन कैसे बन जाते हैं ?

उत्तर – जैसे, हमारी तिजोरी में छह रुपये हैं, हमारे ज्ञान में भी छह रुपये हैं और हमारे खाते में भी छह रुपये लिखे हैं। जब तीनों

स्थान पर बराबर ही हो, तो हिसाब ठीक है; उसी प्रकार केवली भगवान की दिव्यध्वनिरूप तिजोरी में जाति अपेक्षा छह द्रव्य आए, शास्त्रों में भी जाति अपेक्षा छह द्रव्य आये और हमारे ज्ञान में भी जाति-अपेक्षा छह द्रव्य आए। इस प्रकार जितना केवली भगवान जानते हैं, उतना ही हमने जाना; इस अपेक्षा हम केवली भगवान के सच्चे लघुनन्दन बन गये।

प्रश्न 13 – जितना केवलीभगवान जानते हैं, उतना ही हम भी जानते हैं, तो उनके और हमारे जानने में क्या अन्तर रहा ?

उत्तर – जानने में कोई अन्तर नहीं; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का ही भेद है। ऐसा समयसार, गाथा 143 की टीका-भावार्थ में, अष्टसहस्री में तथा रहस्यपूर्ण चिट्ठी में भी आया है।

प्रश्न 14 – जितना केवली जानते हैं, उतना ही साधक ज्ञानी जानता है, मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है – यह बात शास्त्रों में कहाँ-कहाँ आयी है ?

उत्तर – (1) अष्टसहस्री, दशम परिच्छेद 105 में आया है कि 'श्रुतज्ञान और केवलज्ञान सर्व तत्त्वों का प्रकाशन करनेवाले हैं। मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है।' (2) मोक्षमार्गप्रकाशक, आठवाँ अधिकार पृष्ठ 270 में आया है कि 'प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष का ही भेद है, भासित होने में विरुद्धता नहीं है' (3) आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी की रहस्यपूर्ण चिट्ठी में आया है कि 'जिस प्रकार केवली युगपत् प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष-परोक्ष का विशेष जानना' (4) श्री समयसार, गाथा 143 को टीका तथा भावार्थ में आया है कि 'श्रुतज्ञानी भी केवली की भाँति वीतराग जैसे ही होते हैं – ऐसा जानना' (5) श्री समयसार, कलश 112 में आया है कि 'जब तक सम्यग्दृष्टि छद्मस्थ है, तब तक

केवलज्ञान के साथ शुद्धनय के बल से परोक्ष क्रीड़ा करता है, केवलज्ञान होने पर साक्षात् क्रीड़ा करता है।'

प्रश्न 15 – जब केवली के ज्ञान मे विश्व के सब द्रव्यों के सर्व गुण-पर्याय आते हैं और विश्व के द्रव्यों का वैसा ही होता है, हो रहा है, और होता रहेगा – इसको जानने से हमें क्या लाभ है।

उत्तर – अनादि से जो पर में कर्ता-भोक्ता की मिथ्याबुद्धि थी, उस का अभाव हो जाता है। मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके क्रम से मोक्ष की ओर गमन हो जाता है।

प्रश्न 16 – केवली भगवान सर्व द्रव्यों को भूत-भविष्य-वर्तमान पर्यायों को एक समय में युगपत् जानते हैं – ऐसा शास्त्रों में कहाँ-कहाँ पर आया है?

उत्तर – चारों अनुयोगो के शास्त्रों में आया है। (1) सर्व द्रव्य पर्यायेषु केवलस्य ***(मोक्षशास्त्र, अध्याय 1 सूत्र 29)*** (2) प्रवचनसार, गाथा 37, 38, 47, 48, 200 में आया है। (3) धवला, पुस्तक 13 पृष्ठ 346 से 353 तक में आया है। (4) छहढ़ाला में — 'सकल द्रव्य के गुण अनन्त, परजाय अनन्ता, जानै एकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता'। (5) रत्नकरण्डश्रावकाचार में श्लोक 137 के भावार्थ में लिखा है 'जिस जीव के, जिस देश में, जिस काल में, जिस विधान से जन्म-मरण, लाभ-अलाभ, सुख-दुःख होना, जिनेन्द्र भगवान ने दिव्यज्ञान करि जाना है, तिस जीव के, तिस देश में, तिस काल में तिस विधान करके, जन्म-मरण, लाभ नियमतै होय ही। ताहि दूर करने कूँ कोऊ इन्द्र अहमिन्द्र जिनेन्द्र समर्थ नहीं हैं। ऐसे समस्त द्रव्यानि की समस्त पर्यायनकूँ जानै है, श्रद्धान करे है, सो सम्यग्दृष्टि

श्रावक प्रथमपद धारक जानना।' यही बात श्री कार्तिकेयानुप्रेक्षा, गाथा 321 से 323 में भी कही गयी है।

प्रश्न 17 – जब केवली के ज्ञान में जैसा आया है, वैसा ही प्रत्येक द्रव्य का स्वतन्त्र परिणमन हो रहा है, तब यह अज्ञानी जीव क्यों नहीं मानता?

उत्तर – अज्ञानी जीव को चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए नहीं मानता है।

प्रश्न 18 – जब केवली और साधक ज्ञानी सब जानते हैं तो पण्डित कहे जानेवाले ऐसा क्यों कहते हैं – (1) केवली भगवान भूत और वर्तमान कालवर्ती पर्यायों को ही जानते हैं और भविष्यत् पर्यायों को वे हों, तब जानते हैं। (2) सर्वज्ञ भगवान अपेक्षितधर्मों को नहीं जानते हैं। (3) केवली भगवान भूत-भविष्यत पर्यायों को सामान्यरूप से जानते हैं, किन्तु विशेषरूप से नहीं जानते हैं। (4) केवली भगवान भविष्यत पर्यायों को समग्ररूप से जानते हैं, भिन्न-भिन्नरूप से नहीं जानते हैं। (5) ज्ञान सिर्फ ज्ञान को ही जानता है। (6) सर्वज्ञ के ज्ञान में पदार्थ झलकते हैं, किन्तु भूतकाल तथा भविष्यत् काल की पर्यायें स्पष्टरूप से नहीं झलकतीं; आदि खोटी मान्यताएँ क्यों पायी जाती हैं?

उत्तर – विद्वान कहलानेवाले पण्डितों की मिथ्या मान्यता यह बताती है कि उन्हें शीघ्र निगोद में जाने की तैयारी है क्योंकि– आदिनाथ भगवान से भरतजी ने पूछा था – भगवान भविष्य में आपके समान तीर्थङ्कर होनेवाला कोई जीव यहाँ है तो भगवान ने कहा था, यह मारीच अन्तिम 24वाँ तीर्थङ्कर महावीर होगा। तो

विचारो! समवसरण में कितने जीव थे भगवान को सभी जीवों का भूत-भविष्य वर्तमान पर्यायों का ज्ञान था। खोटी मान्यतावालों ने यह नहीं माना; इसलिए निगोद के पात्र हैं। (2) भगवान नेमिनाथ से द्वारिका का भविष्य पूछा था। उन्होंने कहा था कि 12 वर्ष बाद आग लगेगी। मिथ्या मान्यतावाला ने यह भी नहीं माना; इसलिए निगोद के पात्र हैं। (3) दिगम्बरशास्त्र पंचम काल के आचार्यों के लिखे हुए हैं। उनमें जीवों के दस-दस भवों का वर्णन आता है, उसे भी नहीं माना; इसलिए निगोद के पात्र हैं। (4) भरतजी ने कैलाशपर्वत पर भूत-भविष्य-वर्तमान चौबीसी की स्थापना की थी। वह कहाँ से आयी? अज्ञानियों को जरा भी विचार नहीं आता हैं। (5) उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी आदि छह-छह काल होते हैं और चौथे काल में चौबीस तीर्थङ्कर होंगे, आदि न मानने से उल्टी मान्यतावाले कोई भी हों, सब निगोद के पात्र हैं।

प्रश्न 19 - सर्वज्ञदेव के विषय में श्री भगवान कार्तिकेय -स्वामी ने धर्मअनुप्रेक्षा भावना में क्या बताया है?

उत्तर - वास्तव में स्वामी कार्तिकेय आचार्य ने गाथा 321-322-323 में जैनधर्म का गूढ़ रहस्य खोल दिया है। गाथा 321 तथा 322 में कहा है कि 'जिस जीव को, जिस देश में, जिस काल में, जिस विधि से जन्म-मरण, सुख-दुःख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाने हैं; उसी प्रकार वे सब नियम से होंगे। सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है; उसी प्रकार उस जीव के, उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है। उसके निवारण करने के लिए इन्द्र या जिनेन्द्र तीर्थङ्करदेव कोई भी समर्थ नहीं हैं। तथा गाथा 323 में कहा है। इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों (जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल) तथा उन

द्रव्यों की समस्त पर्यायों को सर्वज्ञ के आगमानुसार जानता है – श्रद्धा करता है, वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नहीं करता, सन्देह करता है, वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है,वह प्रगटरूप में मिथ्यादृष्टि है।'

प्रश्न 20 – विश्व को जानने से और क्या लाभ रहा?

उत्तर – जैसे हमारी जेब में छह रुपए हैं, इसके बदले कोई यह कहे कि यह तो एक रुपया है, तो आप क्या कहेंगे? यह झूठा है; उसी प्रकार विश्व में एकमात्र भगवान आत्मा है; अन्य कुछ नहीं, ऐसी मान्यतावाला एक मत है; और हमने जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने, तो वह मत, मिथ्या है – ऐसा ज्ञान हो गया, यह लाभ रहा।

प्रश्न 21 – विश्व को जानने से और क्या लाभ रहा?

उत्तर – जैसे हमारी जेब में छह रुपए हैं, उसके बदले कोई पाँच रुपये कहे, तो आप क्या कहेंगे? वह झूठा है; उसी प्रकार हमने जाति अपेक्षा छह द्रव्य जाने, इसके बदले एक मत ऐसा है कि वह कालद्रव्य को छोड़कर, पाँच ही द्रव्य हैं–ऐसा मानता है तो हमें पता चला यह भी मिथ्या है – यह लाभ रहा।

प्रश्न 22 – विश्व को जानने से और क्या लाभ रहा?

उत्तर – जैसे — हमारे पास छह रुपए हैं, उसे कोई कम कहे या ज्यादा कहे तो हमें पता चल जाता है, यह सब झूठे हैं; उसी प्रकार हमने विश्व में छह जाति के द्रव्य जाने; कोई कम, ज्यादा कहता है तो वह सब झूठे हैं; एकमात्र हम ही सच्चे हैं – यह लाभ रहा।

प्रश्न 23 – जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहा है, क्या वे सभी द्रव्य आपस में मिले हुए हैं?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य पृथक्–पृथक् रहकर अपना–अपना कार्य

करते हैं। वे आपस में मिले हुए नहीं हैं। देखो पूजा में भी कहा है।

'जड़–चेतन की सब परिणति प्रभु, अपने–अपने में होती है।
अनुकूल कहें, प्रतिकूल कहें, यह झूठी मनकी वृत्ति है॥'

(देव–शास्त्र–गुरु पूजा)

प्रश्न 24 – प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना कार्य करता है – क्या श्री समयसारजी में कहीं आया है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 3 में आता है– 'लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं। ....वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहनेवाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं –स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते। अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदा काल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते। पररूप परिणमन न करने से अपनी अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती; इसलिए वो टंकोत्कीर्ण की भाँति स्थिर रहते हैं, और समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य – दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं, अर्थात् टिकाये रखते हैं।'

प्रश्न 25 – प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना ही स्वतन्त्र कार्य करता है – क्या ऐसा आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने भी कहा है ?

उत्तर – हाँ, मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52 में लिखा है 'अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न, अपनी–अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है; कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती और पर को परिणमाने का भाव, मिथ्यादर्शन है।'

प्रश्न 26 – विश्व को जानने का छठवाँ लाभ क्या है?

उत्तर – क्रमबद्ध, क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि।

प्रश्न 27 – विश्व को जानने से क्रमबद्ध, क्रमनियमित-पर्याय की सिद्धि कैसे हो गयी?

उत्तर – जिनेन्द्रकथित विश्व व्यवस्था को जानने से क्रमबद्ध, क्रमनियमितपर्याय की सिद्धि हो जाती है।

प्रश्न 28 – जिनेन्द्रकथित विश्व व्यवस्था क्या है?

उत्तर – जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक, लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद और गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में होता रहेगा। यह जिनेन्द्रकथित विश्व व्यवस्था है। यही बात प्रवचनसार गाथा 86 में बतायी है।

प्रश्न 29 – क्रमबद्धपर्याय के विषय में भैया भगवतीदास ने क्या बताया है?

उत्तर – जो – जो देखी वीतराग ने, सो-सो होसी वीरा रे।
बिन देख्यो होसी नहिं कबहूँ, काहे होत अधीरा रे॥
समयो एक बढ़ै नहिं घटसी, जो सुख-दुःख की पीरा रे।
तू क्यों सोच करै मन कूड़ो, हो वज्र ज्यों हीरा रे॥

प्रश्न 30 – क्रमबद्धपर्याय के विषय में भैया बुधजनजी ने क्या कहा है?

उत्तर –

जाकिर जैसे जाहि समय में, जो हो तब जा द्वार।
सो बनि है टरि है कछु नाहिं, करि लीनौं निरधार॥
हमको कछु भय ना रे, जान लियो संसार।

प्रश्न 31 – क्रमबद्धपर्याय के विषय में मोक्षपाहुड़, गाथा 86 के भावार्थ में क्या बताया है ?

उत्तर – सम्यग्दृष्टि के ऐसा विचार होय है – जो वस्तु का स्वरूप सर्वज्ञ ने जैसा जाना है, तैसा निरन्तर परिणमै है, सो ही होय है। इष्ट –अनिष्ट मान दुःखी–सुखी होना निष्फल है। ऐसे विचार तैं दुःख मिटै है, यह प्रत्यक्ष अनुभवगोचर है।

प्रश्न 32 – रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्लोक 137 में पण्डित सदासुख दासजी ने क्रमबद्धपर्याय के विषय में क्या कहा है ?

उत्तर – बहुरि सम्यग्दृष्टि के ऐसा निश्चय है – जिस जीव के जिस देश में, जिस काल में, जिस विधान करके, जन्म–मरण, लाभ या अलाभ, सुख–दुःख होना जिनेन्द्रभगवान दिव्य–ज्ञानकरि जान्या है, तिस जीव के तिस काल में, तिस विधान करके जन्म–मरण, लाभ या अलाभ नियमतै होय ही, ताहि दूर करने कूँ कोऊ इन्द्र–अहमिन्द्र–जिनेन्द्र समर्थ नाहीं हैं।

प्रश्न 33 – क्रमबद्धपर्याय के विषय में प्रवचनसार, गाथा 200 की टीका में क्या कहा है ?

उत्तर – 'क्या ज्ञायकभाव का समस्त ज्ञेयों को जानने का स्वभाव होने से क्रमशः प्रवर्तमान समूहवाले, अगाध स्वभाव और गम्भीर ऐसे समस्त द्रव्यमात्र को – मानो वे द्रव्य, ज्ञायक में उत्कीर्ण हो गए हों, चित्रित हो गए हों, भीतर घुस गए हों, कीलित हो गए हों, डूब गए हों, समा गए हों, प्रतिबिम्बित हो गए हों – इस प्रकार एक क्षण में ही जो (शुद्धात्मा) प्रत्यक्ष करता है' – ऐसा कहा है।

प्रश्न 34 – क्रमबद्धपर्याय के विषय में प्रवचनसार, गाथा 99 से 102 तक का सार क्या है?

उत्तर – 'जन्म-क्षण' और 'स्व-अवसर' की बात आती है, वहाँ आकाश के प्रदेशों का उदाहरण देकर कालक्रम समझाया है। जैसे – जो प्रदेश जहाँ-जहाँ है, वह वहीं-वहीं रहता है, उसमें आगे पीछे होना सम्भव नहीं; उसी प्रकार जो-जो पर्याय, जिस-जिस काल में होनी हैं, वे-वे पर्यायें उसी-उसी काल में होंगी, उनका आगे-पीछे होना सम्भव नहीं है। देखिए इसमें क्रमबद्ध- क्रमनियमित की बात स्पष्टयता से आ जाती है।

प्रश्न 35 – केवली अपने को निश्चय से जानते हैं और पर को व्यवहार से जानते हैं, तब किसी का यह कहना है कि व्यवहार झूठा है – सो वे जानते ही नहीं; क्या यह ठीक है?

उत्तर – ऐसे महानुभाव को जिनधर्म के रहस्य का पता नहीं है क्योंकि केवली भगवान स्वयं को तन्मय होकर जानते हैं परन्तु पर को जानते तो हैं, पर उनमें वे तन्मय होकर नहीं जानते – इस कारण उनका पर का जानना, व्यवहार कहा है।

प्रश्न 36 – समयसार, गाथा 2 क्रमबद्धपर्याय के विषय में क्या बताया है?

उत्तर – जीव-पदार्थ कैसा है? 'क्रमरूप और अक्रमरूप बर्तते हुए अनेक भाव जिसका स्वभाव होने से जिसने गुण-पर्यायें अङ्गीकार की हैं' पर्याय, क्रमवर्ती और गुण, सहवर्ती होता है। यहाँ पर जीव की क्रमबद्धपर्याय की बात का ज्ञान कराया है।

प्रश्न 37 – समयसार, गाथा 62वीं में क्रमबद्धपर्याय के विषय क्या बताया है?

उत्तर – 'वर्णादिक भाव अनुक्रम से आविर्भाव और तिरोभाव को प्रापत होती हुयी, ऐसी उन–उन व्यक्तियों (पर्यायों) द्वारा पुद्गल द्रव्य के साथ रहते हुए पुद्गल का वर्णादिक के साथ तादात्म्य प्रगट करते हैं।' यहाँ पर 'अनुक्रम से आविर्भाव और तिरोभाव' प्राप्त करना होकर अजीव की क्रमबद्धपर्याय की बात का ज्ञान कराया है।

प्रश्न 38 – समयसार, कर्ता–कर्म की 76–77–78 गाथा में क्रमबद्धपर्याय के विषय में क्या बताया है?

उत्तर – प्राप्य, विकार्य और निर्वृत्य, ऐसे तीन प्रकार से कार्य की बात करके क्रमबद्धपर्याय का ज्ञान कराया है। एक ही कार्य को तीन नाम से सम्बोधन करके क्रमबद्धपना सिद्ध किया है।

प्रश्न 39 – क्रमबद्ध–क्रमनियमितपर्याय की सिद्धि से क्या लाभ रहा?

उत्तर – केवली के समान ज्ञाता–दृष्टा बुद्धि प्रगट हो गयी।

प्रश्न 40 – विश्व व्यवस्था के विषय में आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने क्या कहा है?

उत्तर – 'जैसा पदार्थों का स्वरूप है, वैसा ही श्रद्धान हो जावे तो सर्व दुःख मिट जावे।' *(श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52)*

प्रश्न 41 – मोक्षमार्गप्रकाशक में पदार्थों का स्वरूप कैसा बताया है?

उत्तर – 'अनादि–निधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न अपनी–अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई पदार्थ किसी का परिणमाया परिणमता नहीं है।'

प्रश्न 42 – अज्ञानी क्या करता है?

उत्तर – अज्ञानी परद्रव्यों को अपनी इच्छानुसार परिणमाना

चाहता है। यह कोई उपाय नहीं, यह तो मिथ्यादर्शन है। अज्ञानी, पदार्थों को अन्यथा मानकर अन्यथा परिणमाना चाहता है। इससे जीव स्वयं दु:खी होता है।'

प्रश्न 43 – भ्रम दूर करने का सच्चा उपाय क्या है ?

उत्तर – पदार्थों को यथार्थ मानना और ये पदार्थ मेरे परिणमाने से परिणमेंगे नहीं ऐसा मानना, यह ही दु:ख दूर करने का उपाय है। भ्रमजनित दु:ख का उपाय भ्रम दूर करना ही है। भ्रम दूर होने से सम्यक् श्रद्धा होती है। यह ही सच्चा उपाय जानना चाहिए।

प्रश्न 44 – क्या प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना स्वतन्त्र परिणमन करता है, ऐसा कहीं श्री समयसार में भी आया है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 3 में आया है कि 'वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहनेवाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं तथापि वे परस्पर एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करते हैं।'

प्रश्न 45 – विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वतन्त्र परिणमन जानने-मानने से क्या लाभ प्रगट होना चाहिए ?

उत्तर – क्रमबद्ध क्रमनियमितपर्याय की सिद्धि हो गयी।

प्रश्न 46 – 'प्रत्येक द्रव्य स्वतन्त्ररूप से परिणमन करता है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होता और दूसरे को परिणम ने का भाव, मिथ्यादर्शन है'– तो कर्म चक्कर कटाता है; ज्ञानावरणीय, ज्ञान को रोकता है; अघातियाकर्म, अरहन्तभगवान को मोक्ष में नहीं जाने देते; आँख, कान, नाक से ज्ञान होता है; गुरु से ज्ञान होता है – आदि कथन शास्त्रों में क्यों आते हैं ?

उत्तर – जिनवाणी में दो नय से निरूपण किया है। जहाँ निश्चयनय से कथन किया है, वह तो यथार्थ है और जहाँ व्यवहार का कथन है, वह 'घी के घड़े' के समान जानना। व्यवहार का अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादिकी अपेक्षा उपचार किया है' – ऐसा जानना। इस प्रकार जानने का नाम ही दोनों नयों का ग्रहण है।

प्रश्न 47 – विश्व को जानने से सातवाँ लाभ क्या रहा ?

उत्तर – 'ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध का सच्चा ज्ञान' – विश्व को जानने से यह सातवाँ लाभ हुआ।

प्रश्न 48 – विश्व को जानने से ज्ञेय-ज्ञायक के सच्चा ज्ञान का लाभ कैसे हुआ ?

उत्तर – शास्त्रों में आता है '**लोक्यन्ते दृश्यन्ते जीवादि पदार्थों तत्रः स लोकः**' अर्थात्, जहाँ जीवादि पदार्थ दिखायी देते हैं, वह लोक हैं।

प्रश्न 49 – जैसा छह द्रव्यों का परिणमन होता है, वैसा ही होगा; उसमें जरा भी हेर-फेर नहीं हो सकता, ऐसा भगवान ने कहा है और ऐसा ही वस्तु स्वरूप है, तब अज्ञानी क्यों नहीं मानता ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए अज्ञानी नहीं मानता है। (देखो कार्तिकेय अनुप्रेक्षा, श्लोक 323 इस पाठ के प्रश्न 23 के उत्तर में देखो)

प्रश्न 50 – छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहा है, तो क्या वे सब आपस में मिले हुए हैं ?

उत्तर – आपस में बिल्कुल नहीं मिले हुए है, क्योंकि हमने छह

द्रव्यों के पिण्ड को विश्व नहीं कहा है परन्तु छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहा है। इसलिए प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना कार्य करता है, किसी का किसी दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 51 – विश्व के इन छह द्रव्यों का परस्पर में कैसा सम्बन्ध है।

उत्तर – एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है।

प्रश्न 52 – सम्बन्ध कितने प्रकार का है ?

उत्तर – तीन प्रकार का है। (1) एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध, (2) अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध, और (3) नित्यतादात्म्यसम्बन्ध।

प्रश्न 53 – एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध किसका, किसके साथ है ?

उत्तर – जाति अपेक्षा छह द्रव्यों का एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है। और मुझ आत्मा का संसार अवस्था में आठ कर्मों के साथ एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है।

प्रश्न 54 – स्त्री, पुत्र, धन, दुकान, मकान, सोना, चाँदी का इन तीनों सम्बन्धों में से कौनसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – इन पदार्थों का तो किसी भी प्रकार का कोई भी सम्बन्ध नहीं है। जैसे- वृक्ष पर पक्षी आ आकर बैठ जाते हैं; कोई एक घण्टे में, कोई दो घण्टे में उड़ जाता है; उसी प्रकार स्त्री-पुत्र-मकान आदि अत्यन्त भिन्न परपदार्थों का मुझ आत्मा से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 55 – जब स्त्री-पुत्र आदि अत्यन्त भिन्न पदार्थों का आत्मा से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है तो यह मूर्ख जीव क्यों पागल हो रहा है ?

उत्तर – परपदार्थों से इसके साथ किसी भी प्रकार का सम्बन्ध न होने पर भी अपने आप का पता न होने से, अपनी मूर्खता से ही मिथ्या सम्बन्ध मानकर पागल बन रहा है।

प्रश्न 56 – यह पागलपन कैसे मिटे ?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह जाति के द्रव्य हैं; एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से कर्त्ता–भोक्ता आदि किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; प्रत्येक द्रव्य, क्रमबद्ध–क्रमनियिमित कायम रहता हुआ, स्वयं बदलता रहता है। मैं उनमें कुछ भी हेर–फेर नहीं कर सकता हूँ। – ऐसा जानकर, अपने त्रिकाली भगवान का आश्रय ले तो पागलपन मिटे।

प्रश्न 57 – जो अपनी मूर्खता है, उसका आत्मा के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – शुभाशुभविकारीभावों के साथ, अर्थात् अपनी मूर्खता का आत्मा के साथ अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध है।

प्रश्न 58 – जो जीव, अनित्यादात्म्यसम्बन्धरूप दया, दान, पूजा, व्रत आदि भावों से मोक्षमार्ग माने तो क्या होगा ?

उत्तर – जैसे – करेला कडुवा, ऊपर से नीम चढ़ा; उसी प्रकार दिगम्बरधर्म धारण करने पर भी इन विकारीभावों से मोक्षमार्ग माने, तो मिथ्यात्वादि की पुष्टि होकर निगोद में चला जायेगा और शुभभाव को पुण्यबन्ध का कारण माने तो उसका अभाव करके, मोक्षमार्गी बनकर मोक्ष प्राप्त कर लेगा।

प्रश्न 59 – जिसका आत्मा से कभी भी अभाव न हो, क्या ऐसा कोई सम्बन्ध है ?

उत्तर – आत्मा और ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्त–गुणों का

आत्मा के साथ नित्यतादात्म्यसम्बन्ध है; ऐसा जानकर निज आत्मा का आश्रय ले तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 60 – तीनों प्रकार के सम्बन्ध को जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – (1) जो अत्यन्त भिन्न परपदार्थ हैं, उनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। (2) यद्यपि कर्मों का एकक्षेत्रावगाही-सम्बन्ध है, तथापि अत्यन्ताभाव है। (3) शुभाशुभविकारीभावों के साथ अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध है; इनके आश्रय से जीव को दुःख होता है। (4) नित्यतादात्म्यसम्बन्ध, जो आत्मा का अपने गुणों के साथ है उसका आश्रय ले तो मोक्षमार्ग की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 61 – ऐसी वस्तु का नाम बताओ, जिसका आत्मा से कभी अभाव न हो और उसका फल क्या है?

उत्तर – गुणों का कभी अभाव नहीं होता है – उन गुणों के अभेदरूप अपनी आत्मा का आश्रय ले तो निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 62 – जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को एक नाम से क्या कहते हैं?

उत्तर – विश्व कहते हैं।

प्रश्न 63 – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं, यह कथन कैसा है?

उत्तर – यह व्यवहारनय का कथन है।

प्रश्न 64 – इसका निश्चयनय का कथन क्या है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने स्वचतुष्टय में है, अर्थात्

अपने-अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव में है, यह निश्चयनय का कथन है।

प्रश्न 65 – विश्व को ऐसा कौन जानता है और कौन नहीं जानता ?

उत्तर – ज्ञानी जानते हैं; अज्ञानी नहीं जानते हैं।

प्रश्न 66 – विश्व को जाननेवालों को किस-किस नाम से कहा जाता है ?

उत्तर – (1) जिन, (2) जिनवर, (3) जिनवरवृषभ कहा जाता है।

प्रश्न 67 – जिन किसे कहते हैं ?

उत्तर – मिथ्यात्व और रागदि को जीतनेवाले चौथे-पाँचवें-छठवें गुणस्थानवर्ती ज्ञानियों को जिन कहते हैं।

प्रश्न 68 – जिनवर किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो 'जिनों' में श्रेष्ठ होते हैं, वे जिनवर हैं। श्री गणधरदेव भी जिनवर हैं।

प्रश्न 69 – जिनवरवृषभ किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो जिनवरों में भी श्रेष्ठ होते हैं, उन्हें जिनवरवृषभ कहते हैं। प्रत्येक तीर्थङ्कर भगवान को भाव अपेक्षा से जिनवरवृषभ कहते हैं।

प्रश्न 70 – विश्व को जानने से कितने सम्बन्धों का ज्ञान हो जाता ?

उत्तर – तीन प्रकार के सम्बन्धों का ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 71 – मुझ आत्मा का विश्व के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – व्यवहार से विश्व, ज्ञेय और मैं, ज्ञायक; इस प्रकार ज्ञेय –ज्ञायकसम्बन्ध है – ऐसा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 72 – छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं, इसको जानने से इस पाठ में कितने लाभ बताये हैं, वह थोड़े में बताओ ?

उत्तर – (1) केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते हैं। (2) कोई मात्र एक द्रव्य कहे, वह झूठा है। (3) कोई मात्र पाँच द्रव्य कहे, वह झूठा है। (4) छह द्रव्यों से कम या ज्यादा कहे, वह झूठा है। (5) पर में कर्ता–भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव, सम्यक्त्व की प्राप्ति। (6) क्रमबद्ध, क्रमनियमितपर्याय की सिद्धि। (7)ज्ञेय –ज्ञायकसम्बन्ध का पता लग जाना। इस प्रकार जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं, इसको जानने में थोड़े में ये सात लाभ बताये हैं। ●●

3

द्रव्य : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1 – द्रव्य किसे कहते हैं?

उत्तर – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 2 – गुणों के समूह को क्या कहते हैं?

उत्तर – द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 3 – क्या गुणों के समूह को विश्व कहते हैं?

उत्तर – नहीं, गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, विश्व नहीं कहते।

प्रश्न 4 – गुणों का समूह कौन है?

उत्तर – द्रव्य है।

प्रश्न 5 – गुणों का समूह कौन-सा द्रव्य है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य, गुणों का समूह है।

प्रश्न 6 – प्रत्येक द्रव्य, अर्थात् क्या-क्या?

उत्तर – (1) जीव, अनन्त; (2) पुद्गल, अनन्तानन्त; (3) धर्म, अधर्म, आकाश एक-एक; (4) काल लोकप्रमाण असंख्यात; ये सब द्रव्य, गुणों के समूह हैं।

प्रश्न 7 – संसारी लोग, द्रव्य किसे कहते हैं?

उत्तर – वे रुपया, सोना, चाँदी आदि को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 8 – क्या रुपया सोना-चाँदी आदि द्रव्य नहीं हैं ?

उत्तर – रुपया, सोना, चाँदी आदि में जितने परमाणु हैं, वे प्रत्येक परमाणु, गुणों का समूह द्रव्य है।

प्रश्न 9 – भगवान ने द्रव्य किसे कहा है ?

उत्तर – गुणों के समूह को द्रव्य कहा है।

प्रश्न 10 – द्रव्य के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – वस्तु, सत्, सत्ता, तत्त्व, अन्वय, अर्थ, पदार्थ आदि द्रव्य के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 11 – क्या मैं भी गुणों का समूह हूँ ?

उत्तर – हाँ; मैं भी गुणों का समूह हूँ, क्योंकि मैं एक जीवद्रव्य हूँ।

प्रश्न 12 – क्या प्रत्येक सिद्धभगवान भी गुणों के समूह हैं ?

उत्तर – हाँ, प्रत्येक सिद्धभगवान भी गुणों के समूह हैं, क्योंकि वे पृथक्-पृथक् जीवद्रव्य हैं।

प्रश्न 13 – क्या एक श्वास में अठारह बार जन्म-मरण करनेवाले निगोदिया जीव भी गुणों के समूह हैं ?

उत्तर – प्रत्येक निगोदिया जीव भी गुणों के समूह है, क्योंकि वे भी द्रव्य हैं।

प्रश्न 14 – क्या मक्खी, जूँ, पेड़ का जीव, मछली, आदि तिर्यंच भी गुणों के समूह हैं ?

उत्तर – अरे भाई! निगोद से लगाकर दो इन्द्रिय जीव, तीन इन्द्रिय जीव, चार इन्द्रिय जीव, पाँच इन्द्रिय असैनी और चारों गतियों के सैनी जीव तथा पञ्च परमेष्टी, सब गुणाों के समूह हैं, क्योंकि ये सब जीवद्रव्य हैं।

प्रश्न 15 – क्या दो इन्द्रियवाले जीवों में और सिद्ध भगवान में समान गुण हैं ?

उत्तर – हाँ भाई! चाहे कोई भी जीव हो – चाहे निगोद का हो, दो इन्द्रियोंवाला हो या सिद्ध हो, उन सब में गुण समान ही हैं। गुणों की संख्या में जरा भी हेर–फेर नहीं है।

प्रश्न 16 – यह कहाँ लिखा है कि निगोदिया जीवों में और सिद्ध जीवों में गुण, समान हैं ?

उत्तर – (1) श्री नियमसारजी, गाथा 47–48 में लिखा है कि–

हैं सिद्ध जैसे जीव, त्यों भवलीन संसारी वही।
गुण आठ से जो हैं अलंकृत जन्म–मरण जरा नहीं॥
बिनदेह अविनाशी, अतीन्द्रिय, शुद्ध निर्मल सिद्ध ज्यों।
लोकाग्र में जैसे विराजे, जीव हैं भवलीन त्यों॥

(1) इन दो गाथाओं में शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से संसारीजीवों में और मुक्तजीवों में कोई अन्तर नहीं है। इसलिए अपने स्वभाव का आश्रय लेकर सिद्धदशा प्रकट करना पात्र जीव का लक्षण है। (2) श्री द्रव्यसंग्रह, गाथा 13 में 'सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया' शुद्धनय से सभी जीव, वास्तव में शुद्ध हैं। यहाँ पर भी शुद्धपारिणारिकभाव जो द्रव्यरूप है, वह अविनाशी है; इसलिए वही आश्रय करनेयोग्य है। इसी के आश्रय से धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है; पर और विकार के आश्रय से नहीं।

प्रश्न 17 – सिद्ध जीवों में और संसारी जीवों में गुणों की अपेक्षा भेद नहीं है – क्या ऐसा कहीं बुधजनजी ने तथा द्यानतरायजी ने कहा है ?

उत्तर – (1) बुधजनजी ने कहा है कि 'जो निगोद में सो ही

मुझमें, सो ही मोक्ष मंझार। निश्चय भेद कछू भी नाहीं, भेद गिनै संसार॥' (2) द्यानतरायजी ने कहा है कि 'जैसा सिद्धक्षेत्र में राजत, तैसा घट में जानाजी।'

प्रश्न 18 – क्या निगोद से लेकर चारों गतियों के जीवों में और सिद्धभगवान में गुण, समान हैं?

उत्तर – हाँ, सब जीवों में समान गुण हैं, किसी में भी कम ज्यादा गुण नहीं है।

प्रश्न 19 – क्या एक परमाणु में भी समान गुण हैं और वह भी गुणों का समूह है?

उत्तर – हाँ, परमाणु में भी सिद्धभगवान जितने गुण हैं और परमाणु भी गुणों का समूह है, क्योंकि परमाणु भी द्रव्य है।

प्रश्न 20 – क्या धर्म, अधर्म आकाश और कालद्रव्य भी गुणों के समूह हैं और इन सबमें सिद्ध समान गुण हैं?

उत्तर – हाँ, धर्मादि, सब द्रव्य हैं। जो-जो द्रव्य होता है, वह सब गुणों का समूह होता है और उनमें समान गुण ही होते हैं, कम-ज्यादा नहीं होते हैं; इसलिए धर्म, अधर्म, आकाश, काल भी द्रव्य हैं और गुणों के समूह हैं। सिद्धभगवान जितने ही प्रत्येक द्रव्य में गुण हैं।

प्रश्न 21 – कालद्रव्य तो संख्या में असंख्यात हैं और प्रत्येक कालाणु एक-प्रदेशी है। क्या प्रत्येक कालाणु, गुणों का समूह और कालाणु में भी सिद्धभगवान जितने गुण हैं?

उत्तर – प्रत्येक कालाणु, गुणों का समूह है और सिद्धभगवान में जितने गुण है, उतने ही कालाणु में भी हैं, क्योंकि कालाणु भी द्रव्य है।

प्रश्न 22 – धर्मादि द्रव्य तो अचेतन हैं और जीव, चेतन है – इनके गुण, एक समान कैसे हो सकते हैं?

उत्तर – हमने संख्या अपेक्षा से गुणों को समान कहा है।

प्रश्न 23 – एक द्रव्य में कितने गुण हैं ?

उत्तर – अनन्त गुण हैं।

प्रश्न 24 – 'गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं' – इसको जानने से पहला लाभ क्या है ?

उत्तर – अपने निज भगवान की महिमा आ जाती है।

प्रश्न 25 – द्रव्य को जानने से अपने निज भगवान की महिमा कैसे आवे ?

उत्तर – (1) जीव, अनन्त हैं। (2) जीव से अनन्तगुणा अधिक, पुद्गलद्रव्य हैं। (3) पुद्गलद्रव्य से अनन्तगुणा अधिक, तीन काल के समय हैं। (4) तीन काल के समयों से अनन्तगुणा अधिक, आकाश के प्रदेश हैं। (5) आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुणा अधिक, एक द्रव्य में गुण हैं। (6) एक द्रव्य के गुणों से अनन्तगुणा अधिक, सब द्रव्यों के गुण हैं। (7) सब द्रव्यों के गुणों से अनन्तगुणा अधिक, सब द्रव्यों की पर्यायें हैं। (8) सब द्रव्यों के गुणों की पर्यायों से अनन्तगुणा अधिक, अविभाग प्रतिच्छेद हैं। इस प्रकार विश्व में आठ नम्बर तक ही ज्ञेय हैं। (9) मुझ आत्मा में केवलज्ञान की शक्ति है। मेरे केवलज्ञान की शक्ति में आठ नम्बर तक विश्व एक समय में ज्ञेयरूप होता है। ऐसे–ऐसे अनन्त विश्व हों, तो भी मेरे केवलज्ञान की पर्याय में ज्ञेय हो सकते हैं। एक समय की पर्याय की कितनी ताकत है और केवलज्ञान जैसी अनन्त पर्यायें हैं। (10) केवलज्ञान मेरे ज्ञानगुण में से आता है, तब मेरे ज्ञानगुण की ताकत का क्या कहना! (11) ज्ञान जैसे अनन्त गुण, मेरे में है और मैं उन अनन्त गुणों का स्वामी हूँ – ऐसा जाने तो अपनी महिमा आ जाती है।

प्रश्न 26 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं – इसको जानने से दूसरा लाभ क्या है ?

उत्तर – नौ प्रकार के समूह से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न 27 – नौ प्रकार का समूह क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) अत्यन्त भिन्न परपदार्थों का समूह; (2) आँख–नाक–कान आदिरूप औदारिकशरीर का समूह; (3) तैजस, कार्माण–शरीर का समूह; (4) भाषा–मन का समूह; (5) शुभाशुभविकारीभावों का समूह; (6) अपूर्ण–पूर्ण शुद्धपर्यायों के पक्ष समूह; (7) भेदनय के पक्ष का समूह; (8) अभेदनय के पक्ष का समूह; (9) भेदाभेदनय के पक्ष का समूह।

प्रश्न 28 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं – इसको जानने से तीसरा लाभ क्या है ?

उत्तर – सम्यग्दर्शन से लेकर सिद्धदशा तक की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है, यह पता चल जाता है।

प्रश्न 29 – सिद्धभगवान में और हमारे में किस अपेक्षा अन्तर नहीं है ?

उत्तर – गुणों की अपेक्षा अन्तर नहीं है।

प्रश्न 30 – जब सिद्धभगवान में और हमारे गुणों में अन्तर नहीं है तो अन्तर किसमें है ?

उत्तर – मात्र पर्याय में अन्तर है।

प्रश्न 31 – सिद्ध बनने के लिए पर्याय अन्तर को कैसे दूर करें ?

उत्तर – जैसा सिद्ध भगवान ने किया, वैसा ही करें तो पर्याय का अन्तर दूर होवे।

प्रश्न 32 – सिद्ध बनने से पूर्व सिद्ध आत्मा ने पर्याय में विकार को दूर करने के लिए क्या किया ?

उत्तर – अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभाव का श्रद्धानादि किया तो पर्याय में से विकार का अभाव हुआ और अन्तर मिट गया।

प्रश्न 33 – हम पर्याय के अन्तर को दूर करने के लिए क्या करें ?

उत्तर – हम अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभाव का श्रद्धानादि करें तो पर्याय का अन्तर दूर होकर, हम भी पर्याय में सिद्ध जैसे हो जावें।

प्रश्न 34 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं – इसे दृष्टान्त देकर समझाईये ?

उत्तर – जैसे, हमारे घर में छह आदमी हैं। प्रत्येक के पास अटूट–अटूट धन है। किसी के पास किसी भी प्रकार धन की कमी या अधिकता नहीं है, समान ही है; उसी प्रकार जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य अनन्तानन्त गुणों का पिण्ड है। किसी के पास गुण, किसी भी प्रकार कम या ज्यादा नहीं हैं, समान ही हैं।

प्रश्न 35 – प्रत्येक द्रव्य के पास अनन्तानन्त गुण हैं। इसको जानने से हमें क्या लाभ हैं ?

उत्तर – जब सबके पास अनन्तानन्त गुण हैं; किसी पर भी कम या ज्यादा नहीं है तो पर की ओर देखना नहीं रहा, मात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भगवान की ओर ही देखना रहा।

प्रश्न 36 – भूतार्थ के आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति होती है– ऐसा कहीं श्री समयसार में बताया है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 11 में कहा है कि 'व्यवहारनय अभूतार्थ और शुद्धनय भूतार्थ है'– ऐसा ऋषीश्वरों ने बताया है। जो जीव, भूतार्थ का, अर्थात् अपने अनन्त गुणों के अभेद त्रिकाली द्रव्य का आश्रय लेता है, वह जीव निश्चय से (वास्तव में) सम्यग्दृष्टि है।

प्रश्न 37 – श्री मोक्षमार्गप्रकाशक में स्वद्रव्य किसे कहा है और क्यों कहा है?

उत्तर – (1) अमूर्तिक प्रदेशों का पुञ्ज (क्षेत्र); (2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारक (भाव); (3) अनादि-निधन (काल); (4) वस्तु आप है (द्रव्य)। ऐसे त्रिकाली द्रव्य के आश्रय से ही धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता होती है; इसलिए त्रिकाली द्रव्य को स्व कहा है।

प्रश्न 38 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, इसको स्पष्ट करने के लिए सुदृष्टितरंगिणी में क्या दृष्टान्त दिया है?

उत्तर – जैसे – एक गुफा में छह मुनि बैठे हैं। एक ध्यान में लीन हैं; दूसरे आहार के निमित्त जा रहे हैं; तीसरे को शेर खा रहा है; चौथे सामायिक कर रहे हैं; उसी प्रकार लोकाकाशरूपी गुफा में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। वह सब अपने-अपने कार्य में लीन हैं। तब पर की ओर देखना नहीं रहा; मात्र अपनी ओर देखना रहा।

प्रश्न 39 – जब सब द्रव्यों के पास अनन्त-अनन्त गुण हैं और स्वयं भगवान हैं, तब अज्ञानी जीव, पर की ओर क्यों देखता है?

उत्तर – (1) अज्ञानी नहीं देखेगा तो क्या ज्ञानी देखेगा? अरे भाई! अज्ञानी का स्वभाव ही ऐसा होता है। (2) अज्ञानी को जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा का पता न होने से, वह पर की ओर देखता है।

प्रश्न 40 – जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा क्या है ?

उत्तर – अनादि–निधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न, अपनी–अपनी मर्यादा लिए परिणमें हैं। कोई किसी का परिणमाया, परिणमता नहीं – यह जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा है। *(श्री मोक्षमार्गप्रकाशक पृष्ठ 52)*

प्रश्न 41 – तत्त्वार्थसूत्र में भगवान की क्या आज्ञा है ?

उत्तर – सत् द्रव्य लक्षणम्॥ उत्पाद व्यय–ध्रौव्य युक्तं सत्॥

प्रश्न 42 – जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा पालने के लिए क्या करें तो धर्म की शुरुआत हो ?

उत्तर – मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा जानकर उसका श्रद्धान, ज्ञान, आचरण करे तो धर्म की शुरुआत हो।

प्रश्न 43 – चारों गतियों का अभाव करने के लिए क्या करें तो पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति हो ?

उत्तर – मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा जानकर उसमें परिपूर्ण लीनता करे तो पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्रश्न 44 – द्रव्यलिंगी मुनि को धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं हुई ?

उत्तर – द्रव्यलिंगी मुनि ने अपने को अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान न मानकर, परपदार्थों का पिण्ड माना –जाना; इसलिए धर्म की प्राप्ति नहीं हुई।

प्रश्न 45 – अज्ञानी को आज तक धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं हुई ?

उत्तर – (1) शरीर, रूपी; आत्मा, अरूपी (2) शरीर,जड़;

आत्मा, चेतन, (3) शरीर, संयोगी; आत्मा, असंयोगी, (4) शरीर, विनाशी; आत्मा, अविनाशी, (5) शरीर, अन्धा; आत्मा, देखनेवाला (6) शरीर, इन्द्रियग्राह्य; आत्मा, अतिन्द्रियग्राह्य (7) शरीर, बाह्य परतत्त्व; आत्मा अन्तरङ्ग स्वतत्त्व – आदि सब में एक प्रकार की श्रद्धा, एक प्रकार का ज्ञान, और एक प्रकार आचरण होने से अज्ञानी को आज तक धर्म की प्राप्ति नहीं हुई और यदि आत्मा और शरीर को भिन्न जाने तो धर्म की प्राप्ति हो जाए।

प्रश्न 46 – अज्ञानी अपने को किसका अभेद पिण्ड माने तो मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यक्त्व की प्राप्ति हो?

उत्तर – अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भूतार्थ भगवान अपने को माने तो मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यक्त्व की प्राप्ति हो।

प्रश्न 47 – भूतकाल में जो मोक्ष गए हैं, वह किस उपाय से गए हैं?

उत्तर – अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही भूत काल में मोक्ष को प्राप्त हुए हैं।

प्रश्न 48 – विदेहक्षेत्र से जो निरन्तर मोक्ष जा रहे हैं, वे किस उपाय से जा रहे हैं?

उत्तर – अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही विदेहक्षेत्र से निरन्तर मोक्ष जा रहे हैं।

प्रश्न 49 – भविष्य में जो जीव, मोक्ष जावेंगे, वे किस उपाय से जावेंगे?

उत्तर – अपने अनन्त गुणों को अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी

भगवान आत्मा का श्रद्धानादि करने से ही भविष्य में मोक्ष जावेंगे।

प्रश्न 50 – क्या तीन काल, तीन लोक में मोक्ष का एक ही उपाय है ?

उत्तर – हाँ भाई! तीन काल, तीन लोक में मोक्ष का एक ही उपाय है, क्योंकि तीन काल, तीन लोक में परमार्थ का एक ही पन्थ है; दूसरा नहीं।

प्रश्न 51 – तीन काल और तीन लोक में मोक्षका एक ही उपाय है – ऐसा कहीं शास्त्रों में आया है ?

उत्तर – चारों अनुयोगों में आया है। (1) 'सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्ग' (तत्त्वार्थसूत्र, पहला अध्याय, प्रथम सूत्र); (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 82-199-242 में लिखा है कि 'निर्वाण का अन्य कोई मार्ग नहीं है' (3) श्री नियमसार, गाथा 2, 3, 90 तथा कलश 121 में आया है 'दर्शन-ज्ञान-चारित्रस्वरूप, नियम से निर्वाण का कारण है;' (4) श्री समयसार, गाथा 156 में 'मात्र परमार्थ, मोक्ष हेतु ही एक द्रव्य के स्वभाववाला है; इसलिए जीव के स्वभाव के द्वारा ही ज्ञान का भवन बनता है'; (5) श्रीरत्नकरण्डश्रावकाचार, गाथा 2-3 में 'धर्म के ईश्वर, भगवान, तीर्थङ्कर, परमदेव, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को धर्म कहे हैं'; (6) छहढ़ाला, तीसरी ढ़ाल में 'सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरण – इन तीनों की एकता ही मोक्षमार्ग है।' – ऐसा कहा है।

प्रश्न 52 – कैसा करने से ही मुक्त होगा ?

उत्तर – 'मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भूतार्थस्वभावी भगवान आत्मा हूँ' – ऐसा श्रद्धानादि करने से ही मुक्त होगा।

प्रश्न 53 – क्या करने से कभी भी मुक्त नहीं होगा ?

उत्तर – नौ प्रकार के पक्षों में पड़ने से कभी भी मुक्त न होगा।

प्रश्न 54 – क्या जिनवर के कहे हुए व्रत, समिति को पालने मात्र से मुक्ति नहीं होगी?

उत्तर – कभी भी नहीं होगी, क्योंकि श्री समयसार, गाथा 273 में लिखा है कि जिनवरकथित व्रत, समिति को पालन करता हुआ भी, मिथ्यादृष्टि–अभव्य अज्ञानी है तथा गाथा 154 में उसे नपुंसक कहा है।

प्रश्न 55 – क्या ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व के अभ्यास से भी मुक्ति नहीं होगी?

उत्तर – कभी भी नहीं होगी, क्योंकि श्री कुन्दकुन्द भगवान ने श्री समयसार, गाथा 274 में लिखा है – आत्म–अनुभव हुए बिना शास्त्र पढ़ना गुणकारी नहीं है। तथा श्री समयसार, गाथा 317 में जैसे–साँप को दूध पिलावे तो जहर बढ़ता है; उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि के विशेषज्ञान की चतुराई, निगोद का कारण है।

प्रश्न 56 – सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें?

उत्तर – अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने द्रव्य का आश्रय करे तो सम्यग्दर्शन की प्राप्त हो।

प्रश्न 57 – किसका आश्रय करें तो कभी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति न हो?

उत्तर – दर्शनमोहनीय के क्षयादिक का आश्रय करे तथा देव –गुरु–शास्त्र और परद्रव्यों का आश्रय करे तो कभी भी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति न हो।

प्रश्न 58 – जो जीव, सम्यग्दर्शन के लिए मात्र देव–गुरु–शास्त्र का ही आश्रय मानते हैं, उसका फल क्या होगा?

उत्तर – चारों गतियों में घूमते हुए क्रम से निगोद में चले जाएँगे। कहा है 'जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय।'

प्रश्न 59 – क्या मात्र देव-गुरु-शास्त्र का ही आश्रय कार्यकारी नहीं है ?

उत्तर – संसार परिभ्रमण के लिए कार्यकारी है।

प्रश्न 60 – सम्यग्ज्ञान प्राप्त करने के लिए किसका आश्रय करें ?

उत्तर – एकमात्र अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायक द्रव्य का आश्रय करने से ही सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 61 – गुरु और शास्त्र की ओर देखें तो क्या सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी ?

उत्तर – सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति, देव-गुरु-शास्त्र की ओर देखने से कभी भी नहीं होगी, क्योंकि जिसमें जो चीज हो उसी में से वह आती है; जिसमें न हो उसमें से कैसे आ सकती है ? कभी भी नहीं।

प्रश्न 62 – सम्यग्ज्ञान के लिए ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व का अभ्यास करें तो उसकी प्राप्ति नहीं होगी ?

उत्तर – कभी भी नहीं होगी, क्योंकि श्रीसमयसार, गाथा 274 में कहा है कि 'मोक्ष की श्रद्धा विहीन-अभव्य जीव, शास्त्रों पढ़े; पर ज्ञान की श्रद्धा रहित को, पठन ये नहि गुण करै'॥ गाथा 317 में लिखा है कि 'सद्रीत पढ़कर शास्त्र भी प्रकृति अभव्य नहीं तजे; ज्यों दूध गुड़ पीता हुआ भी, सर्प नाहिं निर्विष बने'॥ जब तक जीव को आत्मज्ञान नहीं है; सब शास्त्रों का पठन मिथ्याज्ञान है, जरा भी कार्यकारी नहीं है।

प्रश्न 63 – किसका आश्रय करें, तो सम्यक्चारित्र की प्राप्ति हो ?

उत्तर – अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायक भगवान का आश्रय करने से ही सम्यक्चारित्र की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 64 – क्या शरीर की क्रिया से सम्यक्चारित्र की प्राप्ति नहीं होती?

उत्तर – शरीर की क्रिया मैं करता हूँ – इस मान्यता से तो मिथ्यात्व का महान पाप होता है; सम्यक्चारित्र की तो बात ही नहीं है।

प्रश्न 65 – क्या जिनेन्द्र भगवान के कहे हुए समिति, गुप्ति के शुभभावों से चारित्र की प्राप्ति होती है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि जिनेन्द्र भगवान ने समिति, गुप्ति के भाव को तो पुण्यबन्ध का कारण कहा है; चारित्र की प्राप्ति नहीं कही है।

प्रश्न 66 – जो जीव, शुभभावों से चारित्र मानता है, उसे श्री समयसार में क्या-क्या कहा है?

उत्तर – श्री कुन्दकुन्द भगवान ने श्री समयसार, गाथा 273 में कहा है – जिनवर प्ररूपित व्रत, समिति, गुप्ति अरु तप शील को; करता हुआ भी अभव्य जीव, अज्ञानी मिथ्यादृष्टि है। श्री समयसार, गाथा 145 में लिखा है कि 'है कर्म अशुभ कुशील, अरु जानो सुशील शुभकर्म को। किस रीत होय सुशील, जो संसार में दाखिल करें' तथा 154 में लिखा है कि 'परमार्थ बाहिर जीवगण, जाने न हेतु मोक्ष का। अज्ञान से वे पुण्य इच्छे, हेतु जो संसार का'।

जैसे, लहसुन खाने से कस्तूरी की डकार नहीं आती; उसी प्रकार शुभभावों से कभी भी धर्म की प्राप्ति नहीं होती है; एकमात्र अपने स्वद्रव्य स्वभाव के आश्रय से ही चारित्र की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 67 – मिथ्यात्व का अभाव कैसे होता है ?

उत्तर – एकमात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान स्वद्रव्य का आश्रय लेने से ही मिथ्यात्व का अभाव होता है।

प्रश्न 68 – मिथ्यात्व का अभाव करने के लिए आत्मा का तो आश्रय न लें परन्तु व्रत करें; बहुत शास्त्र पढ़ें; तपश्चरण करें तो क्या होगा ?

उत्तर – कभी भी मिथ्यात्व का अभाव नहीं होगा, बल्कि मिथ्यात्व दृढ़ होकर निगोद में चला जाएगा। आचार्यकल्प पण्डित टोडरमली ने कहा है कि 'तत्त्वविचार रहित (अर्थात्, आत्मा का आश्रय लिए बिना) देवादि की प्रतीति करे; बहुत शास्त्रों का अभ्यास करें; व्रतादि पाले; तपश्चरणादि करे; उसको तो सम्यक्त्व होने का अधिकार नहीं,' (अर्थात्, मिथ्यात्व के अभाव होने का अवकाश नहीं है।) और तत्त्वविचारवाला, अर्थात् आत्मा का आश्रय लेनेवाले को व्रतादि के बिना भी सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। *(श्री मोक्षमार्गप्रकाशक पृष्ठ 260)*

प्रश्न 69 – श्रेणी माँडने के लिए किसका आश्रय करे ?

उत्तर – एकमात्र अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायकस्वभाव के आश्रय से ही श्रेणी की प्राप्ति होती है; किसी द्रव्यकर्म, नोकर्म, भावकर्म तथा परलक्ष्यी ज्ञान से कभी भी श्रेणी की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 70 – अरहन्त भगवान को किसका आश्रय है ?

उत्तर – एकमात्र अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवानरूप अपने द्रव्य का ही आश्रय है।

प्रश्न 71 – पात्र जीव, सामायिक के लिए किसका आश्रय करता है ?

उत्तर – एकमात्र अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने ज्ञायकस्वभाव का आश्रय करता है।

प्रश्न 72 – अपात्र जीव, सामायिक के लिए किसका आश्रय करता है और उसका फल क्या है?

उत्तर – शरीर की क्रिया का और पाठ बोलने आदि का आश्रय करता है; उसका फल अनन्त संसार है। छहढ़ाला में कहा है कि 'मुनिव्रत धार अनन्तबार ग्रीवक उपजायो। पै निज आतमज्ञान बिना, सुख लेश न पायो'

प्रश्न 73 – किसका आश्रय करें तो शान्ति की प्राप्ति हो?

उत्तर – एकमात्र अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज ज्ञायकस्वभाव का ही आश्रय करने से शान्ति की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 74 – अज्ञानी, शान्ति के लिए किस का आश्रय मानता है और उसका फल क्या है?

उत्तर – नौ प्रकार के पक्षों से शान्ति मानता है और उसका फल चारों गतियों का भ्रमण है।

प्रश्न 75 – जबकि 'अनन्त गुणों का अभेद ज्ञायक पिण्ड अपने भगवान आत्मा के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यकचारित्र, श्रेणी, अरहन्त और सिद्धदशा की प्राप्ति होती है; विकार के आश्रय से नहीं तो फिर (1) भगवान की पूजा करो; (2) दर्शन करो; (3) दान करो; (4) यात्रा करो; (5) अणुव्रत पालो; (6) महाव्रत पालो आदि का उपदेश क्यों दिया है'।

उत्तर – पात्र भव्य जीव ने अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा का परिपूर्ण आश्रय लेने का प्रयत्न किया,

परन्तु परिपूर्ण आश्रय न ले सका, अर्थात् मोक्ष नहीं हुआ; मोक्षमार्ग की प्राप्ति हुई – तो मोक्षमार्ग में चारित्रगुण की एक समय की पर्याय में दो अंश पड़ जाते हैं। उसमें जो शुद्धि अंश है, वह सच्चा मोक्षमार्ग है और जो भूमिकानुसार राग है, वह ज्ञानियों को हेयबुद्धि से होता है। उसका ज्ञान कराने के लिए भगवान की पूजा करो, यात्रा करो आदि का उपदेश है।

प्रश्न 76 – चौथे गुणस्थान में सम्यग्दृष्टि की दृष्टि कहाँ रहती है और अनन्तानुबन्धी क्रोधादि के अभावरूप स्वरूपाचरणचारित्र के साथ कैसा राग होता है, कैसा नहीं होता है ?

उत्तर – चौथे गुणस्थानी की दृष्टि, एकमात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड पर रहती है। जैसे –महावीरस्वामी के जीव को सिंह की पर्याय में सम्यग्दर्शन हुआ तो माँस उसका भोजन होने पर भी, माँस का विकल्प भी नहीं आया; उसी प्रकार जिसको प्रत्यक्ष मद्य, माँस मधु कहते हैं; उसको खाने का विकल्प भी नहीं होता है। गर्दन कटती हो तो कटे, परन्तु कुगुरु, कुदेव, कुशास्त्र को नमने आदि का विकल्प नहीं आवेगा; सच्चे देव–गुरु–शास्त्र को ही नमने का विकल्प हेयबुद्धि से होता है। याद रहे करता नहीं, परन्तु होता है।

प्रश्न 77 – सच्ची श्रावकदशा होने पर कैसा राग होता है ?

उत्तर – दो चौकड़ी कषाय के अभावरूप देशचारित्रदशा होने पर बारह अणुव्रतादि का विकल्प, हेयबुद्धि से होता है।

प्रश्न 78 – मुनिदशा होने पर कैसा राग होता है ?

उत्तर – तीन चौकड़ी कषाय के अभावरूप शुद्धि तो निरन्तर बर्तती है, परन्तु छठवें गुणस्थान में अट्ठाईस मूलगुण का विकल्प, हेयबुद्धि से होता है।

प्रश्न 79 – ज्ञानी को जो भूमिकानुसार राग होता है – क्या ज्ञानी उसे अपना मानता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; वह तो ज्ञान का ज्ञेय है, हेय है।

प्रश्न 80 – सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का निमित्त मिला, ऐसे समय में भी भूतार्थस्वभाव का आश्रय न ले, तो क्या होगा?

उत्तर – श्री मोक्षमार्गप्रकाशक में लिखा है कि 'मनुष्यभव होने पर मोक्षमार्ग में प्रवर्तन न करें तो किञ्चित विशुद्धता पाकर, फिर तीव्र उदय आने पर निगोदादि पर्याय को प्राप्त करेगा।' छहढ़ाला में भी कहा है कि 'जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय। तहतें चय थावर तन धरैं, यों परिवर्तन पूरे करें।'

प्रश्न 81 – आप कहते हो कि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायकस्वभाव की एकाग्रता से ही धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है –तो क्या हम पूजा-पाठ-व्रत-नियम आदि न करें?

उत्तर – पहले गुणस्थान में जिज्ञासु जीवों को शास्त्राभ्यास, अध्ययन-मनन, ज्ञानी पुरुषों का धर्मोपदेश-श्रवण, निरन्तर उनका समागम, देवदर्शन, पूजा, भक्ति, दान आदि शुभभाव होते हैं, किन्तु सच्चे व्रत-तप आदि नहीं होते हैं, क्योंकि सच्चे व्रतादि तो सम्यग्दर्शन के बाद पाँचवें गुणस्थान में शुभभावरूप से होते हैं।

प्रश्न 82 – व्रत, दान, अणुव्रतादि से धर्म नहीं होता है – ऐसा कथन सुनने या पढ़ने से लोगों को अत्यन्त हानि होना सम्भव है। इस समय लोग कुछ व्रत, प्रत्याख्यानादिक क्रियाएँ करते हैं, उन्हें छोड़ देंगे, क्या उनका कहना ठीक है?

उत्तर – (1) बिल्कुल गलत है क्योंकि क्या सत्य से कभी भी

किसी जीव की हानि हो सकती है? कभी नहीं। इसलिए सत् का श्रवण या अध्ययन करने से जीवों को कभी हानि नहीं हो सकती है। (2) व्रत करनेवाले ज्ञानी हैं या अज्ञानी? यह जानना आवश्यक है। यदि अज्ञानी हैं तो उन्हें सच्चे व्रतादि होते ही नहीं; इसलिए उन्हें छोड़ने का प्रश्न उपस्थित ही नहीं होता है। यदि व्रत करनेवाले ज्ञानी हैं, तो वह व्रत छोड़कर अशुभ में जावेंगे, यह बात असम्भव है। (3) परन्तु ऐसा होता है कि ज्ञानी, शुभभावों को क्रमशः दूरकर शुद्धभाव की वृद्धि करें; वह लाभ का कारण है, हानि का नहीं। इसलिए सत्य कथन से किसी को भी हानि हो ही नहीं सकती है।

प्रश्न 83 – मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा हूँ, जब तक ऐसा अनुभव न हो, तब तक तो व्रत-दानादि करना चाहिए ना?

उत्तर – जैसे-किसी को अमेरिका जाना है और किसी कारण से अमेरिका न जाना बने तो क्या अमेरिका के बदले रूस जाया जावे? नहीं, बल्कि अमेरिका जाने का प्रयत्न करना; उसी प्रकार जब तक अपने ज्ञायकस्वभाव का अनुभव न हो तो क्या व्रतादि में लग जाना चाहिए? नहीं; बल्कि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायकस्वभाव के अनुभव का अभ्यास करना। आत्म-अनुभव के अभ्यास को छोड़कर व्रतादि में लग जाना, यह तो अमेरिका के बदले रूस जाने के समान है। इसलिए पात्र जीवों को प्रथम अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपने भगवान का अनुभव करना ही कार्यकारी है।

प्रश्न 84 – मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा हूँ – ऐसा अनुभव हुए बिना, बारह अणुव्रतादि कार्यकारी हैं या नहीं?

उत्तर – चारों गतियों में घूमने के लिए कार्यकारी हैं; श्रावकपने के लिए कार्यकारी नहीं हैं।

प्रश्न 85 – मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ, ऐसा अनुभव हुए बिना अट्ठाईस मूलगुण का पालनादि, मुनिपने के लिए कार्यकारी है या नहीं?

उत्तर – कार्यकारी नहीं; बल्कि अनर्थकारी है, क्योंकि 'श्री मोक्षमार्गप्रकाशक' में उसे महाव्रतादि पालते हुए, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, पापी कहा है।

प्रश्न 86 – अपना अनुभव हुए बिना अणुव्रत महाव्रतादि कार्यकारी नहीं, ऐसा कहीं समयसार, प्रवचनसार में कहा है?

उत्तर – (1) श्री प्रवचनसार, गाथा 271 में द्रव्यलिङ्गी मुनि को में 'संसारतत्त्व' कहा है। (2) श्री समयसार में, अपने आप का अनुभव हुए बिना नपुसंक, कुशील, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, पापी आदि कहा है।

प्रश्न 87 – अपनी आत्मा का आश्रय लिए बिना, शुभभाव कार्यकारी नहीं है – ऐसा कहीं श्री समयसार, कलश टीका में लिखा है?

उत्तर – कलश 142 में लिखा है कि ..... विशुद्ध शुभोपयोगरूप परिणाम, जैनोक्त सूत्र का अध्ययन, जीवादि द्रव्यों के स्वरूप का बारम्बार स्मरण, पञ्च परमेष्टी की भक्ति इत्यादि हैं जो अनेक क्रिया भेद, उनके द्वारा बहुत घटाटोप करते हैं तो करो, तथापि शुद्धस्वरूप की प्राप्ति होगी, सो तो शुद्धज्ञान द्वारा होगी। अज्ञानी को, परम्परा आगे मोक्ष का कारण होगी, ऐसा भ्रम उत्पन्न होता है, सो झूठा है। अहिंसा महाव्रत का पालन, महा परीषहों का सहना, बहुत काल पर्यन्त मर

के चूरा होते हुए बहुत कष्ट करते हैं तो करो, तथापि ऐसा करते हुए कर्म क्षय तो नहीं होता। कलश 143 में कहा कि कि 'शुभ-अशुभरूप है जितनी क्रिया, उनका ममत्व छोड़कर, एक शुद्धस्वरूप-अनुभव कारण है।'

प्रश्न 88 – सम्यग्दर्शनरहित शुभरागरूप व्यवहारक्रिया है उसके विषय में पण्डित बुधजनजी ने छहढ़ाला में क्या कहा है?

उत्तर – 'सम्यक् सहज स्वभाव आपका अनुभव करना या बिन जप-तप व्यर्थ कष्ट के माही पड़ना। कोटि बात की बात अरे! बुधजन उर धरना! मच वच तन शुचि होय, ग्रहो जिन वृष का शरना; अर्थात् सम्यग्दर्शनादि रहित व्यवहारश्रद्धा, जीव ने अनन्त बार की हैं, वह सब मिथ्या है। मिथ्यात्वपूर्वक जीव जो भाव करता है, वे सब दुःखदायक ही हैं। करोड़ों बात का यही सार है कि आत्मा के सहज स्वभाव का अनुभव करना; उसके बिना सब (दया, दान, पूजा, अणुव्रत, महाव्रतादि) व्यर्थ हैं। जैसे – एक के बिना बिन्दियों की कीमत नहीं होती है; उसी प्रकार सम्यग्दर्शन के बिना, व्रतादि की शुभक्रियाओं पर उपचार भी सम्भव नहीं है।'

प्रश्न 89 – अपना अनुभव हुए बिना महाव्रतादि कार्यकारी नहीं हैं – ऐसा कहीं दौलतराम जी ने छहढ़ाला में लिखा है?

उत्तर – सब जगह लिखा है – (1) पहली ढ़ाल में 'जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय। तहतैं चय थावर तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै॥' यह जीव वैमानिक देवों में भी उत्पन्न हुआ किन्तु वहाँ उसने सम्यग्दर्शन के बिना दुःख उठाए और वहाँ से भी मरकर पृथ्वीकायिक आदि स्थावरों के शरीर धारण किए। (2) तीसरी ढ़ाल में लिखा है – सम्यग्दर्शन प्राप्त किए बिना,

चाहे जितना ज्ञान का उघाड़ हो, वह सब मिथ्याज्ञान है और सम्यग्दर्शन प्राप्त किए बिना, कितने ही व्रत तपादि हों, वह सब मिथ्याचारित्र है। (3) चौथी ढ़ाल में 'मुनिव्रत धार अनन्तवार ग्रीवक उपजायौ। पै निज आतम ज्ञान बिन सुख लेश न पायौ॥ अर्थात्, यह जीव, मुनि के महाव्रतों को धारण करके उनके प्रभाव से नववें ग्रैवेयक तक के विमानों में अनन्त बार उत्पन्न हुआ, परन्तु आत्मा के भेदविज्ञान बिना लेशमात्र सुख प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए (4) लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ। तोरि सकल जग दन्द फन्द, नित आतम ध्याओ॥'

प्रश्न 90 – क्या यही बात श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार में भी कही है?

उत्तर – दूसरे श्लोक के भावार्थ में लिखा है कि संसार में 'धर्म' ऐसा तो सब लोग कहते हैं, किन्तु धर्म शब्द का अर्थ तो ऐसा है जो नारक, तिर्यंचादि गतियों में परिभ्रमणरूप दुःखों से आत्मा को छुड़ाकर, उत्तम आत्मिक अविनाशी अतीन्द्रिय मोक्षसुख में धारण करे। ऐसा धर्म बिकता नहीं, जो धन देकर या दान–सम्मान आदि से प्राप्त किया जाए; तथा किसी से दिया जाता नहीं, जो किसी की उपासना से प्रसन्न करके ले सके; तथा मन्दिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थदिं में धर्म को रख दिया नहीं कि वहाँ जाकर लें आवे। उपवास, व्रत काय–क्लेशादि तप में शरीरादि कृष करने से भी मिलता नहीं। ऐसा भी नहीं है जो देवाधिदेव तीर्थङ्कर के मन्दिरों से तथा उसमें उपकरण दान, मण्डल विधान, पूजा आदि से भी आत्मा का धर्म मिल सके, क्योंकि धर्म तो आत्मा का स्वभाव है। अतः पर में आत्मबुद्धि को छोड़कर, अपने ज्ञाता–दृष्टास्वभाव द्वारा ज्ञायकस्वभाव में ही प्रवर्तनरूप जो आचरण, वह 'धर्म' है।......यदि आत्मा उत्तम क्षमादि वीतराग–सम्यग्दर्शनरूप न हुआ, तो कहीं भी किंचित धर्म

नहीं होता। श्लोक 33 में लिखा है कि जिसके मिथ्यात्व नहीं, ऐसा अव्रती सम्यग्दृष्टि, मोक्षमार्गी है और जिसके मिथ्यात्व है, वह मुनि के व्रतधारी साधु होने पर भी मरकर भवनत्रिकादिक में उपजि संसार ही में परिभ्रमण करेगा।

प्रश्न 91 – अज्ञानी को विश्व में कितने द्रव्य दिखते हैं ?

उत्तर – अज्ञानी को विश्व में एक भी द्रव्य नहीं दिखता, क्योंकि अपना अनुभव हुए बिना, एक द्रव्य की भी जानकारी सच्ची नहीं है। यही बात समयसार कलश टीका कलश एक में तथा समयसार गाथा 201 में कही है।

प्रश्न 92 – अज्ञानी को सात तत्त्वों में से कितने तत्त्वों का ज्ञान है ?

उत्तर – एक का भी नहीं, क्योंकि अपना अनुभव हुए बिना, एक तत्त्व की भी जानकारी सच्ची नहीं है।

प्रश्न 93 – भगवान ने द्रव्य का स्वरूप पहले क्यों बताया है ?

उत्तर – अज्ञानी को अनादि काल से एक-एक समय करके, मैं अनादि-अनन्त अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड द्रव्य हूँ – इसके सम्बन्ध में भूल होने के कारण, भगवान ने पहले द्रव्य का स्वरूप बताया है।

प्रश्न 94 – आप कहते हो कि भगवान ने द्रव्य का लक्षण 'गुणों के समूह को द्रव्य कहा है,' परन्तु अन्य शास्त्रों में द्रव्य की परिभाषा दूसरे प्रकार से क्यों बतलायी है ? जैसे- तत्त्वार्थ सूत्र में 'गुण-पर्यायवत् द्रव्यम्'; 'गुणपर्यय समुदायों द्रव्य' तथा 'गुण समुदायों द्रव्यम्' – ऐसा क्यों है ?

उत्तर – इनमें से किसी एक को जब मुख्य करके कहा जाता है, तब शेष लक्षण भी उसमें गर्भितरूप से आ जाते हैं। इसलिए आचार्यों

ने दूसरे प्रकार से द्रव्य का लक्षण स्पष्ट ध्यान में आने की अपेक्षा कथन किया है और भाव सबका एक ही है; विरोध नहीं है – ऐसा जानना चाहिए।

प्रश्न 95 – भगवान ने द्रव्य की महिमा किससे बतायी है?

उत्तर – उसके गुणों से ही प्रत्येक द्रव्य की महिमा बतायी है।

प्रश्न 96 – मिथ्यादृष्टि लोग अपनी महिमा किस-किस से मानते हैं और किससे नहीं मानते हैं?

उत्तर – (1) मैं पुत्रवाला हूँ; मैं स्त्रीवाला हूँ; (3) मैं रुपए पैसेवाला हूँ; (4) मैं सुन्दर रूपवाला हूँ; (5) मैं क्षमावाला हूँ; (6) मैं अणुव्रतवाला हूँ; (7) मैं महाव्रतवाला हूँ; (8) मैंने स्त्री पुत्रादि का त्याग किया है; (10) मैं मुनि, आचार्य हूँ; (11) मैं महीनों उपवास करनेवाला हूँ; (12) मैं परीषह सहनेवाला हूँ; आदि अप्रयोजनभूत बातों से अपनी महिमा मानते हैं, परन्तु मैं अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान हूँ, इससे अपनी महिमा नहीं मानते हैं।

प्रश्न 97 – रुपया-पैसा आदि से अपनी महिमा मानने का क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इसका फल है।

प्रश्न 98 – नौ प्रकार के पक्षों से अपनी महिमा माननेवाले कौन हैं?

उत्तर – संसार के भक्त हैं, अर्थात् चारों गतियों में घूमते हुए निगोद के पात्र हैं।

प्रश्न 99 – भगवान ने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड का अनुभव करने से ही आत्मा की महिमा क्यों बतायी?

उत्तर – अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड मैं हूँ – ऐसा अनुभव करते ही सम्पूर्ण दुःख का अभाव होकर, सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति हो जाती है; इसलिए भगवान ने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड का अनुभव करने से आत्मा की महिमा बतायी है। अनुभव करते ही 'स हि मुक्त एव' – ऐसा श्री समयसार कलश 198 में बताया है।

प्रश्न 100 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, इसको जानने से चौथा लाभ क्या है?

उत्तर – गुणों की संख्या का सही माप दृष्टि में आ जाता है।

प्रश्न 101 – द्रव्य में गुणों की संख्या का क्या कोई माप है?

उत्तर – हाँ है। (1) जीव, अनन्त हैं। (2) जीवद्रव्य से अनन्तगुणा अधिक, पुद्गलद्रव्य हैं। (3) पुद्गलद्रव्य से अनन्तगुणा अधिक, तीन काल के समय हैं। (4) तीन काल के समयों से अनन्तगुणा अधिक, आकाश के प्रदेश हैं। (5) आकाशद्रव्य के प्रदेशों से अनन्तगुणा अधिक, एक द्रव्य में गुण हैं।

प्रश्न 102 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, उसको जानने से पाँचवाँ लाभ क्या है?

उत्तर – द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते हैं, यह पता चल जाता है।

प्रश्न 103 – प्रत्येक द्रव्य में गुण किस प्रकार हैं?

उत्तर – जैसे – चीनी में मिठास है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं, (2) जैसे – अग्नि में उष्णता है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं; (3) जैसे–सोने में पीलापन है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं; (4) जैसे–पुद्गल में स्पर्शादि हैं, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं; (5) जैसे – कोयले में कालापना है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।

प्रश्न 104 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, इसको जानने से छठवाँ लाभ क्या है?

उत्तर – द्रव्य में गुण किस प्रकार नहीं हैं–यह पता चल जाता है।

प्रश्न 105 – द्रव्य के साथ गुणों का कैसा सम्बन्ध है?

उत्तर – नित्यतादात्म्यसिद्धसम्बन्ध है, अर्थात् कभी भी तीन काल–तीन लोक में अलग न होनेवाला सम्बन्ध है।

प्रश्न 106 – द्रव्य में गुण किस प्रकार नहीं हैं?

उत्तर – जैसे – घड़े में बेर हैं, उस प्रकार द्रव्य में गुण नहीं है। क्योंकि (1) घड़े में बेर भरे गए हैं और निकाले जा सकते हैं; जबकि द्रव्य में गुण भरे और निकाले नहीं जा सकते हैं; (2) बेर, घड़े के सम्पूर्ण भागों में नहीं हैं; जबकि गुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में हैं; (3) बेर, घड़े की सम्पूर्ण अवस्थाओं में नहीं हैं; जबकि गुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में हैं; (4) घड़ा फूट जावे तो घड़े में से बेर निकल सकते हैं; जबकि गुण, द्रव्य से कभी निकल नहीं सकते हैं।

प्रश्न 107 – क्या जैसे पुद्गल में स्पर्शादि गुण हैं; उसी प्रकार द्रव्य में गुण हैं?

उत्तर – हाँ ऐसे ही हैं क्योंकि – (1) जैसे –पुद्गल में स्पर्श, रसादि गुण अनादि से हैं; जो वे डाले और निकाले नहीं जा सकते हैं; उसी प्रकार द्रव्य में गुण अनादि से हैं, जो डाले और निकाले नहीं जा सकते हैं; (2) जैसे –पुद्गल में स्पर्श–रसादि गुण सम्पूर्ण भागों में हैं; उसी प्रकार द्रव्य में गुण सम्पूर्ण भागों में हैं; (3) जैसे – पुद्गल में स्पर्श–रसादि गुण सम्पूर्ण अवस्थाओं में हैं; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य में गुण सम्पूर्ण अवस्थाओं में हैं; (4) जैसे – पुद्गल में से स्पर्श, रसादि गुण कभी निकलकर बिखर नहीं जाते, क्योंकि उनका

द्रव्य, क्षेत्र, काल एक ही है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य में गुण कभी निकलकर बिखर नहीं जाते; क्योंकि प्रत्येक द्रव्य-गुण का द्रव्य, क्षेत्र, काल एक ही है।

प्रश्न 108 - (1) क्या जैसे एक थैली में चावल भर दिये; (2) क्या जैसे जीव में ज्ञान-दर्शनादि हैं; (3) क्या जैसे एक किताब में पाँच सौ पन्ने हैं; (4) क्या जैसे इस कुर्सी में अनन्त परमाणु हैं; (5) क्या जैसे कालद्रव्य में परिणमनहेतुत्व गुण हैं; (6) क्या जैसे इन कमीज में अनन्त परमाणु हैं; (7) क्या जैसे आत्मा के साथ शरीर का सम्बन्ध है; (8) क्या जैसे आत्मा के साथ आठ कर्मों का सम्बन्ध है; (9) क्या जैसे कमरे में सरसों भर दीं; (10) क्या जैसे रसगुल्ले में अनन्त परमाणु हैं; (11) क्या जैसे आकाश में अवगाहनत्व गुण है; (12) क्या जैसे जीव -पुद्गल में क्रियावतीशक्ति और वैभाविकशक्ति हैं; (13) क्या जैसे एक छत्ते में हजारों मक्खियाँ हैं, उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य में गुण हैं ?

उत्तर - पूर्व प्रश्नों के अनुसार उत्तर खोजें।

प्रश्न 109 - अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान की ओर दृष्टि करने से सातवाँ लाभ क्या है ?

उत्तर - (1) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव हो जाता है; (2) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पंच परावर्तन का अभाव हो जाता है; (3) चार गतियों के अभावरूप पंचम गति की प्राप्ति होती है; (4) पंचम पारिणामिकभाव का महत्व आ जाता है; (5) पंच परमेष्ठियों में गिनती होने लगती है; (6) ज्ञाता-दृष्टा बुद्धि प्रगट हो जाती है; (7) मार्गणा-गुणस्थान जीवसमास रहित अपना आत्मा दृष्टि में आ जाता है।

प्रश्न 110 – ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि गुणों के साथ आत्मा का कैसा सम्बन्ध है?

उत्तर – नित्यतादात्म्यसम्बन्ध है।

प्रश्न 111 – नित्यतादात्म्यसम्बन्ध को श्री समयसार के कर्ता–कर्म अधिकार में किस नाम से कहा है?

उत्तर – तादात्म्यसिद्धसम्बन्ध के नाम से कहा है।

प्रश्न 112 – तादात्म्यसिद्धसम्बन्ध मानने–जानने का क्या फल है?

उत्तर – सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र की प्राप्ति, उसका फल है।

प्रश्न 113 – शुभाशुभ विकारीभावों के साथ सम्बन्ध का क्या नाम है?

उत्तर – अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध है।

प्रश्न 114 – अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध को श्री समयसार के कर्ता–कर्म अधिकार में किस नाम से कहा है?

उत्तर – संयोगसिद्धसम्बन्ध के नाम से कहा है।

प्रश्न 115 – संयोगसिद्धसम्बन्ध को तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध माने तो क्या होगा?

उत्तर – मिथ्यादर्शनादि दृढ़ होकर, निगोद चला जाएगा।

प्रश्न 116 – संयोगसिद्धसम्बन्ध और निज कारणपरमात्मा अलग है – ऐसा अनुभव करे तो क्या होगा?

उत्तर – (1) आस्रवों का अभाव हो जाएगा; (2) कर्मों का बन्ध नहीं होगा; (3) सच्चे सुख की प्राप्ति हो जाएगी; और (4) क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होगी।

प्रश्न 117 – विकारीभावों के साथ अज्ञानी कैसा सम्बन्ध मानता है और उसका फल क्या है ?

उत्तर – कर्ता–कर्म सम्बन्ध मानता है और उसका फल परम्परा निगोद है।

प्रश्न 118 – ऐसे द्रव्यों के नाम बताओ जिसमें गुण न हों ?

उत्तर – ऐसा कोई भी द्रव्य नहीं है, क्योंकि गुणों के समूह को ही द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 119 – गुणों को कौन नहीं मानता है ?

उत्तर – श्वेताम्बर नहीं मानते हैं।

प्रश्न 120 – द्रव्य–गुण, भेदरूप हैं या अभेदरूप हैं ?

उत्तर – द्रव्य–गुण, भेद–अभेद दोनों रूप हैं।

प्रश्न 121 – द्रव्य और गुण, भेदरूप कैसे हैं ?

उत्तर – संज्ञा, संख्या, लक्षण, प्रयोजन की अपेक्षा भेद है।

प्रश्न 122 – द्रव्य और गुण अभेदरूप कैसे हैं ?

उत्तर – (1) प्रदेशों की अपेक्षा; (2) क्षेत्र की अपेक्षा; और (3) काल की अपेक्षा द्रव्य–गुण अभेदरूप हैं।

प्रश्न 123 – द्रव्य और गुण, 'संज्ञा' अपेक्षा भेद कैसे हैं ?

उत्तर – एक का नाम द्रव्य है, दूसरे का नाम गुण है – यह संज्ञा अपेक्षा भेद है।

प्रश्न 124 – द्रव्य और गुण, 'संख्या' अपेक्षा भेद कैसे हैं ?

उत्तर – द्रव्य, एक है और गुण, अनेक हैं – यह संख्या अपेक्षा भेद है।

प्रश्न 125 – द्रव्य और गुण, 'लक्षण' की अपेक्षा भेदरूप कैसे हैं?

उत्तर – (1) द्रव्य का लक्षण – गुणों का समूह है; (2) गुण का लक्षण – जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है, उसे गुण कहते हैं – यह लक्षण अपेक्षा भेद है।

प्रश्न 126 – छह द्रव्यों को दो तरह बाँटो?

उत्तर – जीव और अजीव।

प्रश्न 127 – जीव कौन है और अजीव कौन है?

उत्तर – ज्ञान-दर्शनवाला जीव है, बाकी पाँच द्रव्य, अजीव हैं।

प्रश्न 128 – छह द्रव्यों को दूसरी तरह से दो भेदरूप बाँटो?

उत्तर – रूपी और अरूपी।

प्रश्न 129 – रूपी कौन है?

उत्तर – स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवाला पुद्गल, रूपी है।

प्रश्न 130 – अरूपी कौन है?

उत्तर – जीव, धर्म, अधर्म आकाश और काल, अरूपी हैं।

प्रश्न 131 – छह द्रव्यों को तीसरी तरह से दो भेदरूप बाँटो?

उत्तर – क्रियावतीशक्तिसहित और क्रियावतीशक्तिरहित।

प्रश्न 132 – क्रियावतीशक्तिवाले कौन-कौन द्रव्य हैं?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य, क्रियावतीशक्तिसहित हैं।

प्रश्न 133 – क्रियावतीशक्तिरहित कौन-कौन द्रव्य हैं?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश और काल, ये चार द्रव्य, क्रियावती-शक्तिरहित हैं।

प्रश्न 134 – छह द्रव्यों को चौथी तरह से दो भेदरूप बाँटो ?

उत्तर – वैभाविकशक्तिसहित और वैभाविकशक्तिरहित।

प्रश्न 135 – वैभाविकशक्तिसहित कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर – जीव और पुद्‌गल, वैभाविकशक्तिवाले द्रव्य हैं।

प्रश्न 136 – वैभाविकशक्तिरहित कौन-कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश और काल, वैभाविकशक्ति से रहित द्रव्य हैं।

प्रश्न 137 – छह द्रव्यों को पाँचवीं तरह से दो भेदरूप बाँटो ?

उत्तर – बहुप्रदेशी और एक प्रदेशी।

प्रश्न 138 – बहुप्रदेशी द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर – जीव, धर्म, अधर्म और आकाशद्रव्य, बहुप्रदेशी हैं।

प्रश्न 139 – एक प्रदेशी द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर – पुद्‌गल परमाणु और कालद्रव्य, ये दो द्रव्य एक प्रदेशी हैं।

प्रश्न 140 – छह द्रव्यों को छठी तरह से दो भेदरूप बाँटो ?

उत्तर – एक और अनेक।

प्रश्न 141 – एक-एक कौन-कौन से द्रव्य हैं ?

उत्तर – धर्म, अधर्म और आकाश, एक-एक द्रव्य हैं।

प्रश्न 142 – अनेक द्रव्य कौन-कौन हैं ?

उत्तर – जीव, पुद्‌गल और कालद्रव्य अनेक हैं।

प्रश्न 143 – छह द्रव्यों को सातवीं तरह से दो भेदरूप बाँटो ?

उत्तर – जड़ और चेतन।

प्रश्न 144 – जड़द्रव्य कौन-कौन हैं?

उत्तर – पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश और काल, जड़द्रव्य हैं।

प्रश्न 145 – चेतन कौन-कौन द्रव्य हैं?

उत्तर – एकमात्र जीवद्रव्य, चेतन है।

प्रश्न 146 – जीव को दो भेदरूप बाँटो?

उत्तर – (1) संसारी और सिद्ध; (2) ज्ञानी और अज्ञानी; (3) केवलज्ञानी और अल्पज्ञानी।

प्रश्न 147 – संसारी कौन-कौन हैं?

उत्तर – 14वें गुणस्थान तक सभी जीव संसारी कहलाते हैं।

प्रश्न 148 – सिद्ध कौन-कौन हैं?

उत्तर – 14वें गुणस्थान से पार सब जीव, सिद्ध हैं।

प्रश्न 149 – ज्ञानी कौन-कौन हैं?

उत्तर – 'सम्यग्दृष्टि सो ज्ञानी', इस अपेक्षा चौथे गुणस्थान से सिद्धदशा तक सब ज्ञानी हैं।

प्रश्न 150 – अज्ञानी कौन-कौन हैं?

उत्तर – निगोद से लगाकर तीसरे गुणस्थान तक चारों गति के जीव अज्ञानी हैं, 'क्योंकि मिथ्यादृष्टि सो अज्ञानी'।

प्रश्न 151 – 'केवलज्ञानी सो ज्ञानी' में कौन-कौन जीव आते हैं?

उत्तर – 13, 14वें गुणस्थान तथा सिद्धदशावाले केवलज्ञानी जीव आते हैं।

प्रश्न 152 – अज्ञानी (अल्पज्ञानी) कौन-कौन हैं ?

उत्तर – 'अल्पज्ञानी सो अज्ञानी और केवलज्ञानी सो ज्ञानी' इस अपेक्षा निगोद से लगाकर 12वें गुणस्थान तक सब अज्ञानी (अल्पज्ञानी) हैं।

प्रश्न 153 – जीवों में भव्य-अभव्य का व्यवहार कहाँ तक है ?

उत्तर – 14वें गुणस्थान तक है; सिद्धभगवान में भव्य-अभव्य का भेद नहीं हैं, अर्थात् वे सिद्ध, भव्य-अभव्य से रहित हैं।

प्रश्न 154 – संसारी के दो भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – भव्य और अभव्य हैं।

प्रश्न 155 – भव्य का कोई भेद है ?

उत्तर – एक दूरानदूर भव्य, दूसरा निकट भव्य।

प्रश्न 156 – अभव्य का कोई भेद है ?

उत्तर – जो कभी सुलटेंगे नहीं (निगोद से कभी निकलेंगे ही नहीं) वह अभव्य हैं। निगोद से निकलकर सुलटने की शक्ति होने पर भी कभी नहीं सुलटेंगे, वे अभव्य हैं।

प्रश्न 157 – छद्मस्थ का क्या अर्थ है ?

उत्तर – ज्ञान-दर्शन का आवरण रहे, तब तक छद्मस्थ है।

प्रश्न 158 – छद्मस्थ के कितने भेद हैं ?

उत्तर – साधक और बाधक।

प्रश्न 159 – साधक कौन-कौन हैं ?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से 12वें गुणस्थान तक साधक हैं।

प्रश्न 160 – बाधक कौन-कौन हैं ?

उत्तर – निगोद से लगाकर चारों गति के जीव जब तक सम्यक्त्व की प्राप्ति न हो, तब तक बाधक हैं।

प्रश्न 161 – पुद्‌गलद्रव्य के कितने भेद हैं ?

उत्तर – परमाणु और स्कन्ध, ये दो भेद हैं।

प्रश्न 162 – स्कन्ध के कितने भेद हैं ?

उत्तर – छह भेद हैं, (1) अतिस्थूल स्थूल, (2) स्थूल, (3) स्थूल –सूक्ष्म, (4) सूक्ष्मस्थूल, (5) सूक्ष्म, (6) अतिसूक्ष्म (सूक्ष्मसूक्ष्म)

प्रश्न 163 – अति स्थूल-स्थूल स्कन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – काष्ठ पाषाणादिक जो स्कन्ध, छेदन किए जाने पर स्वयंमेव जुड़ नहीं सकते हैं, वे स्कन्ध अतिस्थूलस्थूल स्कन्ध हैं।

प्रश्न 164 – स्थूल स्कन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – दूध, जल आदि जो स्कन्ध, छेदन किए जाने पर पुनः स्वयंमेव जुड़ जाते हैं, वे स्कन्ध स्थूल हैं।

प्रश्न 165 – स्थूल सूक्ष्म स्कन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – आँख से न दिखनेवाले ऐसे जो चार इन्द्रियों के विषय –भूत स्कन्ध होने पर भी, स्थूल ज्ञात होते हैं। स्पर्शनइन्द्रिय से स्पर्श किए जा सकते हैं; जीभ से आस्वादन किए जा सकते हैं, नाक से सूँघे जा सकते हैं; कान से सुने जा सकते हैं; वे स्कन्ध सूक्ष्म स्थूल हैं।

प्रश्न 166 – सूक्ष्म स्कन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – इन्द्रियज्ञान के अगोचर ऐसे जो कर्मवर्गणारूप स्कन्ध हैं, वे स्कन्ध सूक्ष्म हैं।

प्रश्न 167 – अतिसूक्ष्म स्कन्ध किसे कहते हैं?

उत्तर – कार्माणवर्गणा से अतीत जो अत्यन्त सूक्ष्म–द्वि–अणुक –पर्यन्त स्कन्ध हैं, वे स्कन्ध अति सूक्ष्म हैं।

प्रश्न 168 – पुद्‌गल परमाणु और स्कन्धों के यह भेद जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – अनादि से जीव, अज्ञानी है। उसे कहते हैं कि भाई! आत्मा चैतन्यमूर्ति है, उसका पुद्‌गल परमाणु और स्कन्धों के भेदों से तो किसी भी प्रकार का (निश्चय–व्यवहार से) सम्बन्ध नहीं है, परन्तु स्कन्धों के निमित्त से जो भाव होते हैं, वह भी पुद्‌गल हैं – ऐसा जानकर, अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान का आश्रय ले, तो धर्म की शुरूआत होकर, वृद्धि होकर, पूर्ण शान्ति का पथिक बनना, यह पुद्‌गलों को जानने का लाभ है।

प्रश्न 169 – द्रव्य के मूलतः कितने भेद हैं?

उत्तर – जीव और अजीव, दो भेद हैं।

प्रश्न 170 – जीव–अजीव, द्रव्य के दो भेद बताने के पीछे क्या रहस्य है?

उत्तर – तू शुद्ध–बुद्ध अविनाशी जीव है। तेरा परजीवों से और अजीवों से किसी भी अपेक्षा कोई सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर अपने शुद्ध–बुद्ध अविनाशी जीव की दृष्टि करके धर्म की प्राप्ति कर लेना, यह जीव–अजीव के पीछे रहस्य हैं। यही बात वृहद् द्रव्यसंग्रह में बतायी है कि 'यद्यपि शुद्ध–बुद्ध एक स्वभाव परमात्मद्रव्य उपादेय है, तथापि हेयरूप अजीवद्रव्यों का भी कथन किया जाता है, क्योंकि हेयतत्त्व का परिज्ञान किए बिना, उपादेयतत्त्व का आश्रय नहीं किया जा सकता।'

प्रश्न 171 – संख्या की अपेक्षा सबसे ज्यादा कौन द्रव्य हैं ?

उत्तर – पुद्‌गलद्रव्य हैं, क्योंकि पुद्‌गल परमाणु द्रव्यों की संख्या सबसे बड़ी है और अनन्त जीव राशि से अनन्तानन्त गुनी अधिक है।

प्रश्न 172 – क्षेत्र की अपेक्षा सबसे अधिक कौन है ?

उत्तर – क्षेत्र अपेक्षा से त्रिकालवर्ती समयों की संख्या से अनन्त गुनी संख्या आकाशद्रव्य के प्रदेशों की हैं; इसलिए क्षेत्र अपेक्षा से आकाशद्रव्य सबसे बड़ा है।

प्रश्न 173 – काल की अपेक्षा संख्या ज्यादा किसकी है ?

उत्तर – (1) काल अपेक्षा से प्रत्येक द्रव्य के स्वकालरूप अनादि-अनन्त पर्यायें पुद्‌गलद्रव्य की संख्या से अनन्त गुनी हैं, वे पर्यायें, काल अपेक्षा से अनन्त हैं। (2) भूतकाल के अनन्त समयों की अपेक्षा, भविष्यकाल के समयों की संख्या अनन्तगुनी अधिक है।

प्रश्न 174 – भाव अपेक्षा अनन्तरूप से किसकी संख्या अधिक है ?

उत्तर – भाव अपेक्षा से जीवद्रव्य की ज्ञानगुण के एक समय की केवलज्ञानपर्याय के अविभागप्रतिच्छेदों की संख्या सबसे अधिक है। यह भाव अपेक्षा से अनन्त है।

प्रश्न 175 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा पहला प्रकार क्या है ?

उत्तर – सत्‌पना (सद्‌द्रव्यलक्षणम्) है।

प्रश्न 176 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा दूसरा प्रकार क्या है ?

उत्तर – 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्तं सत्' अर्थात्, त्रिकाल कायम

रहकर प्रत्येक समय में पुरानी अवस्था का व्यय और नयी अवस्था का उत्पाद होता है, यह छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला दूसरा प्रकार है।

प्रश्न 177 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा तीसरा प्रकार क्या है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने गुणों और पर्यायों का मालिक होता है; दूसरे द्रव्यों के गुणों और पर्यायों का मालिक नहीं होता है। यह छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला तीसरा प्रकार है।

प्रश्न 178 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा चौथा प्रकार क्या है ?

उत्तर – गुण, द्रव्य के आश्रित रहते हैं; गुण, गुण के आश्रित नहीं होते, यह छहों द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला चौथा प्रकार है।

प्रश्न 179 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा पाँचवाँ प्रकार क्या है ?

उत्तर – 'नित्य-अनित्यपना' छहों द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला, पाँचवाँ प्रकार है।

प्रश्न 180 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा छठवाँ प्रकार क्या है ?

उत्तर – 'सामान्य और विशेषपना' यह छहों द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला छठवाँ प्रकार है।

प्रश्न 181 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा सातवाँ प्रकार क्या है ?

उत्तर – 'स्यादवाद–अनेकान्तपना' यह छहों द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला सातवाँ प्रकार है।

प्रश्न 182 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा आठवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर – अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहनेवाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं; वे परस्पर एक दूसरे का स्पर्श नहीं करते – यह छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला आठवाँ प्रकार है।

प्रश्न 183 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जावे — ऐसा नौवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर – अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न, अपनी–अपनी मर्यादा लिए परिणमें हैं, कोई किसी का परिणमाया परिणमता नहीं। यह छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला, नौवाँ प्रकार है।

प्रश्न 184 – छह द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला — ऐसा दसवाँ प्रकार क्या है?

उत्तर – एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता; उसे परिणमित नहीं कर सकता; प्रेरणा नहीं कर सकता; लाभ–हानि नहीं कर सकता; उस पर प्रभाव नहीं डाल सकता; कोई किसी की सहायता या उपकार या अपकार नहीं कर सकता, ऐसी प्रत्येक द्रव्य–गुण–पर्याय की सम्पूर्ण स्वतन्त्रता अनन्त ज्ञानियों ने, अर्थात् (जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों ने) पुकार–पुकार कर कही है। यह छहों द्रव्यों में समानरूप से पाया जानेवाला दसवाँ प्रकार है।

प्रश्न 185 – यह छह द्रव्यों में समानरूप से पाए जानेवाले दस प्रकारों के जानने का क्या लाभ है?

उत्तर – छह द्रव्य जाने, उनमें समानरूप से पाए जानेवाले दस प्रकारों को जाना, उनमें से मुझ निज आत्मा को छोड़कर, किसी दूसरे जीवों से तथा बाकी पाँचों द्रव्यों के द्रव्य–गुण–पर्यायों के साथ मेरा किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है; मेरा तो मात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान के गुण–पर्यायों के साथ ही प्रयोजन है, और से नहीं है। ऐसा जानकर अपने में लीन होना, यह दस प्रकारों को जानने का लाभ है।

प्रश्न 186 – मेरी आत्मा का तो अपने गुण–पर्यायों के साथ प्रयोजन है और से नहीं है, इससे क्या लाभ है ?

उत्तर – मैं (जीव) सदैव अरूपी होने से मेरे अवयव भी सदैव अरूपी ही हैं; इसलिए किसी काल में निश्चय से या व्यवहार से हाथ, पैर आदि चलाना, स्थिर रखना आदि परद्रव्य की कोई भी अवस्था, मैं (जीव) नहीं कर सकता — ऐसा निर्णय होना, यह अपने गुण–पर्यायों को जानने का लाभ है।

प्रश्न 187 – छहढ़ाला में जीव का स्वरूप (अर्थात्, मेरा स्वरूप) क्या बताया है और क्या नहीं, उसे स्पष्ट समझाओ ?

उत्तर – 'चेतन को हैं उपयोगरूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ–धर्म अधर्म–काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।'

भावार्थ – (1) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। (2) मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है। (3) आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है। (4) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (5) सर्वज्ञस्वभावी ज्ञानपदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (6) मुझ निज आत्मा के अलावा, अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक,

लोक-प्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इन सब द्रव्यों से मुझ निज आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि इन सब द्रव्यों का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक हैं। ऐसा छहढ़ाला में बताया है।

प्रश्न 188 – आप कहते हो एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से सम्बन्ध नहीं है तो शास्त्रों में क्यों लिखा है कि (1) कर्म चक्कर कटाता है। (2) जीव, पुद्गल का और पुद्गल, जीव का उपकार करता है। (3) धर्मद्रव्य, जीव-पुद्गल को चलाता है। क्या ये बातें झूठी लिखी हैं ?

उत्तर – यथार्थ बात कहने में नहीं आती है; इसलिए जैसे-किताबों की अलमारी बोलने में आता है, वास्तव में तो अलमारी लकड़ी की है परन्तु उसमें किताब रखते हैं, तो अलमारी किताबों की बोलने में आती है; उसी प्रकार कर्म चक्कर कटाता है आदि व्यवहारकथन है।

प्रश्न 189 – व्यवहारकथन को जैसा का तैसा, अर्थात् सत्य कथन माने तो क्या होगा ?

उत्तर – (1) पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में 'तस्य देशना नास्ति' कहा है। (2) समयसार कलश में 'यह अज्ञान मोह अन्धकार है, उसका सुलटना दुर्निवार है।' (3) प्रवचनसार में 'पद-पद पर धोखा खाता है।' (4) उसके धर्म के अङ्ग अन्यथा रूप होकर मिथ्याभाव को प्राप्त होते हैं – ऐसा मोक्षमार्ग प्रकाशक में बताया है।

प्रश्न 190 – व्यवहार के कथन को सच्चा मानने वाले को 'तस्य देशना नास्ति' आदि क्यों कहा है ?

उत्तर – 'व्यवहारनय, स्व-स्वद्रव्य और परद्रव्य को, स्वद्रव्य के

भावों को और परद्रव्यों के भावों को तथा कारण-कार्यादिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है; अतः व्यवहार के कथन का वैसे का वैसा श्रद्धान करने से मिथ्यात्व दृढ़ होता है; इसलिए उस श्रद्धान का त्याग करना और निश्चयनय, स्वद्रव्य और परद्रव्य को, स्वद्रव्य के भावों को और परद्रव्यों के भावों को तथा कारण-कार्यादिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नहीं करता है। उसके श्रद्धान से सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होती है; इसलिए व्यवहार के कथन को सच्चा माननावाले को 'तस्य देशना नास्ति' आदि शब्दों से आचार्यों ने सम्बोधन किया है।

प्रश्न 191- जहाँ व्यवहारकथन हो, वहाँ क्या अर्थ करना चाहिए ?

उत्तर - जहाँ व्यवहार से कथन हो उसका अर्थ 'ऐसा है नहीं किन्तु निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है' — ऐसा जानना चाहिए। निमित्त की मुख्यता से कथन होता है, किन्तु निमित्त की मुख्यता से कार्य नहीं होता है, ऐसा व्यवहारकथन का अभिप्राय समझना चाहिए।

प्रश्न 192 - सर्वज्ञदेव का वीतरागी भेदविज्ञान क्या है ?

उत्तर - जगत में छहों द्रव्य एक ही क्षेत्र में विद्यमान होने पर भी, कोई द्रव्य, दूसरे द्रव्य के स्वभाव को स्पर्श नहीं करता। प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप त्रिस्वभाव में ही बर्तता है; इसलिए प्रत्येक द्रव्य अपने स्वभाव को ही स्पर्श करता है - यह है - सर्वज्ञदेव कथित वीतरागी भेदविज्ञान।

प्रश्न 193 - सर्वज्ञदेव कथित वीतरागी भेदविज्ञान को मानने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर - (1) निमित्त-उपादान का सही स्पष्टीकरण इसमें आ

जाता है। उपादान और निमित्त यह दोनों पदार्थ एक साथ प्रवर्तमान होने पर भी, उपादानरूप पदार्थ अपने उत्पाद–व्यय–ध्रुवतारूप स्वभाव को ही स्पर्श करता है; निमित्त को किञ्चित्मात्र भी स्पर्श नहीं करता है। (2) निमित्तभूत पदार्थ भी उसके अपने उत्पाद–व्यय ध्रुवतारूप स्वभाव का ही स्पर्श करता है; उपादान को वह किञ्चितमात्र भी स्पर्श नहीं करता। (3) निमित्त – उपादान दोनों पृथक्–पृथक् अपने–अपने स्वभाव में ही प्रवर्तते हैं, परिणमन करते हैं।

प्रश्न 194 – निमित्त–उपादान पृथक्–पृथक् कार्य करते हैं; एक दूसरे का कोई सम्बन्ध नहीं है, इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर – पूज्य गुरुदेव कहते हैं – अहो ! पदार्थों का यह स्वभाव भलीभाँति पहचान ले, तो भेदज्ञान होकर स्वद्रव्य के आश्रय से निर्मलपर्याय का उत्पाद और मलिनता का व्यय हो, उसका नाम धर्म है। यह सर्वज्ञ के सर्व उपदेश का तात्पर्य है।

प्रश्न 195 – शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से द्रव्य का लक्षण पञ्चाध्यायी में क्या बताया है ?

उत्तर – (1) जो सत्स्वरूप, (2) स्वत:सिद्ध, (3) अनादि –अनन्त, (4) स्वसहाय, (5) निर्विकल्प, अर्थात् अखण्डित, वह द्रव्य है – ऐसा बताया है।

प्रश्न 196 – पञ्चाध्यायी में पर्यायार्थिकनय से द्रव्य का लक्षण क्या बताया है ?

उत्तर – (1) गुण–पर्यायवत् द्रव्यम् (2) गुणपर्याय समुदायों द्रव्यम् (3) गुण समुदायों द्रव्यम् (4) समगुण पर्यायों द्रव्यम् (5) उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्तं सत्–यह सब पर्यायर्थिकनय से द्रव्य के लक्षण हैं।

प्रश्न 197 – पञ्चाध्यायी में प्रमाण से द्रव्य का लक्षण क्या बताया है ?

उत्तर – जो द्रव्य, गुण–पर्यायवाला है। वही द्रव्य, उत्पाद–व्यय –ध्रौव्युक्त है तथा वही द्रव्य, अखण्ड सत् अनिर्वचनीय है।

प्रश्न 198 – स्वतः सिद्ध से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – वस्तु, पर से सिद्ध नहीं है, ईश्वरादि की बनायी हुई नहीं है, स्वतः स्वभाव से स्वयं सिद्ध है। यह तात्पर्य स्वतः सिद्ध से है।

प्रश्न 199 – अनादि–अनन्त से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – वस्तु, क्षणिक नहीं है। सत् की उत्पत्ति नहीं है और न सत् का नाश होता है, वह अनादि से है और अनन्त काल रहेगी– यह तात्पर्य अनादि–अनन्त से है।

प्रश्न 200 – स्वसहाय से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – (1) पदार्थ, अन्य पदार्थों से नहीं हैं। निमित्त या अन्य पदार्थों से न टिकता है और न परिणमन करता है। (2) अनादि –अनन्त स्वभाव, विभाव या शुद्धरूप स्वयं अपने परिणमन के कारण परिणमता है। (3) कभी किसी पदार्थ का अंश न स्वयं अपने में लेता है और न अपना कोई अंश दूसरे को देता है। यह तात्पर्य स्वसहाय से है।

प्रश्न 201 – अनादि–अनन्त और स्वसहाय में क्या अन्तर है ?

उत्तर – अनादि–अनन्त में उत्पत्ति और नाश से रहित बताना है और स्वसहाय में उसकी स्वतन्त्र स्थिति तथा स्वतन्त्र परिणमन बताना है, इतना अन्तर है।

प्रश्न 202 – निर्विकल्प (अखण्डित) किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिसके द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, और भाव से किसी प्रकार सर्वथा खण्ड न हो सकते हों, उसे निर्विकल्प (अखण्डित) कहते हैं।

प्रश्न 203 – महासत्ता किसे कहते हैं ?

उत्तर – सामान्य को, अखण्ड को, अभेद को महासत्ता कहते हैं।

प्रश्न 204 – अवान्तरसत्ता किसे कहते हैं ?

उत्तर – विशेष को, खण्ड को, भेद को अवान्तरसत्ता कहते हैं।

प्रश्न 205 – क्या महासत्ता और अवान्तरसत्ता के प्रदेश भिन्न-भिन्न हैं ?

उत्तर – नहीं, प्रदेश एक ही हैं; मात्र अपेक्षाकृत भेद हैं, क्योंकि वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है।

प्रश्न 206 – प्रत्येक द्रव्य का स्वचतुष्टय क्या है ?

उत्तर – (1) द्रव्य – वह **द्रव्य** है। (2) उसका क्षेत्र, वह **क्षेत्र** है। (3) उसका काल, वह **काल** है। (4) उसका भाव, वह **भाव** है।

प्रश्न 207 – प्रत्येक द्रव्य का चतुष्टय उस उस द्रव्य के अन्दर है या बाहर है ?

उत्तर – उसके अन्दर ही है; बाहर नहीं है।

प्रश्न 208 – कोई सामान्य को न माने तो क्या नुकसान है ?

उत्तर – मोक्ष का पुरुषार्थ नहीं हो सकेगा।

प्रश्न 209 – कोई विशेष को न माने तो क्या नुकसान है ?

उत्तर – संसार और मोक्ष ही नहीं रहेगा।

प्रश्न 210 – सामान्य-विशेष से क्या जानना चाहिए ?

उत्तर – अपने सामान्य और विशेष दोनों को जानकर, अपने सामान्य की ओर दृष्टि करने से पर्याय में से विकार का अभाव और धर्म का उत्पाद होता है। फिर जैसे–जैसे अपने सामान्य में एकाग्रता करता जाता है; क्रम से वृद्धि करके, मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 211 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, इसको जानने से क्या–क्या लाभ रहे ?

उत्तर – (1) अपनी महिमा आ जाती है; (2) नौ प्रकार के समूह से दृष्टि हट जाती है; (3) सम्यग्दर्शन से लेकर सिद्धदशा तक की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है, यह पता चल जाता है; (4) गुणों की संख्या का माप क्या है, यह पता चल जाता है; (5) द्रव्य में गुण किस प्रकार हैं, यह पता चल जाता है; (6) द्रव्य में गुण किस प्रकार नहीं हैं, यह पता चल जाता है; (7) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का तथा पञ्च परावर्तन आदि का अभाव हो जाता है।

प्रश्न 212 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं तो प्रत्येक द्रव्य कैसा है ?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य, 'सत्' है। (2) प्रत्येक द्रव्य, 'उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य' वाला है। (3) प्रत्येक द्रव्य, अपने गुण–पर्यायों का मालिक है। (4) प्रत्येक द्रव्य के गुण, द्रव्य के आश्रित रहते हैं। (5) प्रत्येक द्रव्य, नित्य–अनित्यरूप है। (6) प्रत्येक द्रव्य, सामान्य–विशेषस्वरूप है। (7) प्रत्येक द्रव्य, स्याद्वाद–अनेकान्तस्वरूप है। (8) प्रत्येक द्रव्य, अपने–अपने गुण पर्यायों को स्पर्श करते हैं। (9) प्रत्येक द्रव्य, अनादि–निधन है। (10) प्रत्येक द्रव्य, स्वतन्त्र है। (11) प्रत्येक द्रव्य, एक–अनेकरूप है। (12) प्रत्येक द्रव्य, तत्–अतत्रूप है। (13) प्रत्येक द्रव्य, सत्–असत्रूप है। (14) प्रत्येक द्रव्य, सामान्य–विशेषगुणवाला है। ●●

4

जीवद्रव्य

प्रश्न 1 – जीवद्रव्य किसे कहते हैं?

उत्तर – जिसमें चेतना, अर्थात् ज्ञान–दर्शनरूप शक्ति हो, उसे जीवद्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 2 – चैतन्य किसका लक्षण है?

उत्तर – जीवद्रव्य का।

प्रश्न 3 – चैतन्य से क्या तात्पर्य है?

उत्तर – चैतन्य से ज्ञान–दर्शनगुणों का ग्रहण होता है।

प्रश्न 4 – चैतन्य ही आत्मा का लक्षण है, तो उसके अन्य गुणों का क्या हुआ?

उत्तर – चैतन्यगुण, जानने–देखने का कार्य करता है; अन्य गुण जानने–देखने का कार्य नहीं करते हैं। चैतन्य कहते ही उसके अन्य सब गुण साथ में आ जाते हैं – ऐसा पात्र जीव जानता है।

प्रश्न 5 – श्रीसमयसार जी में आत्मा को 'ज्ञान' ही क्यों कहा है?

उत्तर – 'ज्ञान' कहते ही आत्मा का ग्रहण हो जाता है; इसलिए आत्मा को ज्ञान कहा है। ज्ञान कहते ही, अन्य गुण भी साथ में आ जाते हैं।

प्रश्न 6 – ज्ञान शब्द, कितने अर्थों में प्रयुक्त होता है?

उत्तर – (1) ज्ञान शब्द, आत्मा के लिए; (2) ज्ञानगुण के लिए; और (3) सम्यग्ज्ञान के लिए; इस प्रकार तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है।

प्रश्न 7 – जीवद्रव्य में सामान्यगुण कितने और कौन-कौन से हैं?

उत्तर – जीवद्रव्य में, अस्तित्व, वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्यगुण हैं।

प्रश्न 8 – जीवद्रव्य में विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं?

उत्तर – जीवद्रव्य में, चैतन्य (ज्ञान-दर्शन) श्रद्धा, चारित्र, सुख, क्रियावतीशक्ति इत्यादि अनन्त विशेषगुण हैं।

प्रश्न 9 – जब जीवद्रव्य में सामान्य और विशेषगुण अनन्त हैं, तो सबके नाम क्यों नहीं बताये?

उत्तर – हमारा प्रयोजन, मोक्षमार्ग की सिद्धि करना है; इसलिए जिन सामान्य-विशेषगुणों का श्रद्धान करने से मोक्ष हो, और जिनका श्रद्धान किये बिना मोक्ष न हो, उन्हीं का यहाँ हमने वर्णन किया है।

प्रश्न 10 – जीवद्रव्य कितने हैं?

उत्तर – विश्व में जीवद्रव्य अनन्त हैं।

प्रश्न 11 – जीवद्रव्य अनन्त हैं, यह कब माना?

उत्तर – मैं एक जीव हूँ, दूसरे भी पृथक्-पृथक् अनन्त जीव हैं। प्रत्येक जीव अपने-अपने गुण-पर्यायों सहित, अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव में ही वर्त रहा है, वर्तेगा और वर्तता रहा है। इस प्रकार अनन्त जीवों के द्रव्य-गुण-पर्याय, पृथक्-पृथक् ज्ञान में आवे, तब जीवद्रव्य अनन्त हैं – ऐसा माना।

प्रश्न 12 – जीवद्रव्य अनन्त हैं –ऐसा माननेवाले को क्या-क्या प्रश्न नहीं उठते हैं ?

उत्तर – (1) मैं दूसरे जीवों का भला या बुरा कर दूँ; (2) दूसरे जीव मेरा भला या बुरा कर दें; (3) भगवान–देव–शास्त्र–गुरु मेरा भला कर दें, कोई दुश्मन मेरा बुरा कर दे – आदि प्रश्न नहीं उठ सकते हैं, क्योंकि जीव, अनन्त हैं और प्रत्येक जीवद्रव्य का स्वचतुष्टय पृथक्–पृथक् है।

प्रश्न 13 – जीवद्रव्य अनन्त हैं – इसे जानने से दूसरा लाभ क्या रहा ?

उत्तर – वेदान्ती मानता है कि आत्मा एक है और हमने जाना कि जीव, अनन्त हैं – तो एकमात्र आत्मा कहनेवाला मिथ्या है, ऐसा पता चल गया।

प्रश्न 14 – मेरा लक्षण, ज्ञान–दर्शनादि अनन्त गुणस्वरूप है, इसके जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मैं आत्मा, शरीर–आँख–नाक–कान आदिरूप; आठ कर्मोंरूप; विकाररूप; परद्रव्योंरूप नहीं हूँ – ऐसा पता चल गया।

प्रश्न 15 – मैं आत्मा, शरीर, आठ कर्म, परद्रव्योंरूप, और विकाररूप नहीं हूँ –ऐसा जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर – अनादि काल से अज्ञानी जीव को ऐसी मिथ्याबुद्धि है कि मैं शरीर–आँख–नाक–कानरूप हूँ और शरीर को हिला–डुला सकता हूँ; कर्म मुझे सुखी–दुःखी करते हैं; अशुभभाव बुरा, शुभभाव अच्छा है। ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो जाता है, क्योंकि जब मैं इनरूप नहीं हूँ तो इनमें करने–धरने की बुद्धि का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है।

प्रश्न 16 – जो जीव ऐसा कहता है कि हमें तो 'उपयोग लक्षणवाला जीव' दिखायी नहीं देता है; हमें तो शरीर आदिरूप ही जीव दिखायी देता है, उससे आचार्यभगवान ने क्या कहा है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 24 में कहा है कि 'नित्यउपयोग –लक्षणवाला जीवद्रव्य, कभी शरीर–आँख–नाक–मन–वाणी, कर्म, विकाररूप होता हुआ देखने में नहीं आता और नित्य जड़ लक्षणवाला शरीर आदि पुद्‌गलद्रव्य, कभी जीवद्रव्य होता हुआ देखने में नहीं आता, क्योंकि उपयोग और जड़त्व के एकरूप होने में, प्रकाश और अन्धकार की भाँति विरोध है। जड़–चेतन कभी भी एक नहीं हो सकते; वे सर्वथा भिन्न ही हैं, इसलिए हे भव्य, तू सर्व प्रकार से प्रसन्न हो। अपना चित्त उज्ज्वल करके सावधान हो और स्वद्रव्य को ही 'यह मेरा है' –ऐसा अनुभव कर।

प्रश्न 17 – 'जीव का लक्षण, उपयोग है' ऐसा कहाँ–कहाँ आया है।

उत्तर – समस्त शास्त्रों में आया है। (1) 'उपयोगो लक्षणम्' *(तत्वार्थसूत्र, अध्याय दूसरा, सूत्र 8)* (2) 'उपयोग लक्षण जीव है' *(श्री समयसार, गाथा 24 में)* (3) 'चेतन को है उपयोगरूप' *(श्री छहढ़ाला में)*।

प्रश्न 18 – जीवद्रव्य के कितने प्रदेश हैं ?

उत्तर – लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेश हैं।

प्रश्न 19 – संकोच–विस्तार किस द्रव्य में होता है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के प्रदेश, संकोच और विस्तार को प्राप्त होते हैं; इसीलिए लोक के असंख्यातवें भाग से लेकर, समस्त लोक के अवगाहरूप से हैं।

प्रश्न 20 – जीवद्रव्य की तरह क्या अन्य किसी द्रव्य के भी असंख्यात प्रदेश हैं ?

उत्तर – हाँ; धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, और लोकाकाश के भी असंख्यात प्रदेश हैं।

प्रश्न 21 – क्या जीव तथा धर्म-अधर्म के असंख्यात प्रदेशों में कुछ अन्तर है?

उत्तर – धर्म, अधर्मद्रव्य समस्त लोकाकाश में व्याप्त हैं, जबकि जीव के प्रदेश, संकोच-विस्तार को प्राप्त होते हैं; इस प्रकार अवगाह में अन्तर है।

प्रश्न 22 – जीव में क्रियावतीशक्ति है, उसका काम क्या है?

उत्तर – जीव में क्रियावतीशक्ति नामक गुण का गतिरूप और स्थितिरूप दो प्रकार का परिणमन है।

प्रश्न 23 – जीव का लक्षण, शरीर कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 24 – जीव का लक्षण, भावकर्म कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – (1) अध्यात्म की अपेक्षा असम्भवदोष आता है। (2) आगम की अपेक्षा अव्याप्तिदोष आता है, क्योंकि दसवें गुणस्थान तक भावकर्म है; बाद के जीवों में नहीं है।

प्रश्न 25 – जीव का लक्षण, मति-श्रुतज्ञानी कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 26 – जीव का लक्षण, केवलज्ञान कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 27 – जीव का लक्षण, कान-नाक से ज्ञान करना कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 28 – जीव का लक्षण, श्रेणी मॉडना कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 29 – जीव का लक्षण, इन्द्रियाँ और मन कहे तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 30 – जीव का लक्षण, अरूपी कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 31 – जीव का लक्षण, बाहरी तपस्या और नग्न रहना कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 32 – जीव का लक्षण, क्रियावतीशक्तिवाला कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 33 – जीव का लक्षण, पर का भला-बुरा करना; सत्य बोलना; देश का उपकार करना; बाल-बच्चों का और स्त्री का पालन-पोषण करना; रुपया कमाना कहे तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 34 – आत्मा का लक्षण दया, दान, पूजा, अणुव्रत, महाव्रतादि का भाव कहें, तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अव्याप्तिदोष आता है। अध्यात्म की अपेक्षा असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 35 – आत्मा का लक्षण, सम्यग्दर्शन कहें, तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 36 – सच्चे लक्षण की क्या पहचान है?

उत्तर – जो लक्ष्य में जो सर्वत्र पाया जावे और अलक्ष्य में कहीं भी न पाया जावे, वही सच्चे लक्षण की पहचान है।

प्रश्न 37 – आत्मा का लक्षण 'चैतन्य' कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – कोई भी दोष नहीं आता, क्योंकि निगोद से लगाकर सिद्धदशा तक सब जीवों में 'चैतन्य' लक्षण निरन्तर पाया जाता है और अनात्मा में नहीं पाया जाता; इसलिए 'चैतन्य' लक्षण, आत्मा का है, इसमें कोई भी दोष नहीं आता है।

प्रश्न 38 – तुम्हारी सत्ता किसमें है?

उत्तर – मेरी सत्ता, आत्मा के गुण और पर्याय में है।

प्रश्न 39 – मेरी सत्ता, आत्मा के गुण व पर्याय में है, इसे जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – शरीर की सत्ता; आठ कर्मों की सत्ता; विकारीभावों की सत्ता, मेरी सत्ता नहीं है – ऐसा जानकर, अपनी सत्ता पर दृष्टि देवे, तो धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होवे।

प्रश्न 40 – असंख्यात प्रदेशी आत्मा – ऐसा कहें तो क्या कोई दोष आता है।

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 41 – तेरा पर से होता है, तेरा तुझसे नहीं – क्या ऐसा मानने में कोई दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 42 – लोकव्यापक, वह आत्मा – ऐसा मानने में क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष और अव्याप्तिदोष आते हैं।

प्रश्न 43 – लोक में रहे, वह आत्मा – ऐसा मानने से क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 44 – नित्य, वह आत्मा – ऐसा मानने से क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 45 – गमन करे, वह जीव – ऐसा मानने से क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 46 – जीव के गमन में; स्थिर होने में; अवगाहन मैं और परिणमन में कौन निमित्त हैं ?

उत्तर – इन कार्यों में क्रमशः धर्मद्रव्य; अधर्मद्रव्य; आकाशद्रव्य; कालद्रव्य निमित्त हैं।

प्रश्न 47 – जो नियम जीव पर लागू हो, वह सब द्रव्यों पर भी लागू हो, उनके नाम बताओ ?

उत्तर – (1) द्रव्य का लक्षण 'अस्तित्व' है। (2) 'त्रिकाल कायम रहकर प्रत्येक समय में पुरानी अवस्था का व्यय और नयी अवस्था का उत्पन्न करना।' (3) 'द्रव्य अपने गुण–अवस्थावाला है।' (4) 'द्रव्य के निजभाव का नाश नहीं होता; इसलिए नित्य है और परिणमन करता है; इसलिए अनित्य है।' ये सब द्रव्यों पर लागू होते हैं।

प्रश्न 48 – जीव का लक्षण सामान्य–विशेषगुणवाला कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्ति दोष आता है।

प्रश्न 49 – जीव का लक्षण, उत्पाद–व्यय–ध्रुववाला कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्ति दोष आता है।

प्रश्न 50 – छहढ़ाला में जीव का लक्षण क्या–क्या कहा है ?

उत्तर – जीव का लक्षण ज्ञाता–दृष्टा है। आँख, नाक, कान शरीरादि मूर्तिकरूप नहीं है। चैतन्य, अरूपी, असंख्यात प्रदेशी, जीव की मूर्ति है। उपमारहित है। पुद्गल, आकाश, धर्म–अधर्म, काल से जीव का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है – ऐसा बताया है।

प्रश्न 51 – अपना लक्षण, चैतन्य माने, तो क्या होगा ?

उत्तर – चैतन्य लक्षणवाला 'मैं हूँ' – ऐसा मानते ही सम्यग्दर्शननादि की प्राप्ति होती है, सुख का पता चल जाता है।

प्रश्न 52 – जीव की शोभा किससे है ?

उत्तर – अपने में सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करने में ही जीव की शोभा है।

प्रश्न 53 – जीव की शोभा, लौकिक में ऊँचे पदों से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 54 – जीव की शोभा, शुक्ललेश्या के भावों से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – आगम की उपेक्षा अव्याप्तिदोष और अध्यात्म की अपेक्षा असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 55 – जीव की शोभा, हीरे-जवाहरातों से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 56 – जीव की शोभा, सुन्दर शरीर होने से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 57 – जीव की शोभा, लड़के-लड़कियों से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 58 – जीव की शोभा, सुन्दर महलों में रहने से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 59 –जीव का गमन किससे होता है ?

उत्तर – जीव का गमन, क्रियावतीशक्ति के गमनरूप परिणमन से होता है।

प्रश्न 60 – जीव का गमन, धर्मद्रव्य से अथवा शरीर के कारण ही माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 61 – जीव का गमन, द्रव्यकर्म के कारण माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 62 – जीव का स्थिर होना, किससे होता है?

उत्तर – जीव का स्थिर होना, क्रियावतीशक्ति के स्थिररूप परिणमन के कारण होता है।

प्रश्न 63 – जीव का स्थिर होना अधर्मद्रव्य से; अथवा शरीर के कारण ही माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 64 – जीव का स्थिर होना, द्रव्यकर्म के कारण माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 65 –जीव का स्थान कहाँ हैं?

उत्तर – अपने असंख्यात प्रदेशों में जीव का स्थान है।

प्रश्न 66 – जीव का स्थान, आकाशद्रव्य अथवा शरीर से ही माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 67 – जीव का स्थान, द्रव्यकर्म के कारण माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 68 – जीव का स्थान, गाँव–शहर में रहना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 69 – जीव का परिणमन किस कारण से होता है ?

उत्तर – जीव का परिणमन अपनी योग्यता से होता है।

प्रश्न 70 – जीव का परिणमन कालद्रव्य से ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 71 – जीव का परिणमन, शरीर के कारण माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 72 – जीव का परिणमन, द्रव्यकर्म के कारण माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 73 – जीव में वैभाविकशक्ति है या नहीं ?

उत्तर – जीव में वैभाविकशक्ति है।

प्रश्न 74 – जीव का लक्षण, वैभाविकशक्तिवाला माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है, क्योंकि पुद्गल मैं भी वैभाविक–शक्ति है।

प्रश्न 75 – जीव में क्रियावतीशक्ति है या नहीं ?

उत्तर – जीव में क्रियावतीशक्ति है।

प्रश्न 76 – जीव का लक्षण, क्रियावतीशक्तिवाला माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है, क्योंकि पुद्गल में भी क्रियावती-शक्ति है।

प्रश्न 77 – जीव में सम्यग्दर्शन कब से कब तक होता है ?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक जीवों में सम्यग्दर्शन होता है।

प्रश्न 78 – जीव का लक्षण, सम्यग्दर्शन माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 79 – जीव का लक्षण, देशचारित्र-सकलचारित्र माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 80 – सिद्धदशा क्या है ?

उत्तर – सम्पूर्ण गुणों में क्षायिकरूप परिणमन, सिद्धदशा है।

प्रश्न 81 – जीव का लक्षण, सिद्धदशा माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 82 – जीव में सत्पना हैं या नहीं ?

उत्तर – जीव में सत्पना है।

प्रश्न 83 – जीव का लक्षण, सत्पना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 84 – जीव, नित्य–अनित्यरूप है या नहीं ?

उत्तर – जीव, द्रव्य–गुण की अपेक्षा नित्य है और पर्याय की अपेक्षा अनित्य है।

प्रश्न 85 – जीव का लक्षण, नित्य–अनित्यरूप माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 86 – जीव, एक–अनेकरूप है या नहीं ?

उत्तर – जीव, द्रव्य की अपेक्षा से एक है और गुण–पर्याय की अपेक्षा से अनेक है।

प्रश्न 87 – जीव का लक्षण, एक–अनेकपना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 88 – जीव का कार्य क्या है ?

उत्तर – ज्ञाता–दृष्टा, जीव का कार्य है।

प्रश्न 89 – जीव का कार्य बी.ए. पास होना; प्रातःकाल चार बजे उठना; णमोकारमन्त्र बोलना; कसरत करना; रोटी खाना; व्यापार करना; पद्मासन लगाकर बैठाना; डाक्टरी करना; मुकद्दमा लड़ाना; भक्ताभर–स्त्रोत का पाठ करना; माला जपना; नहाना–धोना; अष्ट–द्रव्य से पूजन करना; दस उपवास करना, माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – इन सभी में असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 90 – जीव में बीमारी क्या है ?

उत्तर – मिथ्यात्व वह जीव की पर्याय में बीमारी है।

प्रश्न 91 – जीव का रोग ब्लडप्रेशर; खाँसी होना; लंगड़ा होना; माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 92 – जीव का क्षेत्र, एक प्रदेशी माने तो क्या दोषा आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 93 – जीव का क्षेत्र, अनन्त प्रदेशी माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 94 – जीव का क्षेत्र क्या है?

उत्तर – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी, जीव का क्षेत्र है।

प्रश्न 95 – असंख्यात प्रदेशी हो, वह जीव है; ऐसा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 96 – जिसमें किसी भी प्रकार का दोष न आवे— ऐसा जीव का लक्षण क्या है?

उत्तर – चैतन्य, जीव का सच्चा लक्षण है क्योंकि निगोद से लगाकर सिद्धभगवान तक सबमें चैतन्य लक्षण पाया जाता है और जीव के अतिरिक्त अन्य किसी में नहीं पाया जाता है। ●●

5

पुद्गलद्रव्य

प्रश्न 1 – पुद्गल किसे कहते हैं?

उत्तर – जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण पाया जाये, उसे पुद्गल कहते हैं।

प्रश्न 2 – पुद्गल के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं, परमाणु और स्कन्ध।

प्रश्न 3 – परमाणु किसे कहते हैं?

उत्तर – जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता, ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्रश्न 4 – स्कन्ध किसे कहते हैं?

उत्तर – दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कन्ध कहते हैं।

प्रश्न 5 – स्कन्ध के कितने भेद हैं?

उत्तर – आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्रश्न 6 – स्कन्ध के कितने भेद हैं?

उत्तर – आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा कार्माणवर्गणा, इत्यादि 22 भेद हैं।

प्रश्न 7 – आहारवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो पुद्गलस्कन्ध, औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन शरीररूप से परिणमन करता है, उसे आहारवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न 8 – आहारवर्गणा इन तीन शरीररूप हो परिणमन करता है या दूसरे किसी प्रकार भी परिणमन करता है ?

उत्तर – आहारवर्गणा मात्र औदारिक, वैक्रियक और आहारक शरीररूप ही परिणमन करता है; दूसरे किसी भी प्रकार से परिणमन नहीं करता है।

प्रश्न 9 – तैजसवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस वर्गणा से तैजसशरीर बनता है, उसे तैजसवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न 10 – भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो पुद्गलस्कन्ध, शब्दरूप परिणमित होता है, उसे भाषावर्गणा कहते हैं।

प्रश्न 11 – मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?

उत्तर – जिस पुद्गलस्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है, उसे मनोवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न 12 – कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस पुद्गलस्कन्ध से कार्माणशरीर बनता है, उसे कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्रश्न 13 – कुछ औदारिक शरीर के नाम बताओ ?

उत्तर – (1) भगवान की प्रतिमा, (2) रोटी, (3) परात, (4) किताब, (5) मकान, (6) सोना, (7) चाँदी, (8) रुपया, (9)

पलंग, (10) कपड़ा, (11) फोटो, (12) मेज आदि, सब जो स्थूलरूप से देखने में आता है, वह सब औदारिकशरीर है।

प्रश्न 14 – प्रतिमा आदि औदारिकशरीर कैसे हैं ?

उत्तर – मनुष्य और तिर्यंचों के शरीर को औदारिकशरीर कहते हैं, सो प्रतिमा आदि एकेन्द्रिय जीव का शरीर है।

प्रश्न 15 – मनुष्य-तिर्यंचों के संयोगरूप शरीर का क्या नाम है, इसका कर्ता कौन और कौन नहीं है ?

उत्तर – औदारिकशरीर है, इसका कर्ता आहारवर्गणा है; जीव तथा अन्य वर्गणाएँ, मनुष्य-तिर्यंचों की आत्मा नहीं है।

प्रश्न 16 – कोई औदारिकशरीर का कर्ता मनुष्य और तिर्यंचों की आत्मा को ही माने तो, इसका फल क्या है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 17 – औदारिकशरीर का कर्ता जीव को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – औदारिकशरीर का कर्ता आहारवर्गणा ही है; जीव से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अशरीरी ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्व पर दृष्टि दें तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो। तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से मनुष्य तिर्यंचों का औदारिकशरीर है – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा नहीं है।

प्रश्न 18 – देव-नारकियों के संयोगरूप शरीर का क्या नाम है; इसका कर्ता कौन और कौन नहीं ?

उत्तर – वैक्रियकशरीर है; इसका कर्ता आहारवर्गणा ही है;

देव–नारकियों की आत्मा तथा अन्य वर्गणाएँ नहीं है।

प्रश्न 19 – कोई वैक्रियकशरीर का कर्ता, देव–नारकियों की आत्मा को ही माने तो इसका क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 20 – वैक्रियकशरीर का कर्ता, देव–नारिकयों की आत्मा को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो?

उत्तर – वैक्रियकशरीर का कर्ता आहारवर्गणा ही है; देव–नारकियों की आत्मा से सर्वथा इसका सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अशरीरी ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, तब अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से, देव–नारिकयों का वैक्रियक शरीर होता है, ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 21 – आहारकऋद्धिधारी महामुनि के संयोगरूप शरीर का क्या नाम है; इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – आहारकशरीर है; इसका कर्ता आहारवर्गणा ही है। आहारकऋद्धिधारी मुनि की आत्मा तथा अन्य वर्गणाएँ नहीं है।

प्रश्न 22 – कोई आहारकशरीर का कर्ता मुनि की आत्मा को ही माने तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 23 – आहारकशरीर का कर्ता, मुनि की आत्मा को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो?

उत्तर – आहारकशरीर का कर्ता आहारवर्गणा ही है; मुनि की

आत्मा से इसका सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अशरीरी ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो; तब अनुपचरित–असद्भूतव्यवहारनय से ऐसा कहा जात सकता है कि ऋद्धिधारी मुनि को आहारकशरीर होता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 24 – निगोद से लगाकर चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों के संयोगरूप शरीरों की कान्ति में निमित्त शरीर का क्या नाम है; इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – तैजसशरीर है; इसका कर्ता तैजसवर्गणा ही है; कोई जीव तथा अन्य वर्गणाएँ नहीं है।

प्रश्न 25 – कोई तैजसशरीर की कर्ता, जीव को ही माने तो इसका क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 26 – तैजसशरीर का कर्ता जीव के माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो?

उत्तर – तैजसशरीर का कर्ता, तैजसवर्गणा ही है; किसी जीव से तथा अन्य वर्गणाओं से इसका सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अशरीरी ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो; तब अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से जीवों के संयोगरूप शरीरों में कान्ति में निमित्त, तैजसशरीर होता है – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 27 – ज्ञानावरणादि आठ कर्मों का तथा एक सौ

अड़तालीस उत्तर प्रकृतियों का क्या नाम है; इनका कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – कार्माणशरीर है; इनका कर्ता, कार्माणवर्गणा ही है; कोई भी जीव तथा अन्य वर्गणाएँ नहीं है।

प्रश्न 28 – कोई कार्माणशरीर का कर्ता, आत्मा को ही माने, तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 29 – कार्माणशरीर का कर्ता, जीव को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो?

उत्तर – कार्माणशरीर का कर्ता, कार्माणवर्गणा ही है; किसी भी जीव का कार्माणशरीर के साथ कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अशरीरी ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति हो, तब अनुपचरितअसद्‌भूतव्यवहारनय से, आठ कर्मों का तथा एक सौ अड़तालीस उत्तरकर्मप्रकृतियों का कर्ता–भोक्ता जीव है – ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 30 – दिव्यध्वनि, गुरु का वचन क्या है; इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – दिव्यध्वनि तथा गुरु का वचन, स्कन्धरूप पर्याय है; इसका कर्ता, भाषावर्गणा ही है; कोई भगवान या गुरु की आत्मा तथा दूसरी वर्गणाएँ नहीं है।

प्रश्न 31 – कोई दिव्यध्वनि का कर्ता, भगवान की आत्मा

को तथा गुरु के वचन का कर्ता गुरु की आत्मा को ही माने तो इस खोटी मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 32 – दिव्यध्वनि और गुरु के वचन का कर्ता, आत्मा को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – दिव्यध्वनि व गुरु के वचन का कर्ता, भाषावर्गणा ही है; किसी भी आत्मा से शब्द का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर अशब्दस्वभावी ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, तब अनुपचरितअसद्भूत व्यवहार से, भगवान की दिव्यध्वनि है, गुरु का वचन है – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा नहीं।

प्रश्न 33 – मन क्या है। इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – मन, स्कन्धरूप पर्याय है; मन का कर्ता, मनोवर्गणा ही है; कोई जीव तथा दूसरी वर्गणाएँ मन का कर्ता नहीं है।

प्रश्न 34 – मन का कर्ता, जीव को माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – मन का कर्ता मनोवर्गणा है; किसी भी जीव से मन का कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, तब अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से, भगवान की दिव्यध्वनि है, गुरु का वचन है – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 35 – बन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस सम्बन्धविशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्धविशेष को बन्ध कहते हैं।

प्रश्न 36 – बन्ध की परिभाषा में क्या-क्या बात आयी- जरा स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – (1) सम्बन्धविशेष होना चाहिए। (2) अनेक वस्तुएँ होनी चाहिए। (3) कहने और देखने में एक आये, परन्तु (4) ज्ञान में जैसी हो, वैसी ही आए, तब बन्ध का सच्चा ज्ञान होता है।

प्रश्न 37 – स्पर्श क्या है, और स्पर्श की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – स्पर्श, पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है और स्पर्श की आठ पर्यायें हैं — हल्का-भारी, ठण्डा-गर्म, रूखा-चिकना, कड़ा-नरम।

प्रश्न 38 – रस, क्या है और रस की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – रस, पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है और खट्टा, मीठा, कड़वा, चरपरा, कषायला, ये रस की पाँच पर्यायें हैं ?

प्रश्न 39 – गन्ध, क्या है और उसकी कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – गन्ध, पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है और सुगन्ध-दुर्गन्ध, गन्ध की दो पर्यायें हैं।

प्रश्न 40 – वर्ण, क्या है और उसकी कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – वर्ण, पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है और काला, पीला, नीला, लाल, सफेद – ये वर्ण की पाँच पर्यायें हैं।

प्रश्न 41 – पुद्गल की इन 20 पर्यायों के जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – अनादि काल से अज्ञानी एक-एक समय करके पुद्गल

की जो बीस पर्यायें हैं, इन्हें अपनी मानकर पागल हो रहा है। उसका पागलपन मिटाने के लिए, बीस पर्यायों का मालिक पुद्गल है; जीव नहीं – ऐसा जानना चाहिए। हे आत्मा! तेरा इनसे किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अपनी ओर दृष्टि कर, तो पुद्गल की बीस पर्यायों का ज्ञान सच्चा कहलायेगा।

प्रश्न 42 – पुद्गल से जीव का सम्बन्ध नहीं है, यह कहाँ आया है?

उत्तर – इष्टोपदेश की 50वीं गाथा में कहा है कि 'जीव जुदा पुद्गल जुदा, यही तत्त्व का सार; अन्य कछु व्याख्यान जो, सब याही का विस्तार।'

प्रश्न 43 – पुद्गलद्रव्य कितने प्रदेशी हैं?

उत्तर – वास्तव में पुद्गलद्रव्य एक प्रदेशी है, परन्तु स्कन्धरूप होने की योग्यता से व्यवहार से संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेशी कहलाता है।

प्रश्न 44 – पुद्गलास्तिकाय का शाब्दिक अर्थ क्या है?

उत्तर – (1) पुद्=जुड़्ना, (2) गल=बिछुड़ना, बिखरना (3) अस्ति= होना, (4) काय=समूह, अर्थात् इकट्ठा होना।

प्रश्न 45 – पुद्गलद्रव्य का पूरा नाम क्या है?

उत्तर – पुद्गलास्तिकाय।

प्रश्न 46 – पुद्, अर्थात् जुड़ना से क्या तात्पर्य है?

उत्तर – (1) जैसे–चार सौ पन्नों की किताब मैंने जोड़ दी। इसमें किताब जुड़ी, 'पुद्' के कारण; मानी मैंने जोड़ी; तो उसने पुद्गलास्तिकाय के 'पुद्' को उड़ा दिया; (2) मैंने रुपया कमाया।

रुपया आया, 'पुद्' के कारण; माना मैंने कमाया; तो पुद्गलास्तिकाय के 'पुद्' को नहीं माना।

प्रश्न 47 – 'पुद्' को कब माना ?

उत्तर – (1) मैंने झाड़ू दी; (2) मैंने दाने इकट्ठे कर दिये, (3) मैंने कमीज के टुकड़ों को जोड़ दिया आदि कथनों में झाड़ू देने, दाने इकट्ठे करने, टुकड़ों को जोड़ना आदि 'पुद्' से हुआ; मुझ से नहीं, तब 'पुद्' को माना।

प्रश्न 48 – 'गल', अर्थात् बिखरना से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जैसे, बच्चे के हाथ में काँच का गिलास था, उसमें दूध था— वह गिर गया। अज्ञानी को लगता है कि बच्चे ने सावधानी नहीं रखी; इसलिए दूध बिखर गया, परन्तु दूध जो बिखरा वह पुद्गलास्तिकाय के 'गल' के कारण है। ऐसा न मानकर, दूध गिरने में बच्चे की असावधानी ढूँढ़ें, तो उसने 'गल' को नहीं माना।

प्रश्न 49 – 'गल' को कब माना ?

उत्तर – जैसे–मैंने लड्डु के दो टुकड़े कर दिए; मैंने कलम के दो टुकड़े कर दिये; मैंने सावधानी न रखी तो दूध गिर गया आदि कथनों में लड्डु और कलम के टुकड़े करना, दूध गिरना–वह 'गल' के कारण हुआ है; मेरे कारण नहीं – ऐसा ज्ञान वर्ते, तो पुद्गास्तिकाय के 'गल' को माना।

प्रश्न 50 – 'अस्ति', अर्थात् होना से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जैसे, (1) मैं हूँ तो शरीर है। (2) मैं हूँ तो शरीर का काम होता है। (3) ज्ञान है तो आँख हैं – आदि कथनों में अज्ञानी ऐसा मानता है कि शरीर है; शरीर का कार्य है, यह सब आत्मा के कारण है; तो उसने पुद्गलास्तिकाय का 'अस्ति' पना नहीं माना।

प्रश्न 51 – 'अस्ति' को कब माना ?

उत्तर – शरीर–आँख, कान, मन, वाणी आदि सब पुद्गलास्तिकाय के अस्तिपने के कारण हैं; मेरे कारण नहीं, तब 'अस्ति' को माना।

प्रश्न 52 – काय, अर्थात् समूह / इकट्ठा होने से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जैसे, लड़की की शादी में हलवाई, बूँदी बना देता है और भाई जाते हैं तो बूँदी के लड्डू बनाकर रख देते हैं – इसमें वास्तव में लड्डू, पुदगलास्तिकाय के 'काय' के कारण बने। अज्ञानी मानता है – मैंने बनाये, तो उसने 'काय' को नहीं माना।

प्रश्न 53 – 'काय' को कब माना ?

उत्तर – (1) दस दवाई मिलाकर, मैंने चूर्ण बनाया, (2) घी–चीनी से मैंने हलुवा बनाया आदि कथनों में चूर्ण, हलवा, पुद्गलास्तिकाय के 'काय' के कारण बना; मेरे कारण नहीं, तब पुद्गलास्तिकाय के 'काय' को माना।

प्रश्न 54 – पुद्गलास्तिकाय से क्या समझना चाहिए ?

उत्तर – (1) पुद्, (2) गल, (3) अस्ति, (4) काय, ये सब पुद्गल का स्वभाव है; इनसे मेरा किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु अज्ञानी, पुद्गल का कार्य, पुद्गल से न मानकर, पुद्गलास्तिकाय को उड़ाता है। हम ऐसी गलती न करें और पुद्गल का कार्य, पुद्गल से ही जाने तो मिथ्यात्व का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो – यह समझना चाहिए।

प्रश्न 55 – पुद्गलद्रव्य कितने हैं ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य अनन्तानन्त हैं।

प्रश्न 56 – पुद्गलद्रव्य अनन्तानन्त हैं, कब माना ?

उत्तर – एक-एक परमाणु, अनन्त गुण-पर्यायों का पिण्ड है। एक परमाणु का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव, दूसरे परमाणु से पृथक है। जैसे, एक किताब है; घड़ी है; लड्डू है; यह स्कन्ध है। इनमें एक -एक परमाणु अपने-अपने अनन्त गुण-पर्यायों सहित वर्तता है, ऐसा ज्ञान होवे; और जब-एक परमाणु, दूसरे परमाणु में कुछ नहीं करता, तो मेरे करने-धरने का प्रश्न ही नहीं, तब पुद्गलद्रव्य अनन्तानन्त हैं, यह माना।

प्रश्न 57 – पुद्गलद्रव्य रूपी है या अरूपी है और रूपी किसे कहते हैं?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य, रूपी है; अरूपी नहीं है। जिसमें स्पर्श-रस -गन्ध-वर्ण पाया जावे, वह रूपी है।

प्रश्न 58 – पुद्गलों में बन्ध क्यों होता हैं?

उत्तर – पुद्गल के स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णादि विशेषगुणों में से स्पर्शगुण के दो अंश ही अधिक हो, तब वहाँ स्निग्ध का स्निग्ध के साथ; रुक्ष का रुक्ष के साथ; तथा स्निग्ध-रुक्ष का परस्पर बन्ध हो जाता है और जिसमें अधिक गुण हों, उसरूप से समस्त स्कन्ध हो जाता है। इस प्रकार पुद्गलों के बन्ध की बात है। पुद्गल के बन्ध में जीव से किसी भी प्रकार का कर्ता-कर्म; भोक्ता-भोग्यसम्बन्ध नहीं है, तब उसने पुद्गल के बन्ध को जाना।

प्रश्न 59 – पुद्गलों का बन्ध कब नहीं होता है?

उत्तर – जिस पुद्गल को स्निग्धता या रुक्षता जघन्यरूप से हो, वह बन्ध के योग्य नहीं है, और एक समान गुणवाले पुद्गलों का बन्ध नहीं होता है।

प्रश्न 60 – तुम परमाणु हो या स्कन्ध?

उत्तर – परमाणु और स्कन्ध तो पुद्गल के भेद हैं; मैं तो जीवद्रव्य हूँ।

प्रश्न 61 – शरीरों के कितने भेद हैं ?

उत्तर – पाँच हैं। औदारिक,वैक्रियक, आहारक, तैजस और कार्माण।

प्रश्न 62 – औदारिकशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिकशरीर कहते हैं।

प्रश्न 63 – वैक्रियकशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो छोटे–बड़े, पृथक–अपृथक् आदि अनेक क्रियाओं को करे –ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियकशरीर कहते हैं।

प्रश्न 64 – आहारकशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – आहारकऋद्धिधारी छठवें गुणस्थावर्ती मुनि को, तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालय आदि की वन्दना करने के लिए मस्तक से एक हाथ प्रमाण, स्वच्छ और सफेद, सप्त धातुरहित, पुरुषाकार जो पुतला निकलता है, उसे आहारकशरीर कहते हैं।

प्रश्न 65 – तैजसशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – औदारिक, वैक्रियक और आहारक, इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करनेवाले शरीर को तैजसशरीर कहते हैं।

प्रश्न 66 – कार्माणशरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के समूह को कार्माणशरीर कहते हैं।

प्रश्न 67 – एक जीव को एक साथ कितने शरीरों का संयोग हो सकता है।

उत्तर – एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीरों का संयोग हो सकता है – स्पष्टीकरण इस प्रकार है – (1) विग्रह गति में तैजस और कार्माण, इन दो शरीरों का संयोग होता है। (2) मनुष्य और तिर्यंचों के औदारिक, तैजस और कार्माण, इन तीन शरीरों का संयोग होता है। (3) ऋद्धिधारी मुनि को औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण – ऐसे चार शरीरों का संयोग होता है। (4) देव और नारकियों को वैक्रियक, तैजस और कार्माण – इन तीन शरीरों का संयोग होता है।

प्रश्न 68 – औदारिकशरीर का कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – औदारिकशरीर का कर्ता, आहारवर्गणा है; जीव नहीं।

प्रश्न 69 – वैक्रियकशरीर का कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – वैक्रियकशरीर का कर्ता, आहारवर्गणा है; देव और नारकी की आत्मा नहीं।

प्रश्न 70 – क्या आहारकशरीर का कर्ता, आहारकऋद्धिधारी मुनि हैं?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि आहारकशरीर का कर्ता, आहारवर्गणा है; मुनि नहीं हैं।

प्रश्न 71 – तैजसशरीर का कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – तैजसशरीर का कर्ता, तैजसवर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 72 – ज्ञानावरणरीय, दर्शनावरणीय आदि कर्मों का कर्ता कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर – ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों का कर्ता, कार्माणवर्गणा हैं; जीव और अन्य वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 73 – आपके कितने शरीर हैं ?

उत्तर – मैं तो आत्मा हूँ; मेरे कोई भी शरीर नहीं है।

प्रश्न 74 – देव-नारकियों के कितने-कितने शरीर हैं ?

उत्तर – देव-नारकी भी आत्मा हैं; उनके कोई भी शरीर नहीं है।

प्रश्न 75 – क्या जीव, भाषा बोलता है ?

उत्तर – भाषा का कर्ता, भाषावर्गणा है; जीव नहीं है।

प्रश्न 76 – रोटी बनाने और रोटी खाने का कर्ता आत्मा है ?

उत्तर – रोटी बनाने और खाने का कर्ता, आहारवर्गणा है; आत्मा नहीं है।

प्रश्न 77 – मोहनीयकर्म का क्षय किस जीव ने किया ?

उत्तर – मोहनीयकर्म के क्षय का कर्ता, कार्माणवर्गणा है; कोई भी जीव नहीं है।

प्रश्न 78 – क्या किताब उठाने-धरने का कर्ता जीव है ?

उत्तर – किताब उठाने और धरने का कर्ता, आहारवर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 79 – सुबह उठना; शौच जाना; नहाना; कपड़े पहिनना-उतारना; बिस्तर बिछाना; इकट्ठा करना; दुकान को सजाना; सोने का हार बनाना; रथ बनाना आदि कार्यों का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – इन सब कार्यों का कर्ता, एकमात्र आहारवर्गणा है; कोई जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 80 – क्या गेहूँ का आटा बाई ने पीसा है ?

उत्तर – गेहूँ का आटा आहारवर्गणा ने किया है; आत्मा बाई और चक्की ने नहीं।

प्रश्न 81 – दिव्यध्वनि के कर्ता कौन-कौन से भगवान हैं ?

उत्तर – दिव्यध्वनि का कर्ता, भाषावर्गणा है; कोई भगवान और कोई दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 82 – मन का कर्ता, संज्ञी जीव है या असंज्ञी ?

उत्तर – मन का कर्ता, मनोवर्गणा है; कोई जीव और कोई दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 83 – पुद्गल के सामान्यगुण कौन-कौन से हैं और कितने हैं ?

उत्तर – अस्तित्व, वस्तुत्व आदि पुद्गल के सामान्यगुण अनेक हैं।

प्रश्न 84 – पुद्गल की पर्यायों के नाम बताओ ?

उत्तर – (1) शब्द, (2) बन्ध, (3) सूक्ष्म, (4) स्थूल, (5) आकार, (6) खण्ड, (7) अन्धकार, (8) छाया, (9) उद्योत, (10) आताप, ये सब पुद्गल की पर्यायें हैं। इनका कर्ता, पुद्गल ही है; जीव नहीं है।

प्रश्न 85 – तुम हल्के हो या भारी ?

उत्तर – मैं तो आत्मा हूँ; हल्का-भारी तो पुद्गलद्रव्य के स्पर्शगुण की पर्यायें हैं।

प्रश्न 86 – अज्ञानी, हल्का-भारी को जानकर क्या करता है ?

उत्तर – राग-द्वेष करता है।

प्रश्न 87– अज्ञानी, हल्का–भारी को जानकर राग–द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर – अपने आपका पता न होने से अज्ञानी, स्पर्शगुण की हल्के – भारी पर्याय को, मैं हल्का हूँ तो द्वेष करता है और भारी होने के लिए पिस्ता, बादाम आदि खाता है तो राग करता हैं। यदि अपने आपको भारी मानता है, चला नहीं जाता है तो द्वेष करता है और हल्का होने पर राग करता है।

प्रश्न 88– इस हल्का–भारी में जो राग–द्वेष होता है, इसका अभाव कैसे हो ?

उत्तर – हल्का–भारी स्पर्शरहित मैं, अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा जाने–माने तो राग–द्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 89– ठण्डा–गरम क्या है ?

उत्तर – ठण्डा–गरम पुद्गलद्रव्य के स्पर्शगुण की पर्यायें हैं।

प्रश्न 90– अज्ञानी, ठण्डा–गर्म कोा जानकर क्या करता है ?

उत्तर – राग–द्वेष करता है।

प्रश्न 91– अज्ञानी जीव, ठण्डा–गरम को जानकर रागद्वेष कैसे करता है ?

उत्तर – (1) मुझे ठण्डी का बुखार है, मुझे गर्मी का बुखार है, –ऐसा जानकर द्वेष करता है। (2) बुखार ठीक हो जावे तो राग करता है।

प्रश्न 92– ठण्डा–गरम सम्बन्धी राग–द्वेष का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – ठण्डा–गरम, स्पर्शगुणरहित मैं, अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा जाने–माने, तो राग–द्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 93 – रूखा–चिकना, कड़ा–नरम क्या है ? इन्हें जानकर अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर – पुद्गल के स्पर्शगुण की पर्यायें हैं। इन्हें जानकर अज्ञानी जीव, राग–द्वेष करता है।

प्रश्न 94– अज्ञानी जीव, रूखा–चिकना–कड़ा–नरम को जानकर राग–द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर – मेरा बदन रूखा है, कड़ा है – ऐसा जानकर द्वेष करता है और चिकना–नरम से राग करता है।

प्रश्न 95– रूखा–चिकना, कड़ा–नरम सम्बन्धी राग–द्वेष का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – रूखा–चिकना, कड़ा–नरम स्पर्शगुणरहित मैं, अस्पर्श –स्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा जाने–माने तो राग–द्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 96– खट्टा–मीठा, कडुवा, कषायला, चरपरा क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के रसगुण की पर्यायें हैं।

प्रश्न 97– अज्ञानी, खट्टा, मीठा, कड़वा, चरपरा, कषायला, को जानकर क्या करता है ?

उत्तर – राग–द्वेष करता है।

प्रश्न 98– अज्ञानी, खट्टा, मीठा, कड़वा, चरपरा, कषायला को जानकर राग–द्वेष कैसे करता है ?

उत्तर – मुझे नींबू खट्टा लगता है; पेड़ा मीठा लगता है; नीम के पत्ते कडुवे लगते हैं आदि में, जिसमें रुचि हो राग करता है और जिसमें अरुचि हो, द्वेष करता है।

प्रश्न 99– रस की पर्यायों से राग–द्वेष का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – खट्टा, मीठा, कड़ुवा, चरपरा, कषायला रसगुण की पर्यायों से रहित मैं, अरसस्वभावी भगवान आत्मा हूँ – ऐसा अनुभव –ज्ञान करे तो राग–द्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 100– सुगन्ध–दुर्गन्ध क्या है और इन्हें जानकर अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर – सुगन्ध–दुर्गन्ध, पुद्गल के गन्धगुण की पर्यायें हैं। अज्ञानी इन्हें जानकर राग–द्वेष करता है।

प्रश्न 101– सुगन्ध और दुर्गन्ध, गन्धगुण की पर्यायों से अज्ञानी रागद्वेष कैसे करता है।

उत्तर – (1) विष्टा आदि दुर्गन्ध में द्वेष करता है। (2) फूल आदि सुगन्ध में राग करता है।

प्रश्न 102– सुगन्ध–दुर्गन्ध आदि में राग–द्वेष का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – मैं आत्मा अगन्धस्वभावी हूँ। मेरा सुगन्ध–दुर्गन्धरूप पुद्गल के गन्धगुण की पर्यायों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जाने–माने,तो रागद्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 103– काला, पीला, नीला, लाल, सफेद क्या है और अज्ञानी इन्हें जानकर क्या करता है ?

उत्तर – पुद्गल के वर्णगुण की पर्यायें हैं, अज्ञानी इन्हें जानकर राग–द्वेष करता है।

प्रश्न 104– काला, पीला, आदि वर्णगुण की पर्यायों को जानकर अज्ञानी, रागद्वेष कैसे करता है ?

उत्तर – मैं काला हूँ तो द्वेष करता है; गोरा होने में राग करता है।

मुझे गोरी घरवाली चाहिए; काली नहीं चाहिए – आदि भावों में पागल बना रहता है।

प्रश्न 105– काला–गोरापने में राग–द्वेष का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – मैं आत्मा, अवर्णस्वभावी भगवान हूँ; काला–गोरा आदि पुद्गलों के वर्णगुण की पर्यायों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जाने–माने, तो राग–द्वेष का अभाव हो।

प्रश्न 106– पुद्गल, जड़ है या नहीं ?

उत्तर – पुद्गल, जड़ है।

प्रश्न 107– यदि हम पुद्गल का लक्षण, जड़ कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 108– पुद्गल का लक्षण, क्षेत्र–क्षेत्रान्तर, अर्थात् गति–स्थितिरूप कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 109– पुद्गल का लक्षण, एक प्रदेशी कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 110– पुद्गल का लक्षण, चेतन कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 111– पुद्गल का लक्षण, गतिहेतुत्वगुण कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 112– जिसमें स्पर्श हो, किन्तु गन्ध–रस–वर्ण न हो – ऐसे पुद्गल का नाम बताओ?

उत्तर – जहाँ स्पर्श होगा, वहाँ नियम से गन्ध–वर्ण–रस होगा ही; इसलिए जिसमें स्पर्श हो, किन्तु गन्धादि न हो, ऐसा पुद्गल होता ही नहीं।

प्रश्न 113– पुद्गल की शुद्धदशा का क्या नाम है?

उत्तर – परमाणु।

प्रश्न 114– पुद्गल की अशुद्धदशा का क्या नाम है?

उत्तर – स्कन्ध।

प्रश्न 115– पुद्गल की तरह अन्य द्रव्यों में भी पायी जायें, वे बातें क्या–क्या हैं?

उत्तर – (1) द्रव्य का लक्षण अस्तित्व है; (2) 'त्रिकाल कायम रहकर, पुरानी अवस्था का व्यय और नयी अवस्था का उत्पाद' करना; (3) अपने गुण–पर्यायवाला है; (4) पुद्गल का नाश नहीं होता; इसलिए नित्य है और परिणमन करता है; इसलिए अनित्य है – ये बातें सभी द्रव्यों पर लागू होती हैं।

प्रश्न 116– संख्या में सबसे ज्यादा कौन द्रव्य हैं?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य हैं।

प्रश्न 117– पुद्गल, गमन करता है या नहीं, यदि गमन करता है तो इसमें निमित्त कौन हैं?

उत्तर – पुद्गल में क्रियावतीशक्ति होने से वह गमन करता है और उसमें धर्मद्रव्य निमित्त है।

प्रश्न 118– पुद्गल के स्थिर होने निमित्त कौन है?

उत्तर – अधर्मद्रव्य निमित्त है।

प्रश्न 119– पुद्गल को अवकाश/अवगाह देने में कौन निमित्त है ?

उत्तर – आकाशद्रव्य निमित्त है।

प्रश्न 120– पुद्गल के परिणमन में कौन निमित्त है ?

उत्तर – कालद्रव्य निमित्त है।

प्रश्न 121– पुद्गल के कार्यों को अपना कार्य माननेवाला कौन है ?

उत्तर – मिथ्यादृष्टि, पापी, जिनमत से बाहर, द्विक्रियावादी है।

प्रश्न 122– स्कन्ध की क्या विशेषता है ?

उत्तर – (1) एक प्रदेश में अनेक रहते हैं। (2) लोकाकाश के एक प्रदेश में सब परमाणु और सूक्ष्म स्कन्ध समा सकते हैं। (3) एक महास्कन्ध, लोकप्रमाण–असंख्यात लोकाकाश के प्रदेशों को रोकता है।

प्रश्न 123– रूपी कौन है और रूपी कौन नहीं हैं ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य, रूपी है; अन्य द्रव्य, रूपी नहीं हैं, अर्थात् अरूपी हैं।

प्रश्न 124– पुद्गल का सच्चा लक्षण क्या है ?

उत्तर – जिसमें स्पर्श–रस–गन्ध–वर्ण पाया जाए, वह पुद्गल कस सच्चा लक्षण है।

प्रश्न 125– पुद्गल का लक्षण, चेतनपना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 126– पुद्गल का लक्षण, गतिहेतुत्वपना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 127– पुद्गलद्रव्य का क्षेत्र कितना है ?

उत्तर – एक प्रदेशी है।

प्रश्न 128– हल्का-भारी आदि किसका कार्य है ?

उत्तर – पुद्गल के स्पर्शगुण का कार्य है।

प्रश्न 129– हल्का-भारी, जीव को माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 130– ठण्डा-गरम, जीव को माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 131– खट्टा-मीठा, जीव को माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 132– सुगन्ध-दुर्गन्ध, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 133– काला-पीला, जीव को माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 134– सात प्रकार का स्वर किसका कार्य है ?

उत्तर – भाषावर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 135– भाषा/शब्द, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 136– आठ कर्म और एक सौ अड़तालीस प्रकृतियाँ किसका कार्य है?

उत्तर – कार्माणवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 137– आठ कर्म और एक सौ अड़तालीस प्रकृति का होना, जीव से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 138– मेज-कुर्सी किसका कार्य है?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 139– मेज-कुर्सी, बढ़ई की आत्मा से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 140– मनुष्य-तिर्यञ्च का संयोगरूप औदारिकशरीर किसका कार्य है?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 141– औदारिकशरीर का कर्ता, मनुष्य-तिर्यंचों की आत्मा को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 142– वैक्रियकशरीर का कर्ता, देव-नारकी की आत्मा को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 143– आहारकशरीर किसका कार्य है?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 144– आहारकशरीर को ऋद्धिधारी मुनि का कार्य मानने में क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 145– तैजसशरीर किसका कार्य है?

उत्तर – तैजसवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 146– तैजसशरीर का कर्ता, संसारी जीवों को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 147– पुद्‌गलों में गमन, जीव से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 148– पुद्‌गल में गमन होना, किसका कार्य है?

उत्तर – पुद्‌गलों की क्रियावतीशक्ति का कार्य है?

प्रश्न 149– पुद्‌गलों में गमन, धर्मद्रव्य से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 150– पुद्‌गलों में स्थिर होना, जीव से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 151– पुद्‌गलों में स्थिर होना, अधर्मद्रव्य से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 152– स्पर्शन, रसना आदि इन्द्रियाँ किसका कार्य हैं?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य हैं।

प्रश्न 153– स्पर्शन, रसना आदि जीव का कार्य माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 154– द्रव्यमन, किसका कार्य है?

उत्तर – मनोवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 155– द्रव्यमन को संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव का कार्य माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 156– दिव्यध्वनि, गुरु का वचन, किसका कार्य है?

उत्तर – भाषावर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 157– दिव्यध्वनि, गुरु का वचन, भगवान की आत्मा से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 158– जितने शास्त्र हैं, ये किसका कार्य है?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 159– शास्त्रों का कर्ता, मुनियों की आत्मा को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 160– भगवान की प्रतिमा किसका कार्य है?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 161– भगवान की प्रतिमा का कर्ता, कारीगर की आत्मा को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 162– किताबें उठना–धरना किसका कार्य है ?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 163– किताबें उठना–धरना, जीव का कार्य माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 164– खाना–पीना, किसका कार्य है ?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 165– खाना–पीना, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 166– बालकपन–जवानी–बुढ़ापा किसका कार्य है ?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 167– बालकपन–जवानी–बुढ़ापा, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 168– लड़की–माता–पत्नी, किसका कार्य है ?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 169– लड़की–माता–पत्नी, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 170– ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम और क्षय किसका कार्य है ?

उत्तर – कार्माणवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 171– ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम–क्षय का कर्ता, जीव को माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 172– आठों कर्मों का क्षय, किसका कार्य है?

उत्तर – कार्माणवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 173– आठों कर्मों का क्षय, जीव से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 174– क्या पुद्गल स्वयं चलकर स्थिर होता है?

उत्तर – हाँ, पुद्गल स्वयं चलकर क्रियावतीशक्ति से स्थिर होता है।

प्रश्न 175– पुद्गलों का लक्षण, स्वयं चलकर स्थिर होना माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 176– पुद्गल, सत् है या नहीं?

उत्तर – हाँ, पुद्गल सत् है।

प्रश्न 177– पुद्गल का लक्षण, सत् माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 178– पुद्गल में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना होता है या नहीं?

उत्तर – पुद्गल में उत्पाद–व्यय ध्रौव्यपना होता है।

प्रश्न 179- पुद्गल का लक्षण, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यपना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 180- क्या पुद्गलद्रव्य में नित्य-अनित्यपना है ?

उत्तर - पुद्गल में नित्य-अनित्यपना है।

प्रश्न 181- पुद्गल का लक्षण, नित्य-अनित्यपना माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 182- पुद्गलों में जुड़ना-बिखरना किसका कार्य है ?

उत्तर - पुद्गल में पुद् के कारण, जुड़ना और गल के कारण, बिखरना होता है।

प्रश्न 183- पुद्गलों में पुद्-गलपना, जीव से माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 184- मोटर-साईकिल का चलना किसका कार्य है ?

उत्तर - आहारवर्गणा की क्रियावतीशक्ति का कार्य है।

प्रश्न 185- पुद्गल का लक्षण, एक प्रदेशी कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 186- पुद्गल का लक्षण, अनन्त प्रदेशी माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - असम्भवदोष आता है। ●●

6

धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य

प्रश्न 1– धर्मद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो स्वयं स्वत: गमन करते हुए जीव और पुद्गलों को गमन करने में निमित्त हो, उसे धर्मद्रव्य कहते हैं; जैसे–गमन करती हुई मछली को गमन करने में पानी।

प्रश्न 2 – अधर्मद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – स्वयं स्वत: गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमें, ऐसे जीव और पुद्गलों को ठहरने में जो निमित्त हो, उसे अधर्मद्रव्य कहते हैं; जैसे–पथिक को ठहरने के लिए वृक्ष की छाया।

प्रश्न 3– अधर्मद्रव्य की परिभाषा में 'गतिपूर्वक स्थिति करे' उसे अधर्मद्रव्य निमित्त है। यदि 'गतिपूर्वक शब्द' निकाल दें तो क्या हानि होगी ?

उत्तर – यदि हम 'गतिपूर्वक' शब्द निकाल दें तो सदैव स्थिर रहनेवाले धर्म, आकाश, काल और स्वयं अधर्मद्रव्य को भी स्थिति में अधर्मद्रव्य के निमित्तपने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा, जोकि गलत है।

प्रश्न 4 – क्या धर्म, अर्थात् पुण्य; और अधर्म, अर्थात् पाप –ऐसा है ?

उत्तर – यहाँ पुण्य–पाप से तात्पर्य नहीं है; यहाँ पर तो धर्म और अधर्मद्रव्य नाम के स्वतन्त्रद्रव्य हैं, उनसे तात्पर्य है।

प्रश्न 5- क्या धर्मद्रव्य, जीव-पुद्गलों को चलाता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; जीव-पुद्गल अपनी-अपनी क्रियावती-शक्ति के गमनरूप परिणमन के कारण चलते हैं; धर्मद्रव्य के कारण नहीं; धर्मद्रव्य तो निमित्तमात्र है।

प्रश्न 6 - क्या अधर्मद्रव्य, जीव और पुद्गलों को ठहराता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; जीव-पुद्गल अपनी-अपनी क्रियावती-शक्ति के स्थिररूप परिणमन के कारण ठहरते हैं, अधर्मद्रव्य के कारण नहीं; अधर्मद्रव्य तो निमित्तमात्र है।

प्रश्न 7- चलने और स्थिर होने की शक्ति कितने द्रव्यों में है ?

उत्तर - मात्र पुद्गल और जीव में ही है; अन्य द्रव्यों में नहीं है।

प्रश्न 8 - क्रियावतीशक्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव और पुद्गल में अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति नाम का गुण है, वह नित्य है। उसकी अपनी योग्यता से कभी गतिरूप, कभी स्थितिरूप पर्यायें होती हैं।

प्रश्न 9 - जब जीव और पुद्गलों में स्वयं स्वतः चलने और स्थिर होने की शक्ति है, तब शास्त्रों में धर्म-अधर्मद्रव्य का वर्णन क्यों किया ?

उत्तर - वस्तुस्वरूप का ज्ञान कराने के लिए :— जहाँ उपादान होता है, वहाँ निमित्त होता ही है। (1) उपादान निज गुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय; भेदज्ञान प्रमाण विधि, बिरला बूझै कोय॥ (2) प्रवचनसार गाथा 95 में भी लिखा है कि 'जिसने पूर्व अवस्था प्राप्त की है, ऐसा (उपादान) द्रव्य भी, जो कि उचित बहिरंग साधनों के सान्निध्य (निकट, हाजरी) के सद्भाव में अनेक प्रकार की बहुत

सी अवस्थाएँ करता है।'

प्रश्न 10– हम बम्बई से देहली आये, तो इसमें शरीर तो अपनी क्रियावतीशक्ति के गतिरूप परिणमन से आया, लेकिन मेरा भाव निमित्त तो है न?

उत्तर – ऐसी मान्यतावाले ने धर्मद्रव्य को उड़ा दिया।

प्रश्न 11–हम ध्यान करने बैठे, शरीर तो अपनी क्रियावती-शक्ति के स्थिररूप परिणमन के कारण स्थिर हुआ, परन्तु मैं निमित्त तो हूँ न?

उत्तर – ऐसी मान्यतावाले ने अधर्मद्रव्य को उड़ा दिया।

प्रश्न 12 – 'उपकार' शब्द का क्या अर्थ है?

उत्तर – उपकार, निमित्त, सहायक आदि पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 13 – कोई कहे – धर्मद्रव्य-अधर्मद्रव्य हमें दिखायी नहीं देते हैं; इसलिए हम नहीं मानते हैं?

उत्तर – अरे भाई! तुम्हारे पड़दादा, दादा वर्तमान में तुम्हें दिखायी नहीं देते तो वे थे या नहीं? तो कहता है वह तो थे। इसी प्रकार सर्वज्ञभगवान के ज्ञान में द्रव्य प्रत्यक्ष आये हैं और अनुमान तर्क आदि से ये हैं – ऐसा पात्र जीव भी जानता है; इसलिए हमें दिखायी नहीं देते; अतः हम नहीं मानते –ऐसा कहना गलत है।

प्रश्न 14– धर्म-अधर्मद्रव्य को अमूर्तस्वभावी क्यों कहा है?

उत्तर – स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण न होने से अमूर्तस्वभावी कहा है।

प्रश्न 15– धर्मद्रव्य का क्षेत्र कितना बड़ा है?

उत्तर – लोक व्यापक असंख्यात प्रदेशी क्षेत्र, धर्मद्रव्य का है।

प्रश्न 16– धर्म-अधर्म के कितने-कितने हिस्से हो सकते हैं?

उत्तर – जो द्रव्य है, वह अखण्ड ही होता है; उसके हिस्से नहीं हो सकते; इसलिए धर्म–अधर्म के हिस्से नहीं हो सकते हैं।

प्रश्न 17– क्या धर्म–अधर्मद्रव्य में भी उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना होता है ?

उत्तर – हाँ होता है, क्योंकि द्रव्य का लक्षण सत् है और जो सत् होता है, उसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना होता है।

प्रश्न 18– क्या धर्मद्रव्य गमन करता है ?

उत्तर – नहीं करता; क्योंकि धर्मद्रव्य में क्रियावतीशक्ति नहीं है और वह अनादि–अनन्त स्थिर है।

प्रश्न 19– धर्मद्रव्य स्वयं गमन नहीं करता, परन्तु जीव–पुद्गलों को तो गमन कराता तो है न ?

उत्तर – नहीं कराता; क्योंकि जो स्वयं गमन नहीं करता, वह दूसरों को गमन कैसे करा सकता है ? कभी नहीं।

प्रश्न 20– क्या अधर्मद्रव्य, जीव–पुद्गलों को स्थिर करता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; परन्तु जीव–पुद्गल स्वयं अपनी क्रियावतीशक्ति के स्थिररूप परिणमन के कारण स्थिर होते हैं, तब अधर्मद्रव्य निमित्त कहा जाता है।

प्रश्न 21– क्या अधर्मद्रव्य गमनपूर्वक स्थिर हुआ है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; अधर्मद्रव्य तो अनादि–अनन्त स्थिर ही है।

प्रश्न 22– धर्मद्रव्य की पहिचान क्या है ?

उत्तर – गतिहेतुत्व इत्यादि।

प्रश्न 23– अधर्मद्रव्य की पहिचान क्या है ?

उत्तर – स्थितिहेतुत्व इत्यादि।

प्रश्न 24– धर्म और अधर्मद्रव्य में क्या अन्तर है ?

उत्तर – धर्मद्रव्य, गति में निमित्त है, जबकि अधर्मद्रव्य, स्थिति में निमित्त है।

प्रश्न 25– लोक–अलोक का विभाग किससे होता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्मद्रव्यों से लोक–अलोक का विभाग होता है।

प्रश्न 26– धर्म–अधर्मद्रव्य का लक्षण, जड़ कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 27– धर्म–अधर्मद्रव्य को चेतन कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 28– धर्म–अधर्मद्रव्य का लक्षण, बहुप्रदेशी कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 29– धर्म–अधर्म की विशेषता क्या है ?

उत्तर – वे (1) नित्य हैं; (2) अवस्थित हैं; (3) अरूपी हैं; और (4) हलन–चलनरहित है।

प्रश्न 30– धर्म–अधर्मद्रव्य का लक्षण, नित्य, अवस्थित, अरूपी और हलन–चलनरहित कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 31– धर्मद्रव्य को गमन में कौन निमित्त है ?

उत्तर – धर्मद्रव्य, गमन करता ही नहीं, तब निमित्त कौन है – यह प्रश्न ही मिथ्या है।

प्रश्न 32– धर्म–अधर्मद्रव्य को स्थिर होने में कौन निमित्त है ?

उत्तर – वे तो अनादि–अनन्त स्थिर ही हैं; इसलिए स्थिर होने में कौन निमित्त है – यह प्रश्न ही अविवेकपूर्ण है।

प्रश्न 33– धर्म–अधर्म को जगह देने में कौन निमित्त है ?

उत्तर – आकाशद्रव्य।

प्रश्न 34– धर्म–अधर्मद्रव्य के परिणमन में कौन निमित्त है ?

उत्तर – कालद्रव्य है।

प्रश्न 35– सिद्धजीव, लोक के आगे क्यों नहीं जाते ? तो कहा कि 'धर्मद्रव्य के अभाव होने से'। आप कहते हैं कि एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य में कुछ करता ही नहीं तो क्या तत्त्वार्थसूत्र में गलत लिखा है ?

उत्तर – जो जीव, धर्मद्रव्य को मानते ही नहीं, उनकी अपेक्षा यह कथन किया है और यह व्यवहारकथन है।

प्रश्न 36– तो फिर सिद्धजीव, अलोक में क्यों नहीं जाते ?

उत्तर – सिद्धजीव, लोक के द्रव्य हैं; इसलिए अलोक में नहीं जाते।

प्रश्न 37 – धर्म–अधर्मद्रव्य को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) शास्त्रों के पढ़ने से पहले अज्ञानी ऐसा मानता था कि मैं शरीर को चलाता हूँ या शरीर मुझे चलाता है; मैं शरीर को ठहराता हूँ या शरीर मुझे ठहराता है। (2) शास्त्र पढ़कर अज्ञानी ने निकाला कि मुझे धर्मद्रव्य चलाता है और अधर्मद्रव्य ठहराता है।

सच्चा ज्ञान होने पर इस खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है। (4) मैं आत्मा हूँ; धर्म, अधर्मद्रव्य से मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जानकर, अपने में स्थिर होवे तो धर्म-अधर्मद्रव्य को जानना सच्चा कहलता है।

प्रश्न 38- धर्मद्रव्य, जीव-पुद्गल को गमन कराता है - ऐसा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर - असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 39- अधर्मद्रव्य, जीव-पुद्गल को स्थिर करता है - ऐसा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर - असम्भवदोष आता है। ●●

7

आकाशद्रव्य

प्रश्न 1 – आकाशद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो जीवादिक, पाँचों द्रव्यों को रहने के लिए स्थान देता है, उसे आकाशद्रव्य कहते हैं। आकाशद्रव्य, सर्व व्यापक है।

प्रश्न 2 – आकाशद्रव्य जगह देता है – यह कथन कैसा है ?

उत्तर – यह व्यवहारनय का कथन है। इसका अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है।'

प्रश्न 3 – आकाश के कितने भेद हैं ?

उत्तर – आकाश, एक ही अखण्ड द्रव्य है।

प्रश्न 4 – तो शास्त्रों में लोकाकाश और अलोकाकाश – यह दो भेद क्यों किए ?

उत्तर – आकाश के जिस हिस्से में जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म और कालद्रव्य रहते हैं, उसे लोकाकाश कहते हैं। बाकी लोकाकाश से अमर्यादित अलोकाकाश है; इसलिए आकाश के दो भेद किये हैं।

प्रश्न 5– लोकाकाश बड़ा है या अलोकाकाश ?

उत्तर – लोकाकाश से अमर्यादित बड़ा अलोकाकाश है।

प्रश्न 6– लोकाकाश और अलोकाकाश के रङ्ग में क्या अन्तर है ?

उत्तर – आकाशद्रव्य, अरूपी है। लोकाकाश और अलोकाकाश

में रङ्ग होता ही नहीं, क्योंकि रङ्ग तो पुद्गल का विशेषगुण है।

प्रश्न 7– लोकोकाश–अलोकाकाश के द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव में क्या अन्तर है?

उत्तर – दोनों का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव एक ही है, क्योंकि वह एक द्रव्य है।

प्रश्न 8– अलोकाकाश में कितने द्रव्य हैं?

उत्तर – एकमात्र शुद्धआकाश ही द्रव्य है और कोई भी द्रव्य नहीं है।

प्रश्न 9– अलोकाकाश में कितने द्रव्य हैं?

उत्तर – एकमात्र आकाशद्रव्य ही है; अन्य कोई भी द्रव्य नहीं है।

प्रश्न 10 – अलोकाकाश में परिणमन होता है या नहीं? यदि होता है तो उसके परिणमन में कौन निमित्त है?

उत्तर – अलोकाकाश में परिणमन होता है और उसके परिणमन में कालद्रव्य निमित्त हैं।

प्रश्न 11– जब अलोकाकाश में कालद्रव्य है ही नहीं, तब वह निमित्त होता है, यह बात कहाँ से आयी?

उत्तर – लोकाकाश में विद्यमान कालाणु, निमित्त हैं।

प्रश्न 12– लोकाकाश के प्रदेशों में एक ही प्रकार के दो द्रव्य कभी भी साथ नहीं रहते, उस द्रव्य का क्या नाम है?

उत्तर – कालद्रव्य हैं, क्योंकि कालद्रव्य, लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर रत्नों की राशि के समान अनादि–अनन्त स्थिर हैं।

प्रश्न 13– कोई कहता है कि देखो, हमने तुम्हें जगह दी, वरना तुम गाड़ी में चढ़ने से रह जाते, क्या यह बात ठीक है?

उत्तर – बिल्कुल ठीक नहीं है; जैसे, एक आदमी फर्स्ट क्लास के डिब्बे में बैठा है। एक आदमी आया –बाबूजी! जरा सी जगह मुझे भी दे दो। उसने कहा चल–चल। थोड़ी देर में बारिस आ गयी और गाड़ी ने सीटी दे दी; तब उस आदमी ने हाथ जोड़कर कहा – बाबूजी! बहुत जरूरी काम है, जरा सी जगह दे दो। उसने कहा, अच्छा आओ, बैठ जाओ। देखो, हमने तुम्हें जगह दी है न! – ऐसी मान्यतावाले ने आकाशद्रव्य को उड़ा दिया, क्योंकि जगह देने में निमित्त आकाशद्रव्य है।

प्रश्न 14– आकाशद्रव्य की पहिचान क्या है?

उत्तर – अवगाहनहेतुत्व इत्यादि।

प्रश्न 15– आकाश का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव क्या है?

उत्तर – (1) आकाश नाम का द्रव्य है। (2) अनन्त प्रदेशी, क्षेत्र है। (3) उसका परिणमन, वह काल है, और (4) उसके अनन्त गुण, वे उसका भाव हैं।

प्रश्न 16– आकाशद्रव्य को मूर्तिक कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 17– आकाशद्रव्य का लक्षण, अमूर्तिक कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न18– आकाशद्रव्य को जगह देने में कौन निमित्त है?

उत्तर – स्वयं ही स्वयं को निमित्त है।

प्रश्न 19 – आकाश को गमन करने में कौन निमित्त है?

उत्तर – आकाशद्रव्य गमन करता ही नहीं, तब कौन निमित्त है – ऐसा प्रश्न ही गलत है।

प्रश्न 20 – क्या आकाश के स्थिर होने में अधर्मद्रव्य निमित्त है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि जो चलकर स्थिर हों, ऐसे जीव और पुद्गल को ही अधर्मद्रव्य स्थिर होने में निमित्त है। जो अनादि –अनन्त स्थिर हैं, उसमें निमित्त का प्रश्न ही गलत है।

प्रश्न 21 – आकाश के परिणमन में कौन निमित्त है?

उत्तर – कालद्रव्य निमित्त हैं।

प्रश्न 22 – प्रदेश किसे कहते हैं?

उत्तर – आकाश के सबसे छोटे भाग को प्रदेश कहते हैं।

प्रश्न 23 – आकाशद्रव्य को चेतन कहें तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 24 – आकाश की विशेषता क्या-क्या है?

उत्तर – (1) नित्य, (2) अवस्थित, (3) अरूपी, (4) हलन-चलनरहित, (5) अनन्त प्रदेशी।

प्रश्न 25 – आकाश को किसने बनाया?

उत्तर – आकाश, अनादि-अनन्त है और जो अनादि-अनन्त है, उसे किसने बनाया, यह प्रश्न मूर्खता भरा है।

प्रश्न 26 – लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश हैं, उसमें (लोकाकाश में) अनन्त जीव; जीव से अनन्तगुणा पुद्गलद्रव्य; एक-एक धर्म-अधर्मद्रव्य और असंख्य कालद्रव्य रहते हैं; तब

अल्पप्रमाण वाले लोकाकाश में इतने अनन्त द्रव्य कैसे रह सकते हैं ?

उत्तर – (1) जैसे, एक दीपक के प्रकाश में अनन्त दीपकों का प्रकाश समा जाता है; (2) गूढ़ के रस से भरे हुए, शीशे के बर्तन में बहुत–सा सोना रह सकता है; (3) दूध से भरे हुए घड़े में उतने ही प्रमाण में राख और सुईयाँ समा जाती हैं; उसी प्रकार लोकाकाश के विशिष्ट अवकाशदानशक्ति के कारण, अनन्त द्रव्य भी लोकाकाश में समा जाते हैं, इसमें कोई बाधा नहीं आती है।

प्रश्न 27 – लोकाकाश का लक्षण, असंख्यात प्रदेशी कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 28 – आकाश का लक्षण, हलन–चलनरहित कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 29 – आकाशद्रव्य को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर – आकाश नाम का एक स्वतन्त्र द्रव्य है। आकाशद्रव्य से मेरा किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है –ऐसा जानकर अपनी ओर सन्मुख होकर, धर्म की प्राप्ति होना, यह आकाशद्रव्य को जानने का लाभ है।

प्रश्न 30 – आकाशद्रव्य सब द्रव्य को जगह देता है – ऐसा माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – असम्भवदोष आता है। ●●

8

कालद्रव्य

प्रश्न 1– कालद्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – अपनी–अपनी अवस्थारूप से स्वयं स्वतः परिणमते हुए जीवादिक द्रव्यों के परिणमन में जो निमित्त हो, उसे कालद्रव्य कहते हैं; जैसे, कुम्हार के चाक के घूमने के लिए लोहे की कीली।

प्रश्न 2 – क्या कालद्रव्य, सब द्रव्यों को परिणमाता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; सब द्रव्य अपनी–अपनी अवस्थारूप से स्वयं स्वतः बदलते हैं, उसमें कालद्रव्य निमित्त है।

प्रश्न 3 – जब सब द्रव्य अपनी–अपनी अवस्थारूप से स्वयं परिणमते हैं, तब कालद्रव्य निमित्त है, उसे बताने की क्या आवश्यकता थी ?

उत्तर – जहाँ उपादान होता है वहाँ निमित्त होता ही है – ऐसा वस्तु का स्वभाव है – यह ज्ञान कराने के लिए निमित्त को बतलाने की आवश्यकता थी।

प्रश्न 4 – कालद्रव्य को समझाने के लिए कीली का दृष्टान्त क्यों दिया हैं ?

उत्तर – जैसे, कीली स्थिर है; उसी प्रकार लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर, एक–एक कालद्रव्य अनादि–अनन्त स्थिर है, यह ज्ञान कराने के लिए कीली का दृष्टान्त दिया है।

प्रश्न 5 – कालद्रव्य कितने प्रदेशी हैं ?

उत्तर – कालद्रव्य, एक प्रदेशी है, बहु प्रदेशी नहीं है।

प्रश्न 6 – शास्त्रों में कालद्रव्य को 'अप्रदेशी' क्यों कहा है ?

उत्तर – एक प्रदेश, गिनती में न आने से कालद्रव्य को अप्रदेशी कहा है।

प्रश्न 7– कालद्रव्य का लक्षण, सत् कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – अतिव्याप्ति दोषआता है।

प्रश्न 8 – कालद्रव्य में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना है या नहीं ?

उत्तर – अवश्य ही है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना होता है और कालद्रव्य भी एक द्रव्य हैं।

प्रश्न 9 – कालद्रव्य के कितने भेद हैं ?

उत्तर – निश्चयकाल और व्यवहारकाल – ऐसे दो भेद हैं।

प्रश्न 10 – निश्चयकाल किसे कहते हैं ?

उत्तर – कालद्रव्य को निश्चयकाल कहते हैं।

प्रश्न 11– व्यवहारकाल किसे कहते हैं ?

उत्तर – समय, पल, घड़ी, दिन, महीना, वर्ष आदि को व्यवहारकाल कहते हैं।

प्रश्न 12– कालद्रव्य, अस्तिकाय क्यों नहीं है ?

उत्तर – बहुप्रदेशी न होने से कालद्रव्य, अस्तिकाय नहीं है। कालद्रव्य की अस्ति है परन्तु कायपना नहीं है।

प्रश्न 13– क्या एक कालद्रव्य और दूसरे कालद्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव एक ही है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; सब कालद्रव्यों का द्रव्य-क्षेत्र-कालभाव पृथक-पृथक है।

प्रश्न 14- कालद्रव्य की विशेषता क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) प्रत्येक कालद्रव्य, एक प्रदेशी है। (2) अरूपी है, (3) अस्ति है; काय नहीं, (4) नित्य है, (5) अवस्थित है।

प्रश्न 15 – कालद्रव्य को स्थान देने में कौन निमित्त है ?

उत्तर – लोकाकाश निमित्त है।

प्रश्न 16 – कालद्रव्य, किसको निमित्त है ?

उत्तर – स्वयं स्वतः परिणमते हुए सब द्रव्यों को निमित्त है।

प्रश्न 17 – लोकाकाश के एक प्रदेश में रहनेवाले अनन्त द्रव्यों के परिणमन में कौन निमित्त है ?

उत्तर – वहाँ कालद्रव्य ही निमित्त है।

प्रश्न 18 – कालद्रव्य को गमन और स्थिरता में कौन निमित्त है ?

उत्तर – कालद्रव्य, अनादि-अनन्त स्थिर है। वह गमन करे या गमनपूर्वक स्थिर हो – ऐसा उसमें होता ही नहीं है।

प्रश्न 19 – पंचम काल में मुक्ति नहीं होती-ऐसा क्यों कहा है ?

उत्तर – (1) पंचम काल में दृष्टिमुक्ति होती है और मोहमुक्त -मुक्ति, विदेहमुक्ति, जीवनमुक्ति नहीं होती है क्योंकि पंचम काल में उत्पन्न होनेवाला जीव, इतना तीव्र पुरुषार्थ नहीं कर सकेगा – ऐसा भगवान की वाणी में आया है। (2) जम्बुकुमार आदि पंचम काल से ही मोक्ष गए हैं और विदेहक्षेत्र के मुनि को कोई पूर्व भाव का बैरी देव उठा लावे, वे यहाँ मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

प्रश्न 20 – कालद्रव्य, सब द्रव्यों को परिणमन कराता है – ऐसा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 21– कालद्रव्य का लक्षण, एक प्रदेशी कहे तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अतिव्याप्तिदोष आता है।

प्रश्न 22– कालद्रव्य का लक्षण, अनन्त प्रदेशी कहें तो क्या देष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 23 – कालद्रव्य का लक्षण, असंख्यात प्रदेशी कहे तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 24 – कालद्रव्य की पहिचान, वर्ष-महिना आदि से माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – असम्भवदोष आता है।

प्रश्न 25 – कालद्रव्य को जानने का क्या लाभ है?

उत्तर – कालद्रव्य, स्वतन्त्र द्रव्य है, इससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर अपना आश्रय ले तो कालद्रव्य को जानने का लाभ है। ●●

९

अभ्यास : द्रव्य शब्द से द्रव्यों की पहिचान

प्रश्न 1 – गिरनारपर्वत के ऊपर से, नेमिनाथ भगवान, मोक्ष पधारे — इससे कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – आकाशद्रव्य; जीवद्रव्य; धर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 2 – बाहुबलीस्वामी, चन्द्रगिरी पहाड़ पर, खड्गासन, विराजे हैं, इससे कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य; आकाश; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 3 – मैं सम्मेदशिखर की यात्रा को जाता हूँ; इससे कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य; आकाशद्रव्य; धर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 4 – प्रभात समय में श्री मन्दिरजी होकर आओ, इस पर से कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – कालद्रव्य; आकाश; धर्मास्तिकाय; प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 5 – स्वर्णपुरी में, सुन्दर मानस्तम्भ, स्थित है; इससे कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – आकाशद्रव्य; पुद्गलद्रव्य; अधर्मद्रव्य, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 6 – आत्मा का हित तुरन्त करो; इससे कौन–कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; कालद्रव्य, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 7– आठ वर्ष का, मनुष्य, महाविदेहक्षेत्र से, मोक्ष जाता है, इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं?

उत्तर – कालद्रव्य; जीवद्रव्य; आकाशद्रव्य; धर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 8– भगवान सिद्धालय में सादि-अनन्त स्थिर रहते हैं; इस से कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; आकाश; काल; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 9– महावीरप्रभु, पावापुरी से, चौथे काल में मोक्ष पधारे; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य; आकाश; काल; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 10– सीमन्धरप्रभु, समवसरण में, छह-छह घड़ी, उपदेश देते हैं, इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; आकाश; काल; पुद्‌गल, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 11– गौतमस्वामी, मानस्तम्भ के पास आये तो हृदय पलटा; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; पुद्‌गल; धर्मास्तिकाय; कालद्रव्य, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 12– इन्द्र, सदैव सुरालय में से तीर्थङ्करदेव के दर्शन को आते हैं; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं?

उत्तर – जीव; काल; आकाश; जीव-पुद्‌गल; धर्मद्रव्य, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 13– कुन्दकुन्दाचार्य, कुन्दनगिरी पर निजध्यान में स्थित हैं; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; आकाश; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 14– मुनिवर, ग्रीष्म में पहाड़ पर ध्यान में बैठे हैं; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीव; काल; आकाश; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 15– नन्दीश्वरधाम में शाश्वत जिनमन्दिर स्थित हैं; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – आकाश; काल; पुद्गल; अधर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 16– समवसरण में बैठे हुए हों, तब जीवों को तीव्र कषाय नहीं होती; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – आकाश; अधर्मद्रव्य; काल; जीव, प्रमाणित होते हैं।

प्रश्न 17– जीव, संसार से मोक्ष पधारा; इससे कौन-कौन से द्रव्य, प्रमाणित होते हैं ?

उत्तर – जीवद्रव्य; आकाश; धर्मास्तिकाय, प्रमाणित होते हैं।

●●

10

गुण : स्वरूप, भेद एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1 – गुण किसे कहते हैं?

उत्तर – जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं, उन्हें गुण कहते हैं।

प्रश्न 2 – गुण के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं?

उत्तर – शक्ति, लक्षण, विशेष, धर्म, ध्रुव, अर्थ, अन्वयी, सहभू, नित्य, अवस्थित गुण के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 3 – गुण की व्याख्या में 'द्रव्यवाचक' शब्द क्या है?

उत्तर – द्रव्य के।

प्रश्न 4 – गुण की व्याख्या में 'क्षेत्रवाचक' शब्द क्या है?

उत्तर – सम्पूर्ण भागों में।

प्रश्न 5 – गुण की व्याख्या में 'कालवाचक' शब्द क्या है?

उत्तर – सम्पूर्ण अवस्थाओं में।

प्रश्न 6 – गुण की व्याख्या में 'भाववाचक' शब्द क्या है?

उत्तर – गुण कहते हैं।

प्रश्न 7 – गुण की व्याख्या में 'सम्पूर्ण भागों में' क्या-क्या सूचित करता है?

उत्तर – (1) गुण, द्रव्य के पूरे हिस्से में होता है; कम – ज्यादा

में नहीं होता है; (2) जितना बड़ा द्रव्य का क्षेत्र है, उतना ही बड़ा गुण का क्षेत्र है।

प्रश्न 8 – गुण की व्याख्या में 'सम्पूर्ण अवस्थाओं में' क्या-क्या सूचित करता है?

उत्तर – (1) गुण, द्रव्य से कभी भी, किसी भी हालत में पृथक नहीं होता है; (2) द्रव्य अनादि-अनन्त है तो उसके गुण भी अनादि अनन्त हैं।

प्रश्न 9 – द्रव्य पहले या गुण पहले?

उत्तर – द्रव्य और गुण दोनों अनादि-अनन्त हैं; अतः पहले और बाद का प्रश्न ही मिथ्या है।

प्रश्न 10 – द्रव्य में गुण किस प्रकार हैं, दृष्टान्त देकर बताओ?

उत्तर – (1) जैसे – गुड़ में मिठास है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं। (2) जैसे – अग्नि में उष्णपना है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं। (3) जैसे – पानी में ठण्डापना है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं। (4) जैसे – सोने में पीलापना है, वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।

प्रश्न 11 – द्रव्य के पूरे हिस्से में रहनेवाले कौन हैं?

उत्तर – गुण हैं।

प्रश्न 12 – द्रव्य की सब हालतों में रहनेवाले कौन हैं?

उत्तर – गुण हैं।

प्रश्न 13 – एक गुण, द्रव्य के कितने भाग में है?

उत्तर – सम्पूर्ण भाग में है, क्योंकि गुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भाग में होता है।

प्रश्न 14 – एक गुण, द्रव्य के कितने प्रदेशों में है ?

उत्तर – सम्पूर्ण प्रदेशों में है।

प्रश्न 15 – द्रव्य के एक प्रदेश में कितने गुण हैं ?

उत्तर – सम्पूर्ण (अनन्त) गुण हैं।

प्रश्न 16 – गुण कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर – दो प्रकार के हैं — सामान्य और विशेष।

प्रश्न 17 – सामान्यगुण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो सर्व द्रव्यों में हों, उन्हें सामान्यगुण कहते हैं।

प्रश्न 18 – विशेषगुण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो सर्व द्रव्यों में न हों, किन्तु अपने-अपने द्रव्य में हों, उन्हें विशेषगुण कहते हैं।

प्रश्न 19 – सामान्यगुणों का क्षेत्र बड़ा है या विशेषगुणों का ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य में सामान्यगुणों का और विशेषगुणों का क्षेत्र एक ही होता है क्योंकि गुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में रहता है।

प्रश्न 20 – प्रत्येक द्रव्य में रहनेवाले गुणों को भिन्न-भिन्न किस आधार से करोगे ?

उत्तर – प्रत्येक गुण के भिन्न-भिन्न लक्षणों से पृथक करेंगे।

प्रश्न 21 – किस अपेक्षा से द्रव्य से गुण पृथक हैं ?

उत्तर – द्रव्य से गुण किसी भी अपेक्षा से पृथक नहीं हैं – क्योंकि गुणों और द्रव्यों का क्षेत्र और काल एक ही है।

प्रश्न 22 – ऐसे द्रव्य का नाम बताओ, जिसमें सामान्यगुण तो हों किन्तु विशेषगुण न हों ?

उत्तर – ऐसा कोई भी द्रव्य नहीं है, क्योंकि सामान्य और विशेष –गुणों के समूह को ही द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 23 – द्रव्य में सामान्यगुण न हों तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – यदि द्रव्य में सामान्यगुण न हो तो द्रव्यपना ही न रहे।

प्रश्न 24 – द्रव्य में विशेषगुण न हो, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – द्रव्य में विशेष गुण न हो, तो एक द्रव्य दूसरे द्रव्य से पृथक् मालूम न हो अर्थात् विशेष गुण न हो तो किसी द्रव्य को दूसरे द्रव्य से भिन्न नहीं किया जा सकता है।

प्रश्न 25 – द्रव्य और गुण में संख्या भेद है या नहीं ?

उत्तर – है; द्रव्य, एक है; गुण, अनेक हैं, यह संख्या भेद है।

प्रश्न 26 – एक द्रव्य और उसके गुणों में द्रव्य–क्षेत्र–काल –भाव की तुलना करो ?

उत्तर – एक द्रव्य और उसके गुणों का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है, किन्तु भावों में अन्तर है।

प्रश्न 27 – प्रत्येक गुण के कार्यक्षेत्र की मर्यादा क्या है ?

उत्तर – प्रत्येक गुण अपने स्वद्रव्य के क्षेत्र में निरन्तर अपना ही कार्य करता है; कभी पर का या परगुण का कार्य नहीं करता–ऐसी प्रत्येक गुण के कार्यक्षेत्र की मर्यादा है।

प्रश्न 28 – ज्ञानगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – ज्ञानगुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 29 – क्या रसगुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं! क्योंकि रसगुण, पुद्गल का गुण है,

जीव का नहीं; इसलिए रसगुण, पुद्गलद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है; जीव में नहीं।

प्रश्न 30 – चारित्रगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – चारित्रगुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थओं में रहता है।

प्रश्न 31 – गतिहेतुत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – गतिहेतुत्वगुण, धर्मद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 32 – परिणमनहेतुत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – परिणमनहेतुत्वगुण, कालद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 33 – गन्धगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – गन्धगुण, पुद्गलद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 34 – वैभाविकशक्ति को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – वैभाविकशक्ति, जीव तथा पुद्गल के सम्पूर्ण भागों में और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहती है।

प्रश्न 35 – अस्पर्शगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – अस्पर्शगुण, पुद्गल, द्रव्य को छोड़कर, शेष जीवादिक पाँचों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 36 – क्या श्रद्धागुण सम्पूर्ण द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है ?

उत्तर – नहीं भाई! श्रद्धागुण, मात्र जीवद्रव्य में पाया जाता है, सब द्रव्यों में नहीं पाया जाता है। श्रद्धागुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है; बाकी द्रव्यों में नहीं रहता – ऐसा जानना चाहिए।

प्रश्न 37 – क्या क्रियावतीशक्तिगुण, धर्मद्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है ?

उत्तर – धर्मद्रव्य में नहीं, किन्तु क्रियावतीशक्ति, जीव तथा पुद्गल के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 38 – क्या गतिहेतुत्वगुण, धर्मद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है ?

उत्तर – हाँ, बिल्कुल ठीक है।

प्रश्न 39 – आनन्दगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – आनन्दगुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 40 – वर्णगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – वर्णगुण, पुद्गलद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 41 – अवगाहनहेतुत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – अवगाहनहेतुत्वगुण, आकाशद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 42 – अगन्धगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – अगन्धगुण, पुद्‌गलद्रव्य को छोड़कर शेष जीवादिक पाँचों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 43 – दर्शनगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – दर्शनगुण, जीवद्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 44 – वस्तुत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – वस्तुत्वगुण, सब द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 45 – प्रदेशत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण, प्रत्येक द्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 46 – अगुरुलघुत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वगुण, प्रत्येक द्रव्य को सम्पूर्ण भागों में और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 47 – भोक्तृत्व–अभोक्तृत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – भोक्तृत्व–अभोक्तृत्वगुण, प्रत्येक द्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 48 – कर्तृत्व और अकर्तृत्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर – कर्तृत्व और अकर्तृत्वगुण, सभी द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों

और उनकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।

प्रश्न 49 – गुण की विशेषता क्या-क्या है ?

उत्तर – (1) गुण, द्रव्य के आश्रय से रहते हैं; (2) गुण, द्रव्य के विशेष हैं; (3) गुण स्वयं निर्विशेष हैं; (स्वयं दूसरे गुणों से रहित हैं;) (4) सर्व गुण, द्रव्य के प्रदेशों में इकट्ठे रहते हैं; (5) गुण, कंथचित् परिणमनशील हैं; (6) गुण, कंथचित् परिणमनशील नहीं हैं।

प्रश्न 50 – गुणों के जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – गुणों के द्वारा प्रत्येक वस्तु भिन्न-भिन्न हाथ पर रक्खे हुए आँवले की तरह दृष्टि में आ जाती है, जिससे भेदविज्ञान की प्राप्ति हो जाती है और अनादि से एक-एक समय करके पर में कर्तापने और भोक्तापने की बुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 51 – एक द्रव्य में कितने गुण होते हैं ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं।

प्रश्न 52 – प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं, उसका कोई माप है ?

उत्तर – (1) जीवद्रव्य, अनन्त हैं; (2) जीव से अनन्तानन्त गुणा अधिक, पुद्गलद्रव्य हैं; (3) पुद्गलद्रव्य से अनन्तानन्त गुणे, तीन काल के समय हैं; (4) तीन काल के समयों से अनन्त गुणे, आकाशद्रव्य के प्रदेश हैं; (5) आकाशद्रव्य के प्रदेशों अनन्तगुणा अधिक, एक द्रव्य में गुण हैं।

प्रश्न 53 – गुणों को 'सहभू' क्यों कहते हैं ?

उत्तर – सब गुण मिलकर साथ-साथ रहते हैं; पर्यायों की तरह क्रम से नहीं होते हैं; इसलिए भगवान ने गुणों को 'सहभू' कहा है।

प्रश्न 54 – भगवान् उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र में गुण का लक्षण क्या बताया है ?

उत्तर – तत्त्वार्थसूत्र के पाँचवें अध्याय के 41वें सूत्र में 'द्रव्याश्रयानिर्गुणाः गुणाः' अर्थात्, जो द्रव्य के आश्रय से हो, और स्वयं दूसरे गुणों से रहित हों, वह गुण है – ऐसा बताया है।

प्रश्न 55 – जैसे – गुण, द्रव्य के आश्रय से हैं, वैसे पर्याय भी द्रव्य के आश्रित रहती है; इसलिए पर्याय में भी गुण का लक्षण घटने से अतिव्याप्तिदोष आता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं आता है, क्योंकि 'द्रव्याश्रयः' पद होने से, अर्थात् जो नित्य द्रव्य के आश्रित रहता है, उस गुण की बात है; पर्याय की बात नहीं। इसलिए 'द्रव्याश्रयः' पद से पर्याय इसमें नहीं आती क्योंकि पर्याय एक समयवर्ती ही होती है; इसलिए गुण के लक्षण में अतिव्याप्तिदोष नहीं आता।

प्रश्न 56 – गुण को समझने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर – (1) प्रत्येक गुण अपने-अपने द्रव्य के अश्रित ही रहता है; (2) एक द्रव्य का गुण, दूसरे द्रव्य का या गुण का कुछ नहीं कर सकता है; (3) एक द्रव्य का गुण, दूसरे द्रव्य को या गुण को प्रेरणा असर, मदद नहीं कर सकता है; (4) एक द्रव्य का गुण, उसी द्रव्य के दूसरे गुण में भी कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि भाव अलग -अलग है।

प्रश्न 57 – गुणों का स्वरूप समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर – मैं जीवद्रव्य हूँ, और अपने अनन्त गुणों से भरपूर हूँ। मैं तीनों काल श्रीमन्त हूँ, रंक नहीं हूँ -ऐसा जानकर अपने गुणों के पिण्ड भगवान में लीन होना, यह गुणों का स्वरूप समझने का लाभ है।

प्रश्न 58 – गुण को अन्वयी क्यों कहा है?

उत्तर – (1) सब गुणों का अन्वय द्रव्य, एक है; सब मिलकर इकट्ठे रहते हैं। (2) सब अनेक होकर भी अपने को एकरूप से प्रगट कर देते हैं; इसलिए गुण को अन्वयी कहा है।

प्रश्न 59 – गुण को 'अर्थ' क्यों कहा है?

उत्तर – (1) गुण, स्वतः सिद्ध परिणामी है; (2) उत्पाद-व्यय ध्रौव्ययुक्त है; इसलिए गुण को 'अर्थ' कहा है।

प्रश्न 60 – छह द्रव्यों में पाया जाता है, उसे क्या कहते हैं?

उत्तर – सामान्यगुण कहते हैं?

प्रश्न 61 – सामान्यगुण कितने हैं?

उत्तर – अनेक हैं परन्तु मुख्य छह हैं।

प्रश्न 62 – जबकि सामान्यगुण अनेक हैं तो उनमें से छह को मुख्य क्यों कहा है?

उत्तर – यहाँ हमें मोक्षमार्ग की सिद्धि करनी है, इसलिए जिनके जानने से मोक्षमार्ग की सिद्धि हो और जिनको जाने बिना मोक्षमार्ग की सिद्धि न हो; उन्हीं को यहाँ मुख्य किया है।

प्रश्न 63 – मुख्य छह सामान्यगुण कौन-कौन से हैं?*

उत्तर – (1) अस्तित्वगुण, (2) वस्तुत्वगुण, (3) द्रव्यत्वगुण, (4) प्रमेयत्वगुण, (5) अगुरुलघुत्वगुण, और (6) प्रदेशत्वगुण।

प्रश्न 64 – जीवद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं?

उत्तर – जीवद्रव्य के विशेषगुण भी अनेक हैं परन्तु मुख्य ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सुख, क्रियावतीशक्ति, वैभाविकशक्ति इत्यादि हैं।

---

* आगामी प्रकरणों में प्रत्येक सामान्यगुणों पर विस्तृत प्रश्नोत्तर दिये गये हैं।

प्रश्न 65 – पुद्गलद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – पुद्गल के विशेषगुण भी अनेक हैं, परन्तु मुख्य स्पर्श, रस, गन्ध वर्ण, क्रियावतीशक्ति, वैभाविकशक्ति इत्यादि हैं।

प्रश्न 66 – धर्मद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – धर्मद्रव्य के विशेषगुण भी अनेक हैं परन्तु मुख्य गतिहेतुत्व इत्यादि हैं।

प्रश्न 67 – अधर्मद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – अधर्मद्रव्य के विशेषगुण भी अनेक हैं परन्तु मुख्य स्थितिहेतुत्व इत्यादि हैं।

प्रश्न 68 – आकाशद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – आकाशद्रव्य के विशेषगुण भी अनेक हैं परन्तु मुख्य अवगाहनहेतुत्व इत्यादि हैं।

प्रश्न 69 – कालद्रव्य के विशेषगुण कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – कालद्रव्य के विशेषगुण भी अनेक हैं परन्तु मुख्य परिणमनहेतुत्व इत्यादि हैं।

प्रश्न 70 – विशेषगुणों में 'इत्यादि' शब्द क्या सूचित करता है ?

उत्तर – 'इत्यादि' शब्द और भी अनेक विशेषगुण हैं – यह सूचित करता है।

प्रश्न 71 – प्रत्येक गुण के कार्यक्षेत्र की मर्यादा उसी के अन्दर है, उससे बाहर नहीं है, इसे स्पष्ट करके समझाइए?

उत्तर – (1) ज्ञानगुण का कार्य, ज्ञानगुण से ही होगा; श्रद्धा, चारित्र आदि से नहीं होगा; (2) श्रद्धागुण का कार्य, श्रद्धागुण से ही होगा, ज्ञान-चारित्रादि से नहीं होगा; (3) चारित्रगुण का कार्य, चारित्रगुण से ही होगा, ज्ञान-श्रद्धादि से नहीं होगा। उसी प्रकार पुद्गल में स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णादिक हैं परन्तु (4) स्पर्शगुण का कार्य, स्पर्शगुण से ही होगा; रस-गन्धादि से नहीं होगा; (5) रसगुण का कार्य, रसगुण से ही होगा; स्पर्श, वर्णादि से नहीं होगा; (6) धर्मद्रव्य में गतिहेतुत्वगुण का कार्य, गतिहेतुत्व से ही होगा; बाकी गुणों से नहीं। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक गुण का कार्य, उससे बाहर नहीं होता है।

प्रश्न 72 – एक गुण का दूसरे गुण के कार्य से सम्बन्ध क्यों नहीं है?

उत्तर – प्रत्येक गुण का कार्य अलग-अलग है, अर्थात् भाव में अन्तर होने से सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 73 – क्या एक गुण की वर्तमान पर्याय का, उसी गुण की भूत-भविष्य की पर्याय से सम्बन्ध हैं?

उत्तर – नहीं है; क्योंकि प्रत्येक समय का कार्य भिन्न-भिन्न है; कार्य एक समय का है।

प्रश्न 74 – जब एक गुण की पर्याय का, उसी गुण की भूत-भविष्य की पर्याय से सम्बन्ध नहीं है तो एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से सम्बन्ध का प्रश्न ही नहीं है। तब लोग एक द्रव्य से, दूसरे द्रव्य का सम्बन्ध क्यों मानते हैं?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए लोग एक द्रव्य से, दूसरे द्रव्य का सम्बन्ध मानते हैं।

प्रश्न 75 – एक द्रव्य से, दूसरे द्रव्य का कोई सम्बन्ध नहीं है, क्या जिनेन्द्रभगवान ने कहीं ऐसा कहा है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 84 तथा 86 में वह सर्वज्ञ के मत से बाहर है और द्विक्रियावादी कहा है तथा कलश 200 में स्पष्ट कहा है कि 'नास्ति सर्वोऽपि सम्बन्ध'।

प्रश्न 76 – छह द्रव्य और उनके गुणों के जानने का फल क्या है ?

उत्तर – (1) स्व–पर का भेदविज्ञान इसका फल है। (2) पर में कर्ता–भोक्ता की बुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति, इसका फल है।

प्रश्न 77 – द्रव्य के सामान्य और विशेषगुणों से द्रव्य की परिभाषा बताओ ?

उत्तर – सामान्य और विशेषगुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न 78 – मैं गुणस्वरूप हूँ, नौ पक्षस्वरूप नहीं हूँ, इसका फल क्या होगा ?

उत्तर – मैं गुण सामान्य हूँ ऐसा अनुभव–ज्ञान–आचरण, क्रम से मोक्ष का कारण है और नौ पक्षरूप माननेवाला, क्रम से निगोद की प्राप्ति करता है।

अनादि से अनन्त काल जिन–जिनवर और जिनवरवृषभों ने गुण का स्वरूप बताया है, बता रहे हैं और बतायेंगे, उन सबके चरणों में नमस्कार। ●●

11

अस्तित्वगुण

कर्ता जगत का मानता जो कर्म या भगवान को,
वह भूलता है लोक में, अस्तित्वगुण के ज्ञान को;
उत्पाद-व्यययुत वस्तु है, फिर भी सदा ध्रुवता धरे,
अस्तित्वगुण के योग से, कोई नहीं जग में मरे।

प्रश्न 1- अस्तित्वगुण क्या है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 2- अस्तित्वगुण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस शक्ति के कारण, द्रव्य का कभी नाश न हो और किसी से भी उत्पन्न न हो, उस शक्ति को अस्तित्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 3- अस्तित्वगुण को गुण की परिभाषा में लगाओ ?

उत्तर - अस्तित्वगुण छहों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 4- इसे जानने से हमें क्या लाभ है ?

उत्तर - किसी भी द्रव्य का, चाहे जड़ हो या चेतन, कभी भी नाश नहीं होता और न कभी उत्पन्न ही होता है, अर्थात् (1) सब द्रव्य, अनादि-अनन्त हैं। (2) सभी द्रव्य, अजर-अमर हैं - ऐसा पता चल जाता है।

प्रश्न 5- किसी भी द्रव्य का नाश और उत्पन्न होना नहीं है;

सभी द्रव्य अनादि-अनन्त और अजर-अमर हैं, इससे हमें क्या लाभ है ?

उत्तर - सब द्रव्य, अनादि-अनन्त और अजर-अमर हैं तो मेरा भी कभी नाश नहीं होता है और मैं भी कभी उत्पन्न नहीं होता हूँ; इस प्रकार मैं अनादि-अनन्त और अजर-अमर भगवान हूँ - ऐसा पता चल जाता है।

प्रश्न 6- अस्तित्वगुण को जानने से और क्या लाभ रहा ?

उत्तर - सात प्रकार के भयों का अभाव हो जाता है।

प्रश्न 7- सात प्रकार के भय कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - (1) इस लोक का भय, (2) परलोक का भय, (3) वेदनाभय, (4) अरक्षाभय, (5) अगुप्तिभय, (6) मरणभय, (7) आकस्मिकभय।

प्रश्न 8- अस्तित्वगुण को जानने से और क्या लाभ रहा ?

उत्तर - अनादि काल से मिथ्यादृष्टि की ऐसी बुद्धि थी कि इस जगत को ईश्वर बनाता है, रक्षा करता है, नाश करता है। अस्तित्वगुण को जानने से पता चलता है कि किसी का नाश और उत्पन्न होना नहीं होता; सब द्रव्य अनादि-अनन्त हैं, तब ईश्वर बनाता है, रक्षा करता है, और नाश करता है - ऐसी मिथ्याबुद्धि का अभाव हो जाता है।

प्रश्न 9- अस्तित्वगुण को जानने से और क्या लाभ रहा ?

उत्तर - अनादि काल से दिगम्बरधर्म धारण करने पर भी, कर्म बनाता है, कर्म रक्षा करता है, कर्म नाश करता है - ऐसी मिथ्या बुद्धि थी। अस्तित्वगुण को जानने से जब किसी का बनना, रक्षा, नाश होता ही नहीं और सब अनादि-अनन्त हैं, तब कर्म बनाता है,

रक्षा करता है और नाश करता है, इस खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है।

प्रश्न 10– जिस समय आदिनाथ भगवान थे, उस समय तुम थे या नहीं?

उत्तर – अस्तित्वगुण के कारण हमें पता चला कि उस काल में हम किसी न किसी क्षेत्र में थे।

प्रश्न 11– क्या ईश्वर, जगत का कर्ता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अस्तित्वगुण के कारण छहों द्रव्य स्वयं–सिद्ध अनादि–अनन्त हैं, तब ईश्वर, जगत का कर्ता है, यह बात असत्य है।

प्रश्न 12– क्या ईश्वर, जगत की रक्षा करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि प्रत्येक वस्तु अपनी अनन्त – शक्ति से स्वयं रक्षित है, तब ईश्वर, जगत की रक्षा करता है, यह बात असत्य है।

प्रश्न 13– क्या ईश्वर, जगत का नाश करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अस्तित्वगुण के कारण किसी भी द्रव्य का नाश नहीं होता तो ईश्वर, जगत का नाश करता है, यह बात असत्य है।

प्रश्न 14– क्या कर्म, जगत का कर्ता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अस्तित्वगुण के कारण छहों द्रव्य स्वयं–सिद्ध अनादि–अनन्त हैं, तब कर्म, जगत का कर्ता है, यह बता असत्य है।

प्रश्न 15– क्या कर्म, जगत की रक्षा करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि प्रत्येक वस्तु अपनी अनन्त शक्तियों से स्वयं रक्षित है, तब कर्म, जगत की रक्षा करता है, यह बात असत्य है।

प्रश्न 16– क्या कर्म, जगत का नाश करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अस्तित्वगुण के कारण किसी भी द्रव्य का नाश नहीं होता है तो कर्म, जगत का नाश करता है, यह बात असत्य है।

प्रश्न 17– अस्तित्वगुण को जानने का और क्या लाभ रहा?

उत्तर – अनादि काल की पर में करने–कराने की, भोक्ता –भोग्य की बुद्धि का अभाव होकर, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होना, यह लाभ रहा।

प्रश्न 18– अस्तित्वगुण को जानने से पर में करने–कराने, भोक्ता–भोग्य की बुद्धि का अभाव और सम्यक्त्व की प्राप्ति कैसे हो जाती है?

उत्तर – जब प्रत्येक वस्तु अनादि–अनन्त और अजर अमर है तो – (1) मैं दूसरों को अथवा दूसरे मुझे उत्पन्न करते हैं; (2) मैं दूसरों की अथवा दूसरे मेरी रक्षा करते हैं; (3) मैं दूसरों का अथवा दूसरे मेरा नाश करते हैं, इन तीनों मान्यताओं का अभाव होने से पर में करने–कराने, भोक्ता–भोग्य की मिथ्याबुद्धि का अभाव होकर, सम्यक्त्व की प्राप्ति तत्काल हो जाती है।

प्रश्न 19– अस्तित्वगुण कितने हैं और क्यों?

उत्तर – जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं क्योंकि सामान्य–गुण होने के कारण प्रत्येक द्रव्य में एक–एक अस्तित्वगुण है।

प्रश्न 20– द्रव्य का लक्षण 'सत्' क्यों कहा है?

उत्तर – अस्तित्वगुण के कारण, द्रव्य का लक्षण सत् कहा है।

प्रश्न 21– मैं हमेशा रहूँगा या नहीं – ऐसी शंकावाला क्या भूलता है?

उत्तर – अस्तित्वगुण को भूलता है।

प्रश्न 22– अस्तित्वगुण की अपेक्षा छहों द्रव्यों को क्या कहते हैं?

उत्तर – सत् कहते हैं।

प्रश्न 23– सत् क्या है?

उत्तर – द्रव्य का लक्षण है।

प्रश्न 24– सत् किसे कहते हैं।

उत्तर – जो उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यसहित हो, उसे सत् कहते हैं। प्रत्येक द्रव्य, सत् है; इसलिए प्रत्येक द्रव्य में अपने ही कारण, पर्याय अपेक्षा नयी अवस्था की उत्पत्ति, पूर्व पर्याय का व्यय और द्रव्य की अपेक्षा ध्रौव्य रहना – ऐसी स्थिति प्रत्येक द्रव्य और गुण में त्रिकाल होती रही है, हो रही है, और होती रहेगी।

प्रश्न 25– क्या उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य का समय पृथक्–पृथक है?

उत्तर – तीनों का समय एक ही है; आगे–पीछे नहीं है।

प्रश्न 26– क्या प्रत्येक द्रव्य में और गुण में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य त्रिकाल होता रहता है?

उत्तर – हाँ, प्रत्येक द्रव्य और गुण में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य त्रिकाल होता रहता है।

प्रश्न 27– द्रव्य के उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य, को समझाओ?

उत्तर - (1) मनुष्यपर्याय का व्यय, देवपने का उत्पाद, आत्मा ध्रौव्य। (2) अयोगीदशा का व्यय, सिद्धदशा का उत्पाद, आत्मा ध्रौव्य (3) आम में खट्टेपन का व्यय, मीठेपन का उत्पाद, आम ध्रौव्य। इसी प्रकार सभी जगह समझ लेना।

प्रश्न 28- गुण में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य एक समय में किस प्रकार हैं ?

उत्तर - (1) मिथ्यात्व का व्यय, सम्यक्त्व का उत्पाद, श्रद्धागुण ध्रौव्य। (2) ठण्डे का व्यय, गर्म का उत्पाद, स्पर्शगुण ध्रौव्य। (3) श्रुतज्ञान का व्यय, केवलज्ञान का उत्पाद, ज्ञानगुण ध्रौव्य। प्रत्येक गुण में एक समय में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य हुआ है, होता है और होता रहेगा - ऐसा वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 29- (1) चारित्रगुण, (2) ज्ञानगुण, (3) क्षायिक -सम्यक्त्व, (4) गतिहेतुत्वगुण, (5) गन्ध, (6) वर्ण, (7) मीठा, (8) ठण्डा, (9) चारित्रमोहनीय का अभाव, (10) ज्ञानावरणीय का अभाव, (11) श्रुतज्ञान की प्राप्ति आदि में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाकर बताओ ?

उत्तर - (1) पहली पर्याय का व्यय, नयी पर्याय का उत्पाद, चारित्रगुण ध्रौव्य (2) ज्ञान की पहली पर्याय का व्यय, नवीन पर्याय का उत्पाद, ज्ञानगुण ध्रौव्य। (3) क्षयोपशमसम्यक्त्व का व्यय, क्षायिकसम्यक्त्व का उत्पाद, श्रद्धागुण ध्रौव्य। (4) पहली पर्याय का व्यय, दूसरी पर्याय का उत्पाद, गतिहेतुत्वगुण ध्रौव्य। (5) सुगन्ध का व्यय, दुर्गन्ध का उत्पाद, गन्धगुण ध्रौव्य, (6) काले का व्यय, सफेद का उत्पाद, वर्णगुण ध्रौव्य, (7) खट्टे का व्यय, मीठे का उत्पाद, रसगुण ध्रौव्य। (8) गर्म का व्यय, ठण्डे का उत्पाद, स्पर्शगुण

ध्रौव्य। (9) चारित्रमोहनीय के क्षयोपशम का व्यय, चारित्रमोहनीय के क्षय का उत्पाद, कार्माणवर्गणा ध्रौव्य। (10) ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम का व्यय, ज्ञानावरणीय के क्षय का उत्पाद, कार्माणवर्गणा ध्रौव्य। (11) मतिज्ञान का व्यय, श्रुतज्ञान का उत्पाद, ज्ञानगुण ध्रौव्य।

प्रश्न 30- अस्तिपना वस्तु का क्या लक्षण सिद्ध करता है ?

उत्तर - विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण / शक्ति की स्वयं स्वतः प्रति -समय अवस्था बदलती रहती है। शक्ति कायम रहती है। जैसे 'सत्-द्रव्य-लक्षणम्'। अपनी अवस्थाओं को पलटते-पलटते ही द्रव्य अनादि-अनन्त कायम रहता है। इसकी सिद्धि के लिये 'उत्पाद -व्यय-ध्रौव्य-युक्तं सत्' अर्थात्, वस्तु प्रत्येक समय अपनी सत्ता कायम रखते हुए भी, पूर्व अवस्था का व्यय, नवीन अवस्था का उत्पाद् करती रहती है -ऐसा नियम है।

प्रश्न 31- क्या अस्तित्वगुण से यह सिद्ध होता है कि सब द्रव्यों के गुणों की पर्यायें क्रमबद्ध, क्रमनियमित हैं, उनमें जरा भी हेर-फेर नहीं हो सकता है।

उत्तर - हाँ सिद्ध होता है। (1) श्री मोक्षमार्गप्रकाशक में कहा है 'अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा लिए परिणमित होती हैं, कोई किसी का परिणमाया परिणमता नहीं' - ऐसा वस्तु का स्वभाव है और दूसरे को परिणमने का भाव, मिथ्यादर्शन है। (2) रावण ने सीता से कहा - जैसा राम से प्रेम करती है, वैसे मुझे प्रेम करे-ऐसे भाव के कारण वह तीसरे नरक गया। अतः जो किसी भी द्रव्य के परिणमाने का भाव करता है, वह निगोद का पात्र है।

प्रश्न 32– जो वस्तु है, कायम रहकर बदलना ही उसका स्वभाव है, तब हम इसका ऐसा कर दें – वैसा कर दें, ऐसी मान्यता क्यों पायी जाती हैं ?

उत्तर – (1) उसे चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है। (2) वह जिनेन्द्रभगवान की आज्ञा से बाहर, निगोद का पात्र है।

प्रश्न 33– जब सभी क्रमबद्ध है, तो हमारा कार्य क्या रहा ?

उत्तर – मात्र ज्ञाता–दृष्टा ही रहा।

प्रश्न 34– यदि हमारा कार्य सिद्धभगवान के समान ज्ञाता–दृष्टा ही रहा तो हमारे में और सिद्धभगवान में क्या अन्तर रहा ?

उत्तर – कुछ भी अन्तर नहीं रहा; मात्र अज्ञानी की मान्यता का अन्तर है।

प्रश्न 35– विश्व की सब व्यवस्था व्यवस्थित ही है – ऐसा शास्त्रों में कहाँ बताया है ?

उत्तर – श्री प्रवचनसार, गाथा 93 में 'पारमेश्वरी व्यवस्था' कहा है। विश्व की व्यवस्था सब व्यवस्थित ही है, इसमें जरा भी हेर–फेर नहीं हो सकता।

प्रश्न 36– निमित्त से, उपादान में कुछ होता है – लोग ऐसा क्यों कहते हैं ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए कहते हैं।

प्रश्न 37– मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में अस्तित्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक – तैजस–कार्माण–भाषा

–मन में अनन्त पुद्‌गलों के अस्तित्वों से, मुझ ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व के अस्तित्व का किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा–अनुभाव–ज्ञान वर्ते तो अस्तित्वगुण को माना। (2) ज्ञान –दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व के एक अस्तित्व को भूलकर, संयोगरूप अनन्त पुद्‌गलों के अस्तित्वों में, एक आत्मा के अस्तित्व की कल्पना करनेवाले ने अस्तित्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 38– संयोगरूप अनन्त पुद्‌गलों के अस्तित्वों में, एक आत्मा का अस्तित्व, अर्थात् मैं मनुष्य हूँ, मानने का क्या फल है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस मिथ्या मान्यता का फल है।

प्रश्न 39– पुद्‌गल के अस्तित्वों में, एक आत्मा के अस्तित्वरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब अस्तित्वगुण को माना कहा जाए ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक–तैजस–कर्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्‌गलों के अस्तित्वों से, मुझ ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व के अस्तित्व का, किसी भी प्रकार का, किसी भी अपेक्षा, कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक अस्तित्व का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है – ऐसा जानकर, ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व के अस्तित्व की ओर दृष्टि करे तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति करे, तब अस्तित्वगुण को माना; फिर अनुपचरितअसद्‌भूतव्यवहारनय से मैं मनुष्य हूँ – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 40– (1) कुम्हार ने घड़ा बनाया; (2) बाई ने रोटी बनायी; (2) बाई ने अग्नि से पानी गरम किया; (3) मैंने

किताब बनायी; (4) अधर्मद्रव्य ने जीव पुद्गलों को ठहराया; (5) केवलाज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ; (6) उसने गाली दो तो मुझे क्रोध आया; (7) मैंने बिस्तर बिछाया; (8) मैं सुबह उठा; (9) मैंने बक्सा उठाया; (10) कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया; – इन वाक्यों में अस्तित्वगुण को समझाइये ?

उत्तर – कृपया प्रश्न 38 से 40 तक के अनुसार स्वयं अभ्यास कीजिये।

प्रश्न 41– अस्तित्वगुण की जाति कितने प्रकार की है ?

उत्तर – छह प्रकार की है, क्योंकि विश्व में छह ही जाति के द्रव्य हैं।

प्रश्न 42– अस्तित्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों है ?

उत्तर – जितना द्रव्य का क्षेत्र, उतना ही गुण का क्षेत्र है क्योंकि अस्तित्वगुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में पाया जाता है।

प्रश्न 43– जीव के अस्तित्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है ?

उत्तर – असंख्यात प्रदेशी है।

प्रश्न 44– क्या जीव के अलावा अन्य किसी द्रव्य के अस्तित्वगुण का क्षेत्र असंख्यात प्रदेशी है ?

उत्तर – धर्म, अधर्मद्रव्य के अस्तित्वगुण का क्षेत्र भी असंख्यात प्रदेशी है।

प्रश्न 45– काल और परमाणु के अस्तित्वगुण का क्षेत्र कितना है ?

उत्तर – एक प्रदेशी है।

प्रश्न 46– आकाशद्रव्य के अस्तित्वगुण का क्षेत्र कितना है?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी है।

प्रश्न 47– अस्तित्वगुण का काल कितना है?

उत्तर – जितना द्रव्य का काल है, उतना ही अस्तित्वगुण का काल है, अर्थात् अनादि–अनन्त है, क्योंकि अस्तित्वगुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 48– अस्तित्वगुण को पहले नम्बर पर क्यों रखा है?

उत्तर – पहले वस्तु में 'हैयातीपना' 'मौजूदगीपना' है – ऐसा निर्णय होने पर ही अन्य धर्म हो सकते हैं; इसलिए अस्तित्वगुण को पहले कहा है।

प्रश्न 49– ज्ञानी, अस्तित्वगुण को कैसा जानता है और अज्ञानी कैसा जानता है?

उत्तर – मेरा अस्तित्व मेरे द्रव्य–गुण–पर्याय से है; पर से नहीं –ऐसा ज्ञानी जानता है और मेरा अस्तित्वपना पर से है – ऐसा अज्ञानी मानता है।

प्रश्न 50– ऐसी कौन सी खोटी मान्यता है, जिससे सम्यक्त्व नहीं होता?

उत्तर – अपने अस्तित्व को स्वीकार नहीं करके, पर के अस्तित्व से अपना अस्तित्व मानने के कारण, सम्यग्दर्शन नहीं होता।

प्रश्न 51– अस्तित्व कितने प्रकार का है?

उत्तर – चार प्रकार का है – (1) परद्रव्य का अस्तित्व; (2) विकारी–पर्याय का अस्तित्व; (3) अपूर्ण–पूर्ण, शुद्धपर्याय का अस्तित्व; (4) त्रिकाली द्रव्य का अस्तित्व।

प्रश्न 52– किस–किस के अस्तित्व से धर्म की प्राप्ति नहीं होती और किसके अस्तित्व से धर्म की प्राप्ति होती है ?

उत्तर – (1) पर के अस्तित्व से, (2) विकारी पर्याय के अस्तित्व से, (3) अपूर्ण–पूर्ण शुद्धपर्याय के अस्तित्व के आश्रय से, कभी भी धर्म की प्राप्ति नहीं होती है। एकमात्र अपने त्रिकाली स्वभाव के अस्तित्व के आश्रय से ही धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्रश्न 53– अस्तित्वगुण, जड़ है या चेतन और क्यों ?

उत्तर – दोनों हैं; जीव का चेतन है; बाकी द्रव्यों का अस्तित्वगुण, जड़ है।

प्रश्न 54– मैं अजर–अमर हूँ – कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 55– मेरा कभी नाश नहीं होता, न कभी उत्पन्न होता हूँ – कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 56– कोई ईश्वर को सृष्टि का कर्ता, रक्षक, और नाश करनेवाला कहे तो कौन से गुण को नहीं माना ?

उत्तर – उसने अस्तित्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 57– कोई कर्म को सृष्टि का कर्ता, रक्षक, नाशक कहे तो उसने कौन से गुण को नहीं माना ?

उत्तर – उसने अस्तित्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 58– अस्तित्वगुण, रूपी है या अरूपी और क्यों ?

उत्तर – दोनों है; पुद्गल का अस्तित्वगुण, रूपी है; बाकी द्रव्यों का अस्तित्वगुण, अरूपी है।

प्रश्न 59– किन द्रव्यों का अस्तित्वगुण, गति करता है ?

उत्तर – जीव और पुद्‌गल का अस्तित्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 60– धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों का अस्तित्वगुण, गति क्यों नहीं करता है ?

उत्तर – धर्मादि द्रव्यों में क्रियावतीशक्ति नाम का गुण न होने से इनका अस्तित्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 61– अस्तित्वगुण को समझने से अन्यमत की किस मान्यता का अभाव हो जाता है ?

उत्तर – (1) ईश्वर, उत्पन्न, रक्षा, नाश करता है। (2) कर्म, उत्पन्न, रक्षा, नाश करता है – ऐसी अन्य मत की खोटी मान्यताओं का नाश हो जाता है।

प्रश्न 62– अस्तित्वगुण किस द्रव्य में नहीं है ?

उत्तर – ऐसा कोई भी द्रव्य नहीं, जिसमें अस्तित्वगुण न पाया जावे, क्योंकि अस्तित्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 63– त्रिकाल कायम कौन रहता है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य और उसके गुण, त्रिकाल कायम रहते हैं।

प्रश्न 64– प्रत्येक द्रव्य और गुण, त्रिकाल कायम किस कारण रहते हैं ?

उत्तर – अस्तित्वगुण के कारण।

प्रश्न 65– इस लोक का भय, परलोक का भय मिटाने के लिए किस गुण का मर्म जानना चाहिए ?

उत्तर – अस्तित्वगुण का मर्म जानना चाहिए।

प्रश्न 66– कोई द्रव्य पहले न हो और बाद में उत्पन्न हो जाये, क्या ऐसा हो सकता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य, अस्तित्वगुण के कारण अनादि–अनन्त है; पहले–बाद का प्रश्न ही झूठा है।

प्रश्न 67– संसार में किसी भी द्रव्य का कभी नाश नहीं होता है और कभी भी उत्पन्न नहीं होता है– इसकी सिद्धि कितने प्रकार से हो सकती है ?

उत्तर – करोड़ों प्रकार से हो सकती है। प्रथमानुयोग के शास्त्रों में तो पृष्ठ–पृष्ठ पर यह बात लिखी ही है।

प्रश्न 68– अस्तित्व की सिद्धि के कुछ उदाहरण देकर समझाओ ?

उत्तर – (1) भगवान महावीर से, (2) पार्श्वनाथ भगवान से, (3) जो करता है, वही भोगता है (4) व्यन्तरों से, (5) सर्प से, (6) राग निकल जाता है, ज्ञान रहता है, (7) वृद्धपना से, (8) चरणानुयोग से, (9) करणानुयोग से, (10) द्रव्यानुयोग से अस्तित्व की सिद्धि होती है।

प्रश्न 69– 'भगवान महावीर से' अस्तित्व की सिद्धि किस प्रकार होती है ?

उत्तर – जो आदिनाथ भगवान के समय में मारीच था, वही कितने बार निगोद गया; उसने ही शेर की पर्याय में सम्यक्त्व प्राप्त किया; उसी जीव ने नन्द राजा के भव में तीर्थङ्करनामकर्म बाँधा, वह जीव ही महावीर तीर्थङ्कर कहलाया, वह ही मोक्ष गया। देखो, आत्मा 'वह का वह' रहा, तो अस्तित्व की सिद्धि हो गयी। मिथ्यादृष्टि, जीव, पर्यायदृष्टि करके पागल बना रहता है; ज्ञानी, स्वभावदृष्टि करके मोक्ष चला जाता है।

प्रश्न 70– 'पार्श्वनाथ भगवान से' अस्तित्व की सिद्धि किस प्रकार होती है?

उत्तर – मरुभूमि के भव में कमठ के पत्थर गिराने से मृत्यु हुई; उसी ने हाथी की पर्याय में सम्यग्दर्शन प्राप्त किया और सर्प के काटने से मृत्यु हुई; वही अग्निवेग मुनि हुआ, वहाँ पर अजगर निगल गया; वही व्रजनाभि चक्रवर्ती बना; वही आनन्द मुनि बना; वही आराधना करते–करते तेईसवाँ, तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ हुआ। मरूभूति से लेकर सिद्धदशा तक वही आत्मा रहा। देखो! इससे अस्तित्व की सिद्धि हो गयी।

प्रश्न 71– 'जो करता है, वही भोगता है' इससे अस्तित्व की सिद्धि कैसे हुयी?

उत्तर – द्रव्यदृष्टि से देखा जावे तो 'जो करता है, वही भोगता है' जैसे, मनुष्यपर्याय में जिस जीव ने शुभभाव किये, उसी जीवद्रव्य ने देवादि पर्याय में स्वयं किये गये फल को भोगा। इसलिए भूतकाल मे जिस जीव ने जैसे भाव किये, वही जीव वर्तमान में भोगता है; दूसरा नहीं। इससे अस्तित्व की सिद्धि हो गयी।

प्रश्न 72– 'व्यन्तरों से' अस्तित्व की सिद्धि कैसे होती है?

उत्तर – किसी बाई को व्यन्तर आता था, वह बोलती थी 'मैं इसकी जिठानी हूँ', यह मेरा सब माल खा गयी है, मैं इसे नहीं छोड़ूगीं। इससे सिद्ध हुआ कि पहले जिठानी का जीव था, वही वर्तमान में व्यन्तर हुआ। जीव जो जिठानी में था, वही व्यन्तर में रहा, इस प्रकार व्यन्तरों से अस्तित्व की सिद्धि होती है। इसी प्रकार अन्य भी समझ लेना चाहिए।

प्रश्न 73– अस्तित्व का क्या अर्थ है?

उत्तर – अस्ति=होना। त्व=पना, अर्थात् होनापना।

प्रश्न 74– जो है, उसका नाश नहीं होता और उत्पन्न नहीं होता – यह कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 75– छहों द्रव्य, भूतकाल में थे, वर्तमान में हैं और भविष्य में रहेंगे – यह कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 76– मैं हूँ और जगत भी है; मैं अपने से हूँ; जगत, जगत से है – यह कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 77– मुझे कोई मार-जिला नहीं सकता – यह कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 78– मैं स्वतन्त्र अनादि-अनन्त अपने ही कारण हूँ; मेरा किसी से नाश और उत्पत्ति नहीं होती है – यह कैसे जाना ?

उत्तर – अस्तित्वगुण से जाना।

प्रश्न 79– अस्तित्वगुण और अस्ति में क्या अन्तर है।

उत्तर – अस्तित्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है और अस्ति होनेपने को कहते हैं।

प्रश्न 80– जाति अपेक्षा अस्तित्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जाति अपेक्षा विश्व में छह द्रव्य हैं; इसलिए जाति अपेक्षा विश्व में छह अस्तित्वगुण हैं।

प्रश्न 81– संख्या अपेक्षा अस्तित्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जीव के अस्तित्वगुण, अनन्तः; पुद्गल के अस्तित्वगुण, अनन्तानन्त; धर्म–अधर्म–आकाश के अस्तित्वगुण, एक–एक; और कालद्रव्य के अस्तित्वगुण, लोकप्रमाण असंख्यात हैं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक–एक अस्तित्वगुण है।

प्रश्न 82– संख्या अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी अस्तित्वगुण कितने हैं?

उत्तर – अनन्त जीवों के अनन्त असंख्यात प्रदेशी अस्तित्वगुण हैं। धर्म–अधर्म द्रव्य का एक–एक असंख्यात प्रदेशी अस्तित्वगुण है।

प्रश्न 83– जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों के अस्तित्वगुण असंख्यात प्रदेशी हैं?

उत्तर – जीव–धर्म–अधर्म, इन तीनों द्रव्यों के अस्तित्वगुण असंख्यात प्रदेशी हैं।

प्रश्न 84– अनन्त प्रदेशी अस्तित्वगुण कितने हैं और किसमें हैं?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी अस्तित्वगुण एक ही है और आकाशद्रव्य में है।

प्रश्न 85– एक प्रदेशी अस्तित्वगुण, संख्या अपेक्षा कितने हैं?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के एक प्रदेशी अस्तित्वगुण, अनन्तानन्त हैं और कालद्रव्य के एक प्रदेशी अस्तित्वगुण, लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 86– एक जीव में कितने अस्तित्वगुण हैं?

उत्तर – एक ही है।

प्रश्न 87– संयोगरूप औदारिकशरीर में कितने अस्तित्व–गुण हैं?

उत्तर – संयोगरूप औदारिकशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं।

प्रश्न 88– संयोगरूप तैजसशरीर में कितने अस्तित्वगुण हैं ?

उत्तर – संयोगरूप तैजसशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही अस्तित्वगुण में हैं।

प्रश्न 89– संयोगरूप कार्माणशरीर में कितने अस्तित्व-गुण हैं ?

उत्तर – संयोगरूप कार्माणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही अस्तित्वगुण में हैं।

प्रश्न 90– शब्द में कितने अस्तित्वगुण हैं ?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं।

प्रश्न 91– द्रव्यमन में कितने अस्तित्वगुण हैं ?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं।

प्रश्न 92– विश्व में कितने अस्तित्वगुण हैं ?

उत्तर – जितने विश्व में द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं।

प्रश्न 93– विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही विश्व में अस्तित्व गुण हैं – यह किसने बताया है ?

उत्तर – जिन-जिनवर और जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 94–जिन-जिनवर जिनवरवृषभों के इस कथन से क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – अनन्त ज्ञानियों का एक मत है, यह सिद्ध होता है।

प्रश्न 95– विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं, इसे जानकर, सम्यग्दृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – केवली के समान सम्पूर्ण अस्तित्वगुणों का ज्ञान हो

जाता है और अपने अस्तित्वगुणरूप अभेद आत्मा में स्थिरता करके, श्रेणी माँडकर सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेता है।

प्रश्न 96– विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं, इसे जानकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि क्या करता है ?

उत्तर – अहो ! जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों ने, जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण बताये हैं – ऐसा मानसिक ज्ञान में लेने से गृहीतमिथ्यात्व का अभाव हो जाता है, साथ ही अस्तित्वगुणरूप अपनी अभेद आत्मा का आश्रय लेकर ज्ञानी बन जाता है और फिर क्रम में ज्ञानी के समान सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेता है।

प्रश्न 97– विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं, इसे सुनकर अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या करता है ?

उत्तर – विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं – इस बात का विरोध करके, गृहीतमिथ्यात्व की पुष्टि करके, निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 98– संक्षिप्त में अस्तित्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – विश्व में अनन्त जीवों के अनन्त अस्तित्व हैं; पुद्गलों के अनन्तानन्त अस्तित्व हैं; धर्म–अधर्म–आकाश का एक–एक अस्तित्व है; कालद्रव्य के लोकप्रमाण असंख्यात अस्तित्व हैं। एक द्रव्य के अस्तित्व का, दूसरे द्रव्यों के अस्तित्वों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य के अस्तित्व का द्रव्य –क्षेत्र–काल–भाव पृथक्–पृथक् है –ऐसा थोड़े में अस्तित्वगुण बताता है।

प्रश्न 99– इस पाठ में अस्तित्वगुण के क्या–क्या लाभ आये हैं ?

उत्तर – (1) सब द्रव्य, अनादि–अनन्त हैं; (2) सब द्रव्य, अजर–अमर हैं; (3) सात प्रकार के भयों का अभाव हो जाता है; (4) ईश्वर, उत्पन्न करता है; (5) ईश्वर, रक्षा करता है; (6) ईश्वर, नाश करता है; (7) कर्म, उत्पन्न करता है; (8) कर्म, रक्षा करता है; और (9) कर्म, नाश करता है – ऐसी खोटी मान्यताओं का अभाव हो जाता है; (10) मैं दूसरों को, अथवा दूसरे मुझे उत्पन्न करते हैं; (11) मैं दूसरों की, अथवा दूसरे मेरी रक्षा करते हैं; (12) मैं दूसरों का, अथवा दूसरे मेरा नाश करते हैं – ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो जाता है; (13) उत्पाद–व्यय ध्रौव्य की सिद्धि हो जाती है; (14) अस्तित्व की सिद्धि चारों अनुयोगों से तथा अनेक दूसरे प्रकारों से हो जाती है; (15) जितने द्रव्य हैं, उतने ही अस्तित्वगुण हैं। ये 15 लाभ अस्तित्वगुण को जानने से हैं, ऐसा इस पाठ में बताया है।

प्रश्न 100– पूर्व प्रश्न में समागत लाभों में कौनसी चार बातें प्रत्येक लाभ पर लगानी चाहिए ?

उत्तर – (1) जिन–जिनवर और जिनवरवृषभ क्या कहते हैं ? (2) जिन–जिनवर और जिनवरवृषभों के कथन को सुनकर, ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है ? (3) जिन–जिनवर और जिनवर –वृषभों के कथन को सुनकर, सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि जीव क्या जानता है और क्या करता है ? (4) जिन–जिनवर और जिनवर –वृषभों के कथन को सुनकर, अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

●●

12

वस्तुत्वगुण

वस्तुत्वगुण के योग से, हो द्रव्य में स्व-स्व क्रिया,
स्वाधीन गुण-पर्याय का ही, पान द्रव्यों ने किया।
सामान्य और विशेषता से कर रहे निज काम को,
यों मानकर वस्तुत्व को, पावो विमल शिवधाम को॥

प्रश्न 1- वस्तुत्वगुण क्या है?

उत्तर - वस्तुत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 2- वस्तुत्वगुण किसे कहते हैं?

उत्तर - जिस शक्ति के कारण, द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व हो, उसे वस्तुत्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 3- अर्थक्रियाकारित्व से क्या आशय है?

उत्तर - प्रयोजनभूतक्रिया।

प्रश्न 4- प्रयोजनभूतक्रिया का तात्पर्य भी हम नहीं समझे?

उत्तर - प्रयोजनभूतक्रिया, अर्थात् अपना-अपना कार्य।

प्रश्न 5- आपने वस्तुत्वगुण की परिभाषा में अर्थक्रिया-कारित्व, प्रयोजनभूतक्रिया, 'अपना-अपना कार्य' बताया, परन्तु वस्तुत्वगुण का प्रयोजन हमारी समझ में नहीं आया है?

उत्तर - जैसे, हमारे घर में छह आदमी - स्त्री, लड़का, लड़की, बहन, बुआ और भाई हैं। इन सब में प्रत्येक अपना-अपना, जैसा

–जैसा सम्बन्ध है, वैसा–वैसा ही कार्य करता है; उसी प्रकार संसार में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य, अपना–अपना ही कार्य करता है, इसका नाम अर्थक्रियाकारित्व, प्रयोजनभूतक्रिया है।

प्रश्न 6– इस बात को जरा अधिक स्पष्ट कीजिए?

उत्तर – जैसे, (1) आँख, देखने का कार्य करती हैं; (2) नाक, सूँघने का; (3) कान, सुनने का; (4) मुँह, चखने का; (5) हाथ, स्पर्श का कार्य करता है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, वह अपना–अपना ही कार्य करते हैं। जैसे–जीव का श्रद्धागुण श्रद्धा का ही कार्य करेगा; ज्ञानगुण, ज्ञान का ही कार्य करेगा – पुद्गल का स्पर्शगुण, स्पर्श का ही कार्य करेगा और गन्धगुण, गन्ध का ही कार्य करेगा।

प्रश्न 7– (1) क्या प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं, क्या प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक गुण अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है? (2) क्या कोई भी गुण, एक समय के लिए भी प्रयोजनभूतक्रिया से रहित नहीं होता है?

उत्तर – (1) हाँ; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं और प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक गुण, अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है। (2) कोई भी गुण, एक समय के लिए भी प्रयोजनभूतक्रिया से रहित नहीं होता है।

प्रश्न 8– सिद्धभगवान में पूर्ण क्षायिकपना प्रगट हो गया है, तो अब क्या उनका प्रयोजनभूत कार्य समाप्त हो गया है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि उनके अनन्त–गुणों में से प्रत्येक समय निर्मल क्षायिकपरिणमनरूप प्रयोजनभूत कार्य होता ही रहता है।

प्रश्न 9– द्रव्य को वस्तु क्यों कहते हैं।

उत्तर – वस्तुत्वगुण के कारण।

प्रश्न 10– गोमट्टसार में वस्तु किसे कहा है?

उत्तर – (1) जिसमें गुण–पर्याय बसते हों; (2) जिसमें सामान्य–विशेष स्वभाव हो, उसे वस्तु कहते हैं। (3) प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता है; इसलिए प्रत्येक द्रव्य को वस्तु कहते हैं।

प्रश्न 11– वस्तु क्या सूचित करती है?

उत्तर – प्रत्येक वस्तु के गुण–पर्याय अपने–अपने में ही बसते हैं; एक के दूसरे में नहीं बसते।

प्रश्न 12– प्रत्येक वस्तु के गुण–पर्याय अपने में ही बसते हैं, एक के दूसरे में नहीं बसते, इससे हमें क्या लाभ है?

उत्तर – मेरे गुण–पर्याय मुझमें ही बसते हैं; शरीर में अथवा परद्रव्यों में नहीं बसते – ऐसा जानकर, अपने गुणों के अभेदरूप वस्तु है, उसका आश्रय ले, तो धर्म को प्राप्ति हो।

प्रश्न 13 –(1) ज्ञानगुण, (2) चारित्रगुण, (3) स्पर्शगुण, (4) रसगुण, (5) गतिहेतुत्वगुण, (6) श्रद्धागुण, (7) अस्तित्वगुण, (8) दर्शनगुण, (9) गन्धगुण, (10) वर्णगुण, (11) क्रियावतीशक्ति, (12) अवगाहनहेतुत्व आदि गुणों का प्रयोजनभूत कार्य क्या–क्या है?

उत्तर – (1) ज्ञानगुण का प्रयोजनभूत कार्य, मतिज्ञानादि आठ प्रकार का है। (2) चारित्रगुण का प्रयोजनभूत कार्य, शुद्ध और अशुद्ध दो प्रकार का है। (3) स्पर्शगुण का प्रयोजनभूत कार्य, आठ प्रकार का है। (4) रसगुण का प्रयोजनभूत कार्य, पाँच प्रकार का है। (5) गतिहेतुत्व का प्रयोजनभूत कार्य, उसका समय–समय

शुद्धपरिणमन है। (6) श्रद्धागुण का प्रयोजनभूत कार्य, मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूप है। (7) अस्तित्वगुण का प्रयोजनभूत कार्य, उसकी शुद्धपर्याय है। (8) दर्शनगुण का प्रयोजनभूत कार्य, चक्षुदर्शनादि चार प्रकार का है। (9) गन्धगुण का प्रयोजनभूत कार्य, सुगन्ध-दुर्गन्ध दो प्रकार का है। (10) वर्णगुण का प्रयोजनभूत कार्य, काला-नीला आदि पाँच प्रकार का है। (11) क्रियावतीशक्ति का प्रयोजनभूत कार्य, गमनरूप-स्थिररूप परिणमन है। (12) अवगाहनहेतुत्वगुण का कार्य, शुद्धपरिणमन अवगाहनरूप है।

प्रश्न 14- (1) मतिज्ञान, (2) सम्यग्दर्शन, (3) केवलज्ञान, (4) खट्टा, (5) गर्म, (6) काला, (7) सुगन्ध (8) चिकना, (9) शुभ, (10) शुद्ध, (11) केवलदर्शन, यह प्रयोजनभूत कार्य किस-किस गुण का है ?

उत्तर - मतिज्ञान, ज्ञानगुण का; सम्यग्दर्शन, श्रद्धागुण का; केवलज्ञान, ज्ञानगुण का; खट्टा, रसगुण का; गर्म, स्पर्शगुण का; काला, वर्णगुण का; सुगन्ध, गन्धगुण का; चिकना, स्पर्शगुण का; शुभ-शुद्ध, चारित्रगुण का और केवलदर्शन, दर्शनगुण का प्रयोजनभूत कार्य है।

प्रश्न 15- किसी द्रव्य का या गुण का प्रयोजनभूत कार्य, किसी भी समय समाप्त होता है या नहीं ?

उत्तर - प्रयोजनभूत कार्य का मतलब कभी भी समाप्त न होना है, क्योंकि कोई द्रव्य या गुण निकम्मा नहीं है, जो एक समय भी प्रयोजनभूत कार्य रहित होवे।

प्रश्न 16- यह मेज पड़ी है, इसमें क्या प्रयोजनभूत कार्य हो रहा है ?

उत्तर – यह मेज अनन्त पुद्गल परमाणुओं का स्कन्ध है। मेज में एक-एक परमाणु, अपने-अपने अनन्त गुणों सहित अपनी -अपनी प्रयोजनभूत क्रिया निरन्तर कर रहा है।

प्रश्न 17– वस्तुत्वगुण क्या बताता है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है; एक समयमात्र भी ऐसा नहीं है, जब अपने प्रयोजनभूत कार्य से रहित हो जावे।

प्रश्न 18– वस्तुत्वगुण को जानने से क्या लाभ रहा?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है, तब मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है – ऐसा अनुभव, ज्ञान होना। (2) अनादि से पर में करने-धरने और भोक्ता-भोग्य की खोटी बुद्धि का अभाव होकर, अपने ही करने-भोगने का अनुभव, ज्ञान, रमणता होना। (3) मिथ्यात्व का अभाव, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति। (4) अपने में अपूर्व शान्ति की प्राप्ति। (5) मोक्ष की ओर अग्रसर होना। (6) केवली के समान ज्ञाता-दृष्टापना प्रगट होना, यह वस्तुत्वगुण को जानने के लाभ हैं।

प्रश्न 19– जिसे सम्यग्दर्शन नहीं है, क्या उसने वस्तुत्वगुण को नहीं जाना?

उत्तर – नहीं जाना, क्योंकि अपने आपको जाने बिना, सभी कुछ अरण्रोदन है।

प्रश्न 20– शास्त्रों में आता है कि यह जीव, अनन्त बार ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व की पाठी हुआ और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं हुई, तो क्या उसे भी वस्तुत्वगुण का रहस्य पता नहीं है?

उत्तर – हाँ, उसे भी वस्तुत्वगुण का रहस्य का पता नहीं है।

प्रश्न 21– क्या द्रव्यलिङ्गी मुनि ने वस्तुत्वगुण का रहस्य नहीं जाना ?

उत्तर – नहीं जाना, क्योंकि कुन्दकुन्द भगवान ने द्रव्यलिङ्गी मुनि को संसार का नेता कहा है और श्री मोक्षमार्गप्रकाशक में द्रव्यलिङ्गी मुनि को मिथ्यादृष्टि, असंयमी, पापी कहा है।

प्रश्न 22– भगवान ने कहे अनुसार व्रत–समिति आदि का पालन किया – क्या उसने भी वस्तुत्वगुण का रहस्य नहीं जाना ?

उत्तर – नहीं जाना, क्योंकि वस्तुत्वगुण का रहस्य जानते ही मोक्ष का पथिक बन जाता है।

प्रश्न 23– क्या द्रव्यलिङ्गी मुनि, मोक्ष का पथिक नहीं है ?

उत्तर – वह चारों गतियों में घूमता हुआ परिभ्रमण करता है; निगोद का ही पथिक है; मोक्ष का पथिक नहीं है।

प्रश्न 24– विश्व में ऐसी वस्तु का नाम बताओ, जो अपना प्रयोजनभूत कार्य नहीं करती हो ?

उत्तर – ऐसी वस्तु, विश्व में है ही नहीं।

प्रश्न 25– अपने कार्य के लिए दूसरे की मदद चाहनेवाला किस गुण का मर्म नहीं जानता ?

उत्तर – वस्तुत्वगुण का मर्म नहीं जानता।

प्रश्न 26– मेरा हित मुझ से है, उसने किस गुण को माना ?

उत्तर – वस्तुत्वगुण को माना।

प्रश्न 27– वस्तुत्वगुण का रहस्य न जाने, तो क्या होगा ?

उत्तर – (1) सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कभी नहीं होगी। (2) जब सम्यग्दर्शन नहीं होगा, तो मोक्ष का प्रश्न नहीं रहा। (3) पर में करने

–धरने की मान्यता कर–करके निगोद चला जावेगा। (4) दूसरा मेरा भला–बुरा करे, या मैं दूसरों का भला–बुरा करूँ – ऐसी आकुलता में ही जलता रहेगा। (5) प्रति–समय दुःख बढ़ता जाएगा।

प्रश्न 28– वस्तुत्वगुण को जाननेवाले को किसकी अपेक्षा और किसकी उपेक्षा होती है?

उत्तर – अपनी **अपेक्षा** और पर की **उपेक्षा** रहती है।

प्रश्न 29– वस्तुत्वगुण को न जाननेवाले को किसकी उपेक्षा और किसी अपेक्षा रहती है।

उत्तर – अपनी उपेक्षा और पर की उपेक्षा रहती है।

प्रश्न 30– वस्तुत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जितने द्रव्य हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक–एक वस्तुत्वगुण पाया जाता है।

प्रश्न 31– वस्तुत्वगुण, जड़ है या चेतन?

उत्तर – दोनों हैं; जीव का वस्तुत्वगुण, चेतन है; बाकी द्रव्यों का जड़ है।

प्रश्न 32– वस्तुत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है?

उत्तर – जितना द्रव्य का क्षेत्र है, उतना ही क्षेत्र वस्तुत्वगुण का है, क्योंकि वस्तुत्वगुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में होता है।

प्रश्न 33– वस्तुत्वगुण का काल कितना है?

उत्तर – जितना द्रव्य का काल है, उतना ही वस्तुत्वगुण का काल है, क्योंकि वस्तुत्वगुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है, अर्थात् वस्तुत्वगुण का काल, अनादि–अनन्त है।

प्रश्न 34– जीव का प्रयोजन क्या है?

उत्तर – दु:ख न हो, सुख हो, यही प्रयोजन है।

प्रश्न 35– अस्तित्व और वस्तुत्वगुण में क्या अन्तर है?

उत्तर – (1) अस्तित्वगुण, अनादि–अनन्त कायमपने को सूचित करता है; (2) वस्तुत्वगुण, प्रयोजनभूत कार्य को सूचित करता है।

प्रश्न 36– अस्तित्वगुण और वस्तुत्वगुण जानने का क्या लाभ है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य, कायम रहता हुआ, अपना–अपना प्रयोजन–भूत कार्य करता ही रहता है; मेरा प्रयोजनभूत कार्य ज्ञाता–दृष्टा है –ऐसा अनुभव करे, तो अस्तित्वगुण, वस्तुत्वगुण को जानने का लाभ है।

प्रश्न 37– प्रयोजनभूत कार्य कितने हैं?

उत्तर – जाति अपेक्षा छह हैं।

प्रश्न 38– संख्या अपेक्षा प्रयोजनभूत कार्य कितने हैं?

उत्तर – जितने सब द्रव्यों के गुण हैं, उतने ही एक समय में प्रयोजनभूत कार्य हैं।

प्रश्न 39– अस्तित्वगुण बड़ा या वस्तुत्वगुण बड़ा है?

उत्तर – दोनों समान हैं, क्योंकि प्रत्येक गुण, द्रव्य के बराबर होता है।

प्रश्न 40– क्या अनादि–अनन्तपना वस्तुत्वगुण सिद्ध करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अनादि–अनन्तपना तो अस्तित्वगुण सिद्ध करता है; वस्तुत्वगुण नहीं।

प्रश्न 41– क्या प्रयोजनभूत क्रिया को अस्तित्वगुण सिद्ध करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि प्रयोजनभूत क्रिया को वस्तुत्वगुण सिद्ध करता है; अस्तित्वगुण नहीं।

प्रश्न 42– ऐसे द्रव्य का नाम बताओ, जिसमें अस्तित्वगुण तो हो किन्तु वस्तुत्वगुण न हो?

उत्तर – ऐसा कोई भी द्रव्य नहीं है, क्योंकि वस्तुत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 43– मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य व गुण में अपनी-अपनी प्रयोजनभूत क्रिया होती रही है, हो रही है और भविष्य में होती रहेगी – ऐसा जाने-माने तो धर्म की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्रश्न 44– वस्तुत्वगुण और वस्तु में क्या अन्तर है?

उत्तर – वस्तुत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है और वस्तु, द्रव्य को कहते हैं।

प्रश्न 45– विश्व में जाति अपेक्षा वस्तुत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इसलिए विश्व में जाति अपेक्षा छह वस्तुत्वगुण हैं।

प्रश्न 46– विश्व में संख्या अपेक्षा वस्तुत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जीव के वस्तुत्वगुण अनन्त; पुद्गल के वस्तुत्वगुण अनन्तानन्त; धर्म-अधर्म-आकाश का वस्तुत्वगुण एक-एक; और कालद्रव्य के वस्तुत्वगुण लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 47– असंख्यात प्रदेशी वस्तुत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जीवों के असंख्यात प्रदेशी वस्तुत्वगुण, अनन्त हैं ओर धर्म-अधर्म द्रव्य के असंख्यात प्रदेशी, वस्तुत्वगुण एक-एक है।

प्रश्न 48– विश्व में जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का वस्तुत्वगुण असंख्यात प्रदेशी है ?

उत्तर – जीव–धर्म–अधर्म, इन तीन द्रव्यों का वस्तुत्वगुण असंख्यात प्रदेशी है।

प्रश्न 49– अनन्त प्रदेशी वस्तुत्वगुण कितने हैं और किस द्रव्य के हैं ?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी वस्तुत्वगुण एक ही है और वह आकाश–द्रव्य का है।

प्रश्न 50– विश्व में संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जितने पुद्गल और कालद्रव्य हैं, उतने विश्व में एक प्रदेशी वस्तुत्वगुण हैं, अर्थात् पुद्गलद्रव्य के अनन्तानन्त वस्तुत्व–गुण हैं और कालद्रव्य के लोकप्रमाण असंख्यात वस्तुत्वगुण, एक प्रदेशी हैं।

प्रश्न 51– किन द्रव्यों का वस्तुत्वगुण गति करता है ?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का वस्तुत्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 52– किन द्रव्यों का वस्तुत्वगुण, गति नहीं करता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्म–आकाश और काल, इन चार द्रव्यों का वस्तुत्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 53– एक जीव में वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – एक ही है।

प्रश्न 54– संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर में वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक, तैजस और कार्माणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं।

प्रश्न 55– शब्द में वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु है, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं।

प्रश्न 56– द्रव्यमन में वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं ?

प्रश्न 57– प्रत्येक द्रव्य, किस में बसता है ?

उत्तर – अपने–अपने गुण–पर्यायों में ही बसता है।

प्रश्न 58– सामान्य–विशेष किन–किन अर्थों में प्रयुक्त होता है ?

उत्तर – (1) दर्शनगुण को सामान्य और ज्ञानगुण को विशेष कहते हैं। (2) जब द्रव्य को सामान्य कहें तो गुण को विशेष कहते हैं। (3) जब गुण को सामान्य कहें तो पर्याय को विशेष कहते हैं। (4) जो सब द्रव्यों में रहते हैं, उन्हें सामान्यगुण कहते हैं और जो अपने–अपने द्रव्य में रहते हैं, दूसरे द्रव्यों में नहीं रहते हैं, उन्हें विशेषगुण कहते हैं। (5) आत्मा में द्रव्य–गुण जो कि सामान्य पारिणामिकभाव है, उसे सामान्य कहते हैं और उसकी कारणशुद्धपर्याय है,जो विशेष पारिणामिक है, उसे विशेष कहते हैं। (6) संक्षेप में बोलने के अर्थ में सामान्य कहते हैं और विस्तारपूर्वक अर्थ के कथन करने को विशेष कहते हैं।

प्रश्न 59– वस्तुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जितने द्रव्य हैं, उतने ही विश्व में वस्तुत्वगुण हैं।

प्रश्न 60– मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में (1) वस्तुत्वगुण को कब माना, (2) और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में अनन्त पुद्गल वस्तुएँ, अस्तित्वगुण के कारण अपना-अपना अस्तित्व कायम रखते हुए; वस्तुत्वगुण के कारण अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करती हैं। मुझे निज आत्मा भी अस्तित्वगुण के कारण कायम रहता हुआ; वस्तुत्वगुण के कारण अपना जाननेरूप प्रयोजनभूत कार्य करता है। मेरी जाननेरूप प्रयोजनभूतक्रिया का संयोगरूप पुद्गलों का प्रयोजनभूतक्रिया से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। ऐसा अनुभव-ज्ञान वर्ते तो वस्तुत्वगुण को माना। (2) ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज वस्तु की जाननेरूप प्रयोजनभूत-क्रिया को भूलकर, संयोगरूप पुद्गलों की प्रयोजनभूतक्रिया को आत्मा की प्रयोजनभूत क्रिया माननेवाले ने वस्तुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 61- संयोगरूप पुद्गलों की प्रयोजनभूतक्रिया को आत्मा की क्रिया मानने का क्या फल है?

उत्तर - चारों गतियों मे घूमकर निगोद, इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 62- संयोगरूप पुद्गलों की प्रयोजनभूतक्रिया को आत्मा को प्रयोजनभूतक्रिया माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब वस्तुत्वगुण को माना कहा जावे?

उत्तर - संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मनरूप अनन्त पुद्गलों की प्रयोजनभूतक्रिया का, मुझ ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जाननेरूप प्रयोजनभूतक्रिया से किसी भी प्रकार सम्बन्ध नहीं है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की प्रयोजनभूतक्रिया का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है। ऐसा जानकर ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी उपयोगमयी निज वस्तु की ओर दृष्टि करे तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो तब वस्तुत्वगुण को माना, तब अनुपचरित-

असद्भूतव्यवहारनय से मैं मनुष्य हूँ – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा नहीं।

प्रश्न 63– (1) जीव शब्द बोलता है; (2) मैं प्रातःकाल उठता हूँ; (3) मैं मंजन करता हूँ; (4) मैं चाय पीता हूँ; (5) बाई ने हलवा बनाया; (6) बढ़ई ने कुर्सी बनायी; (7) मैं गोरा हूँ; (8) मैं जवान हूँ; (9) मैं माता हूँ; (10) मैं पुजारी हूँ; (11) मैं दुकान करता हूँ; (12) मैं डॉक्टर हूँ; (13) मैं हीरों का व्यापारी हूँ, इन वाक्यों में वस्तुत्वगुण को स्पष्ट समझाइये?

उत्तर – उक्त वाक्यों पर पूर्व प्रश्नोत्तरानुसार स्वयं अभ्यास करें।

प्रश्न 64– जितने द्रव्य हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं – इस वाक्य में से चार बातें कौन-कौन सी निकालनी चाहिए?

उत्तर – (1) जिन–जिनवर और जिनवरवृषभ क्या कहते हैं? (2) जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों के कथन को सुनकर, ज्ञानी क्या जानता हैं और क्या करता है? (3) पात्र मिथ्यादृष्टि भव्य जीव, क्या जानता है और क्या करता हैं? (4) अपात्र मिथ्यादृष्टि जीव, क्या जानता है और क्या करता है।

प्रश्न 65– जितने द्रव्य हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं, यह किसने बताया है?

उत्तर – जिन–जिनवर जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 66– जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों के इस कथन को सुनकर ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है?

उत्तर – जैसे– केवली, विश्व के सब वस्तुत्वगुणों को जानते हैं; वैसे ही ज्ञानी जानता है। ज्ञानी, वस्तुत्वगुणरूप अभेद आत्मा में स्थिरता करके, श्रेणी माँडकर सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेता है।

प्रश्न 67– जितने द्रव्य हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं – ऐसा सुनकर पात्र मिथ्यादृष्टि क्या करता है ?

उत्तर – अहो! अहो!! जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों का कथन महान हितकारी है – ऐसा जानकर पात्र मिथ्यादृष्टि भी ज्ञानी बनकर, ज्ञानी की तरह क्रम से सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेता है।

प्रश्न 68– जितने द्रव्य हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं – इसे सुन कर अज्ञानी अपात्र क्या करता है ?

उत्तर – इसका विरोध करके, निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 69 – थोड़े में वस्तुत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म, आकाश एक–एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक वस्तु कायम रहती हुई, अपनी–अपनी प्रयोजनभूतक्रिया करती रहती है। एक वस्तु की प्रयोजनभूतक्रिया का, दूसरी वस्तुओं की प्रयोजनभूतक्रिया से, किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की प्रयोजनभूतक्रिया का परस्पर में द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक् है – ऐसा थोड़े में वस्तुत्वगुण बताता है।

प्रश्न 70– वस्तुत्वगुण के क्या–क्या लाभ इस पाठ में आए हैं ?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है; (2) प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक गुण, अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है, क्योंकि कोई द्रव्य या गुण निकम्मा नहीं है; (3) प्रत्येक वस्तु अपने–अपने गुण–पर्यायों में ही बसती है; (4) प्रत्येक वस्तु सामान्य–विशेषरूप प्रवर्तती है; (5) पर में कर्ता–कर्म और भोक्ता–भोग्य की मिथ्या मान्यता का अभाव हो

जाता है; (6) क्रमबद्ध और क्रमनियमितपर्याय की सिद्धि हो जाती है; (7) निमित्त से उपादान में कुछ होता है– ऐसी खोटी मान्यता का अभाव होकर, स्वतन्त्रता का पता चल जाता है; (8) मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है; (9) केवली के समान ज्ञाता–दृष्टापना प्रगट हो जाता है; (10) प्रत्येक वस्तु सामान्य–विशेषरूप है – ऐसा जानकर अपने सामान्य–स्वभाव की ओर दृष्टि करे – तो वस्तु में बहिरात्मपने का अभाव होकर, अन्तरात्मा बनकर, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है; (11) दूसरी वस्तुओं के सामान्य–विशेष पर दृष्टि करे तो चारों गतियों में घूमकर निगोद की प्राप्ति होती है; (12) जितनी वस्तुएँ हैं, उतने ही सामान्य–विशेष हैं क्योंकि प्रत्येक वस्तु, सामान्य–विशेषरूप है; (13) जितनी वस्तुएँ हैं, उतने ही वस्तुत्वगुण हैं। ●●

13

द्रव्यत्वगुण

द्रव्यत्वगुण इस वस्तु को, जग में पलटता है सदा,
लेकिन कभी भी द्रव्य तो, तजता न लक्षण सम्पदा;
स्वद्रव्य में मोक्षार्थी हो, स्वाधीन सुख लो सर्वदा,
हो नाश जिससे आज तक की, दुःखदायी भव कथा॥

प्रश्न 1 – द्रव्यत्वगुण क्या है?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण, प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 2 – द्रव्यत्वगुण किसे कहते हैं?

उत्तर – जिस शक्ति के कारण, द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं, उसे द्रव्यत्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 3 – द्रव्यत्वगुण क्या सूचित करता है?

उत्तर – निरन्तर परिणमन को सूचित करता है।

प्रश्न 4 – 'निरन्तर परिणमन' से क्या तात्पर्य है?

उत्तर – एक समयमात्र भी पर्याय रुकती नहीं है, अर्थात् हर समय कार्य नया–नया होना, यह बताता है।

प्रश्न 5 – जब सब द्रव्यों में निरन्तर पर्याय होती रहती है, किसी को एक समय भी रुकने का अवकाश नहीं है, ऐसा वस्तुस्वरूप है, तब फिर जीवों को, पर का कर दूँ, या भोगूँ – ऐसी बुद्धि क्यों पायी जाती है?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण का मर्म न जानने के कारण, पर में करने और भोगने की बुद्धि अज्ञानियों में पायी जाती है, जो निगोद का कारण है।

प्रश्न 6 – वस्तुत्वगुण और द्रव्यत्वगुण में क्या अन्तर है?

उत्तर – (1) वस्तुत्वगुण, द्रव्य–गुण में प्रयोजनभूतक्रिया को बताता है। (2) द्रव्यत्वगुण, उस प्रयोजनभूतक्रिया को 'निरन्तर बदलने की बात को' बताता है।

प्रश्न 7 – अस्तित्व, वस्तुत्व और द्रव्यत्वगुण का क्या रहस्य है?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य अनादि–अनन्त कायम रहता है; (2) कायम रहता हुआ अपनी–अपनी प्रयोजनभूतक्रिया करता ही रहता है; और (3) वह क्रिया निरन्तर बदलती रहती है – ऐसा द्रव्य का स्वभाव है। इस बात को जाने, तो दृष्टि स्वभाव पर होती है और पर को बदल दूँ, पर को कायम रखूँ, किसी के कार्य को करूँ, किसी के कार्य को बदलाऊँ – आदि खोटी बुद्धियों का अभाव होकर ज्ञाता–दृष्टास्वभाव, पर्याय में प्रगट हो जाता है।

प्रश्न 8 – वस्तु को द्रव्य क्यों कहते हैं?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण के कारण।

प्रश्न 9 – क्या प्रत्येक गुण, कायम रहता हुआ, अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता हुआ, निरन्तर बदलता ही रहता है?

उत्तर – हाँ, ऐसा ही वस्तुस्वभाव है। यह 'पारमेश्वरी व्यवस्था' है।

प्रश्न 10 – प्रत्येक द्रव्य–गुण में निरन्तर नयी–नयी पर्यायें

होती हैं, उसे द्रव्यत्वगुण करता है या कालद्रव्य करता है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य–गुण में निरन्तर नयी–नयी पर्यायें अपनी –अपनी योग्यता से ही होती हैं। उसमें अन्तरङ्ग निमित्तकारण, द्रव्यत्वगुण है और बाहर का निमित्तकारण, कालद्रव्य है।

प्रश्न 11 – द्रव्य और द्रव्यत्वगुण में क्या अन्तर है ?

उत्तर – द्रव्य तो अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड है और द्रव्यत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 12 – द्रव्यत्वगुण को सामान्यगुण क्यों कहा हैं ?

उत्तर – सब द्रव्यों में पाया जाता है; इसलिए सामान्यगुण कहा है।

प्रश्न 13 – जीव में अज्ञानदशा सदैव एक–सी नहीं रहती, इसका क्या कारण है ?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण के कारण निरन्तर परिणमन होना ही इसक कारण है।

प्रश्न 14 – द्रव्यत्वगुण से क्या–क्या समझना चाहिए।

उत्तर – (1) सर्व द्रव्यों की अवस्थाओं का निरन्तर परिवर्तन उसका, अपने कारण से, उसी में होता है; दूसरा कोई परद्रव्य या निमित्त कुछ नहीं कर सकता है; (2) जीव की कोई भी पर्याय, दूसरे जीवों से, अजीवों से, कर्म से, शरीरादि से नहीं बदलती है; (3) दूसरे जीवों की, अजीवों की, कर्म, शरीर आदि की पर्यायें भी मुझसे नहीं बदलती है; (4) जीव में अज्ञानदशा सदैव एक सी नहीं रहती है; (5) पहिले अल्प ज्ञान था, बाद में ज्यादा ज्ञान हुआ, वह उस समय की योग्यता से हुआ है; (6) ज्ञान का विकास, ज्ञानगुण से ही होता है; किसी शास्त्र से, गुरु से, दिव्यध्वनि से, कर्म से, शुभभाव से तथा अन्य गुणों से नहीं होता है; (7) जो पर्याय हुई, उसका उसी

गुण की पूर्व और उत्तरपर्याय से भी सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 15 – श्रुतज्ञान बदलकर, केवलज्ञान हुआ – इसका कारण कौन है?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण ही कारण है।

प्रश्न 16 – द्रव्य को सर्वथा कूटस्थ माननेवाला किस गुण का मर्म नहीं जानता?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण का मर्म नहीं जानता।

प्रश्न 17 – मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यक्त्व की प्राप्ति, किस गुण को बनता है?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण को बताती है।

प्रश्न 18 – संसार का अभाव होकर, सिद्धदशा की प्राप्ति, किस गुण को बताता है?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण को बताता है।

प्रश्न 19 – पात्र जीव, द्रव्यत्वगुण से क्या जानता है?

उत्तर – संसार का अभाव और मुक्ति हमारे हाथ में है; किसी दूसरे के कारण, संसार या मोक्ष नहीं है।

प्रश्न 20 – प्रत्येक गुण की पर्याय क्यों बदलती हैं?

उत्तर – बदलती अपनी-अपनी योग्यता से है; उसमें अन्तरङ्ग निमित्त, द्रव्यत्वगुण है।

प्रश्न 21 – दुःख का अभाव और सुख प्राप्त करने के लिए किस गुण का मर्म जानना चाहिए?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण का मर्म जानना चाहिए।

प्रश्न 22 – हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है, उसके लिए पर

की सेवा करें, सम्मेदशिखिर जावें, माला जपें, कोई पाठ करें, या व्रत उपवासादि करें तो प्राप्ति होगी न ?

उत्तर – जैसे, छोटा बच्चा है, उसे 'अ आ इ ई' पढ़ाना है; वह उसके लिए उपवास करे, दान करे, यात्रा करे तो इन कार्यों से 'अ आ' पढ़ना नहीं होगा, परन्तु वह 'अ आ' का स्वयं अभ्यास करे तो 'अ आ' पढ़ना-लिखना आयेगा; उसी प्रकार सम्यग्दर्शन प्राप्त करने लिए पर की सेवा करें, सम्मेदशिखर जाये, माला जपे, तो उससे सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं होगी, एकमात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड भगवान का आश्रय ले, तो द्रव्यत्वगुण के कारण, मिथ्यात्व का अभाव होकर, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 23 –एक गुण में कितनी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – तीन काल के जितने समय हैं, उतनी-उतनी पर्याय प्रत्येक गुण में होती हैं।

प्रश्न 24 –हमारे जीवन में द्रव्यत्वगुण को समझने से और कुछ लाभ है ?

उत्तर – भगवान की आज्ञानुसार द्रव्यत्वगुण को समझ ले तो लौकिक में भी अशान्ति नहीं आयेगी और अपना अनुभव कर ले तो मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बन जायेगा।

प्रश्न 25 – द्रव्यत्वगुण को जानने से लौकिक में शान्ति कैसे आवेगी ?

उत्तर – (1) पचास लाख का नुकसान या लाभ हो गया; (2) लड़का मर गया या जन्म गया; (3) मकान बन गया या गिर गया; (4) शरीर में बीमारी आ गयी या ठीक हो गयी; यह सब द्रव्यत्वगुण के कारण, पर्याय पलटकर हुयी है; दूसरे का हस्तक्षेप नहीं है – ऐसा जाने तो तुरन्त शान्ति आयेगी।

प्रश्न 26 – मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में द्रव्यत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गलद्रव्य, अस्तित्वगुण के कारण अपना–अपना अस्तित्व कायम रखते हुए; वस्तुत्वगुण के कारण अपनी–अपनी प्रयोजनभूत–क्रिया करते हुए; द्रव्यत्वगुण के कारण निरन्तर बदल रहे हैं। मुझ आत्मा भी अस्तित्वगुण के कारण, कायम रहता हुआ; वस्तुत्वगुण के कारण अपनी जाननेरूप प्रयोजनभूतक्रिया करता हुआ; द्रव्यत्वगुण के कारण जाननेरूप कार्य निरन्तर नया–नया कर रहा है। संयोगरूप अनन्त पुद्गलद्रव्यों के निरन्तर बदलने की क्रिया का, मुझ आत्मा की जाननेरूप क्रिया से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा अनुभव–ज्ञान वर्ते तो द्रव्यत्वगुण को माना (2) ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवद्रव्य के निरन्तर जाननेरूप कार्य को भूलकर, संयोगरूप अनन्त पुद्गलद्रव्यों की निरन्तर बदलने की क्रिया को, आत्मा की क्रिया माननेवाले ने द्रव्यत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 27 – संयोगरूप पुद्गलों के निरन्तर बदलने के कार्य को आत्मा का कार्य मानने का क्या फल है।

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 28 – पुद्गलों के निरन्तर बदलने की क्रिया को आत्मा की क्रिया माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब द्रव्यत्वगुण को माना कहा जावे ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मनरूप पुद्गलों की निरन्तर बदलने की क्रिया से, मुझ ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवद्रव्य के निरन्तर जाननेरूप कार्य का, किसी भी प्रकार का

किसी भी अपेक्षा, कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की निरन्तर बदलने की क्रिया का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है।

प्रश्न 29 –(1)मैंने होशियारी नहीं रखी तो दूध फट गया; (2) मेरी बीमारी दवा खाने से ठीक हो गयी; (3) कुम्हार ने घड़ा बनाया; (4) उसने गाली दी तो मुझे क्रोध आया; (5) मैंने मकान बनाया; (6) मेरी असावधानी से गिलास टूट गया; (7) मैंने अलमारी बनायी; (8) मैंने किताब बनायी; (9) ज्ञानावरणीयकर्म के क्षय से केवलज्ञान हुआ; (10) दर्शन–मोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ; (11) आँख से ज्ञान हुआ; (12) मैं खड़ा हो गया – इन वाक्यों में द्रव्यत्वगुण को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – इन सभी वाक्यों पर पूर्व प्रश्न ...... तक स्वयं अभ्यास कीजिए।

प्रश्न 30 – द्रव्यत्वगुण के जाननेवाले को कैसे–कैसे प्रश्न नहीं उत्पन्न होंगे ?

उत्तर – (1) ऐसा क्यों हुआ, (2) इससे यह, (3) ऐसा हो, ऐसा न हो – आदि प्रश्न नहीं उत्पन्न होंगे, क्योंकि द्रव्यत्वगुण के कारण, पर्याय बदलती है तब 'ऐसा क्यों' आदि प्रश्नों का अवकाश ही नहीं है।

प्रश्न 31 – द्रव्यत्वगुण को जानने से किस–किस बात का निर्णय होना चाहिए ?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य–गुण की अवस्था निरन्तर स्वयं बदलती है; (2) एक द्रव्य के गुण की पर्याय, दूसरे द्रव्य के गुण की पर्याय को नहीं बदल सकती है; (3) जीव की पर्याय, अजीवों से

नहीं बदलती; स्वयं बदलती है; (4) अजीवों की पर्याय, जीवों से नहीं बदलती; स्वयं बदलती है; (5) अज्ञानदशा का अभाव एक समय में हो सकता है; (6) संसार एक समय का है; (7) मोक्ष भी एक समय का है।

प्रश्न 32 – क्या आम खट्टे से मीठा, पाल में दबाने से हुआ ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, द्रव्यत्वगुण के कारण खट्टे से मीठा हुआ; पाल के कारण नहीं।

प्रश्न 33 – क्या केवलज्ञान, केवलदर्शन, सिद्धदशा, संसारदशा, सब एक-एक समय की पर्याय है ?

उत्तर – हाँ, सब एक-एक समय की पर्याय हैं। वास्तव में एक-एक समय की पर्याय, वह एक-एक समय का भव है। सूक्ष्मऋजुसूत्रनय की अपेक्षा चारों गति भी एक-एक समय की हैं, क्योंकि 'जैसी मति, वैसी गति' हो जाती है।

प्रश्न 34 – यदि द्रव्यत्वगुण न माने तो क्या नुकसान हो ?

उत्तर – (1) द्रव्य, गुण के कूटस्थपने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा; (2) संसार और मोक्ष का प्रश्न ही नहीं रहेगा।

प्रश्न 35 – संसार और मोक्ष एक-एक समय का है, इसे जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – हे आत्मा ! तू अनादि-अनन्त भगवान् है; उसका आश्रय ले, तो एक समय में संसार का अभाव करके, मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

प्रश्न 36 – मैं बड़ा पापी हूँ, मेरा पाप जन्मों-जन्मों तक दुःख देगा- क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल गलत है, क्योंकि द्रव्यत्वगुण के कारण, पर्याय बदल गयी, तब दुःख का प्रश्न ही नहीं उठता है।

प्रश्न 37 – वस्तुत्वगुण के बाद द्रव्यत्वगुण बताने के पीछे क्या रहस्य है?

उत्तर – प्रत्येक वस्तु अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करती है –ऐसा वस्तुत्वगुण ने बताया। द्रव्यत्वगुण बताने के पीछे यह रहस्य है कि वह प्रयोजनभूत कार्य 'निरन्तर बदलता' ही रहता है।

प्रश्न 38 – द्रव्यत्वगुण का कार्य कब पूरा होगा?

उत्तर – निरन्तर परिणमन होना ही द्रव्यत्वगुण का कार्य है, फिर कार्य पूरा होने का प्रश्न ही नहीं रहता है।

प्रश्न 39 – जीव की पर्याय, अजीव से बदलती है – कोई ऐसा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – उसने जीव के द्रव्यत्वगुण को नहीं माना और जीव को परिणमनरहित माना।

प्रश्न 40 – द्रव्यत्वगुण त्रिकाल किस कारण रहता है?

उत्तर – अस्तित्वगुण के कारण।

प्रश्न 41 – द्रव्यत्वगुण अपना प्रयोजनभूत कार्य किस कारण करता है?

उत्तर – वस्तुत्वगुण के कारण।

प्रश्न 42 – द्रव्यत्वगुण निरन्तर किस कारण बदलता है?

उत्तर – स्वयं द्रव्यत्वगुण के कारण।

प्रश्न 43 – अस्तित्व, वस्तुत्व और द्रव्यत्वगुण का क्या मर्म है?

उत्तर – प्रत्येक वस्तु कायम रहती हुई, अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करती हुई, निरन्तर बदलती है –ऐसा द्रव्य का स्वभाव है। ऐसा जाने-माने तो संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह तीनों गुणों का तात्पर्य है।

प्रश्न 44 – मोक्षार्थी को क्या जानना चाहिये?

उत्तर – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्वगुण का मर्म जानना चाहिए, क्योंकि इनका मर्म जानने से सम्पूर्ण दुःख का अभाव हो जाता है।

प्रश्न 45 – वस्तु जग में पलटती है लेकिन वस्तु का नाश नहीं होता, तब हम क्या करें?

उत्तर – अपने द्रव्य में दृष्टि करें, तो समस्त दुःख का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि पूर्वक, मोक्ष के भागी बनें।

प्रश्न 46 – विश्व में जाति अपेक्षा कितने द्रव्यत्वगुण हैं?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इसलिए विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्यत्वगुण हैं।

प्रश्न 47 – विश्व में संख्या अपेक्षा कितने द्रव्यत्वगुण हैं?

उत्तर – जीव के द्रव्यत्वगुण अनन्त; पुद्गल के द्रव्यत्वगुण अनन्तानन्त; धर्म-अधर्म-आकाश का द्रव्यत्वगुण एक-एक; और कालद्रव्य के द्रव्यत्वगुण लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 48 – द्रव्यत्वगुण, जड़ है या चेतन है?

उत्तर – जीव का चेतन है; बाकी द्रव्यों का जड़ है।

प्रश्न 49 – संख्या अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी द्रव्यत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जीव के असंख्यात प्रदेशी द्रव्यत्वगुण अनन्त हैं और

धर्म–अधर्मद्रव्य के असंख्यात प्रदेशी द्रव्यत्वगुण एक–एक हैं।

प्रश्न 50 – जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का असंख्यात प्रदेशी द्रव्यत्वगुण है ?

उत्तर – जीव–धर्म–अधर्म, इन तीन द्रव्यों का द्रव्यत्वगुण, असंख्यात प्रदेशी है।

प्रश्न 51 – अनन्त प्रदेशी द्रव्यत्वगुण कितने हैं और किसके हैं ?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी द्रव्यत्वगुण एक ही है और वह आकाशद्रव्य का है।

प्रश्न 52 – संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी द्रव्यत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – पुद्गल के एक प्रदेशी द्रव्यत्वगुण अनन्तानन्त हैं और कालद्रव्य के एक प्रदेशी द्रव्यत्वगुण लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 53 – जाति अपेक्षा एक प्रदेशी द्रव्यत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – पुद्गल और कालद्रव्य, इन दो द्रव्यों का द्रव्यत्वगुण एक प्रदेशी हैं।

प्रश्न 54 – किन द्रव्यों का द्रव्यत्वगुण, गति करता है ?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का द्रव्यत्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 55 – किन द्रव्यों का द्रव्यत्वगुण, गति नहीं करता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्म–आकाश और काल, इन चार द्रव्यों का द्रव्यत्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 56 – द्रव्यत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है ?

उत्तर – जितना बड़ा द्रव्य का क्षेत्र है, उतना ही बड़ा द्रव्यत्वगुण का क्षेत्र है।

प्रश्न 57 – द्रव्यत्वगुण का काल कितना है।

उत्तर – जितना द्रव्य का काल है, उतना ही द्रव्यत्वगुण का काल है, अर्थात् अनादि-अनन्त है।

प्रश्न 58 – एक जीव में द्रव्यत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – एक ही है।

प्रश्न 59 – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्मणशरीर में द्रव्यत्व गुण कितने हैं?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्मणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं।

प्रश्न 60 – शब्द में द्रव्यत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं।

प्रश्न 61 – द्रव्यमन में द्रव्यत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं।

प्रश्न 62 – पर्याय में विकास-न्यूनता का क्या कारण है?

उत्तर – निरन्तर परिणमन ही कारण है।

प्रश्न 63 – निरन्तर परिणमन क्या बताता है?

उत्तर – सदैव नवीन-नवीन पर्याय का होना बतलाता है।

प्रश्न 64 – विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं, यह किसने बताया है?

उत्तर – जिन-जिनवर जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 65 – इस कथन को सुनकर ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है?

उत्तर – केवली के समान विश्व में जितने द्रव्यत्वगुण हैं, उनको जानता है और द्रव्यत्वगुणरूप अभेद आत्मा में विशेष स्थिरता करके, श्रेणी माँडकर, सिद्धदशा की प्राप्ति कर लेता है।

प्रश्न 66 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं– यह सुनकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – अहो ! अहो ! जिनवचन अपूर्व हैं ! ऐसा जानकर, अपने द्रव्यत्वगुणरूप अभेद आत्मा का आश्रय लेकर, ज्ञानी बनकर, ज्ञानी के समान सिद्धदशा को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 67 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं, इसे सुनकर अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – जिनवचन का विरोध करके, चारों गतियों में घूमकर निगोद चला जाता है।

प्रश्न 68 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण है, ऐसा जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों के कथन को जानने–मानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) जिनेन्द्रभगवान की आज्ञा का पता चल जाता है; (2) ज्ञानी अपने द्रव्यत्वगुणरूप अभेद आत्मा का आश्रय लेकर निर्वाण को प्राप्त कर लेता है; (3) पात्र मिथ्यादृष्टि, द्रव्यत्वगुण का रहस्य जानकर, ज्ञानी बनकर, ज्ञानी की तरह निर्वाण को प्राप्त कर लेता है; (4) अज्ञानी, द्रव्यत्वगुण का निषेध करके, चारों गतियों मे घूमकर निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 69 – संक्षिप्त में द्रव्यत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य, कायम रहता हुआ, अपनी–अपनी प्रयोजनभूत–क्रिया करता हुआ, निरन्तर बदलता ही रहता है; एक द्रव्य की

निरन्तर बदलने की क्रिया का, दूसरे द्रव्यों की निरन्तर बदलने की क्रिया से, किसी भी प्रकार का, किसी भी अपेक्षा, कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की निरन्तर बदलने की क्रिया का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है - ऐसा थोड़े में द्रव्यत्वगुण बताता है।

प्रश्न 70 - द्रव्यत्वगुण के क्या-क्या लाभ इस पाठ में बताये हैं ?

उत्तर - (1) सब द्रव्यों की अवस्था का 'निरन्तर परिणमन' उसका, उसी में, उसी से होता है; (2) प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में भी 'निरन्तर परिणमन' उस गुण की योग्यता के कारण ही होता है; (3) मेरी पर्याय, किसी दूसरे जीवों से या अजीवों से हो जावे -ऐसा नहीं है; (4) दूसरे जीवों की या अजीवों की कोई भी पर्याय मुझसे हो जावे- ऐसा भी नहीं है; (5) पर्याय में जो विकास या न्यूनता होती है - वह 'निरन्तर परिणमन के कारण' है; उसमें दूसरे का जरा भी हस्तक्षेप नहीं है; (6) संसार एक समय का है; (7) मोक्ष भी एक समय का है; (8) निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध भी एक-समय का है; (9) उपादान और निमित्त का सम्बन्ध भी एक समय का है; (10) द्रव्य को सर्वथा कूटस्थ माननेवाले झूठे हैं; (11) 'निरन्तर परिणमन' सदैव नवीन-नवीन पर्याय को बताता है; (12) जो कार्य हुआ, उसका भूत और भविष्य की पर्याय से भी सम्बन्ध नहीं है; (13) जितने द्रव्य हैं, उतने ही द्रव्यत्वगुण हैं।

अस्तित्व-वस्तुत्व-द्रव्यत्वगुण का आध्यात्मिक रहस्य :-

प्रश्न 71 - 'उत्पाद-व्ययुत वस्तु है, फिर भी सदा ध्रुवता धरे' इस कथन का अनादि से जिनवरवृषभ, जिनवर और जिन ने क्या आध्यात्मिक रहस्य बताया है ?

उत्तर – 'प्रत्येक द्रव्य, एक समय में अपने उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य –रूप त्रि–स्वभाव का स्पर्श करता है; उसी समय निमित्त होने पर भी द्रव्य उनका स्पर्श नहीं करता। सम्यग्दर्शन हुआ — वहाँ आत्मा उस सम्यग्दर्शन के उत्पाद को, मिथ्यात्व के व्यय को और श्रद्धारूप अपनी ध्रौव्यता को स्पर्श करता है, किन्तु सम्यक्त्व के निमित्तभूत ऐसे देव, गुरु या शास्त्र को स्पर्श नहीं करता; वे तो भिन्न स्वभावी पदार्थ हैं। सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति, मिथ्यात्व का व्यय तथा श्रद्धपने की अखण्डतारूप ध्रौव्यता, इन तीनों का आत्मा में ही समावेश होता है, किन्तु इनके अतिरिक्त जो बाह्य निमित्त हैं, उनका समावेश आत्मा में नहीं होता। प्रति समय उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यतारूप द्रव्य का अपना स्वभाव है और उस स्वभाव का ही प्रत्येक द्रव्य, स्पर्श करता है; अर्थात्, अपने स्वभावरूप ही वर्तता है, किन्तु परद्रव्य के कारण किसी के उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य नहीं हैं। परद्रव्य भी उसके अपने ही उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यस्वभाव में अनादि–अनन्त वर्तता है और यह आत्मा भी अपने उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यस्वभाव में ही अनादि–अनन्त वर्तता है – ऐसा समझनेवाले ज्ञानी को, अपने आत्मा के उत्पाद –व्यय–ध्रौव्य के अतिरिक्त, बाह्य में कोई भी कार्य किञ्चित्मात्र अपना भासित नहीं होता; इसलिए ध्रौव्यस्वरूप अपना जो आत्मा है, उसके आश्रय से निर्मलता का ही उत्पाद होता है, मलिनता का व्यय होता जाता है और ध्रौव्यता का अवलम्बन बना ही रहता है– इसका नाम, धर्म है।

प्रश्न 72 – क्या अजीवद्रव्यों में भी, प्रत्येक अजीवद्रव्य अपने त्रि–स्वभाव को ही स्पर्श करता है?

उत्तर – हाँ, अजीवद्रव्य भी अपने उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यरूप त्रि–स्वभाव का स्पर्श करता है; पर का स्पर्श नहीं करता। जैसे कि,

मिट्टी के पिण्ड में से घड़ा हुआ; वहाँ पिण्ड अवस्था के व्यय को, घट अवस्था के उत्पाद को और मिट्टीपने की ध्रौव्यता को वह मिट्टी स्पर्श करती है, किन्तु वह कुम्हार, चाक, डोरी को या अन्य किसी परद्रव्य को स्पर्श नहीं करती और कुम्हार भी हाथ के हलन - चलनरूप अपनी अवस्था का जो उत्पाद हुआ, उस उत्पाद को स्पर्श करता है, किन्तु अपने से बाह्य ऐसे घड़े को वह स्पर्श नहीं करता।

प्रश्न 73 - सर्वज्ञदेव का वीतरागी भेदविज्ञान क्या है?

उत्तर - जगत में छहों द्रव्य, एक ही क्षेत्र में विद्यमान होने पर भी, कोई द्रव्य दूसरे द्रव्य के स्वभाव को स्पर्श नहीं करता। अपने-अपने उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यतारूप स्वभाव में ही प्रत्येक द्रव्य वर्तता है; इसलिए वह अपने स्वभाव को ही स्पर्श करता है। देखो! यह सर्वज्ञदेव कथित वीतरागी भेदज्ञान!

प्रश्न 74 - सर्वज्ञदेव कथित वीतरागी भेदविज्ञान को जानने-मानने से क्या स्पष्टीकरण हो जाता है?

उत्तर - इसमें निमित्त-उपादान का स्पष्टीकरण भी आ जाता है। उपादान और निमित्त, ये दोनों पदार्थ एक साथ प्रवर्तमान होने पर भी उपादानरूप पदार्थ, अपने उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यतारूप स्वभाव का ही स्पर्श करता है; निमित्त का किंचित् भी स्पर्श नहीं करता और निमित्तभूत पदार्थ भी उसके अपने उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यतारूप स्वभाव का ही स्पर्श करता है; उपादान का किंचित् स्पर्श नहीं करता। उपादान और निमित्त दोनों पृथक्-पृथक् अपने-अपने स्वभाव में ही वर्तते हैं, परिणमन करते हैं।

प्रश्न 75 - सर्वज्ञ भगवान् के सर्व उपेदश का तात्पर्य क्या है?

उत्तर - अहो! पदार्थों का यह उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यस्वभाव भलीभाँति पहिचान ले तो भेदज्ञान होकर, स्वद्रव्य के ही आश्रय से निर्मलपर्याय का उत्पाद और मलिनता का व्यय हो, उसका नाम धर्म है और वही सर्वज्ञ भगवान् के सर्व उपदेश का तात्पर्य है।

प्रश्न 76 - भगवान ने संक्षिप्त में क्या वस्तुस्वरूप बताया है ?

उत्तर - जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक, काल लोकप्रमाण असंख्यात हैं; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त -अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण, कायम रहता हुआ, एक ही समय में पूर्व पर्याय का व्यय और नवीन पर्याय का उत्पाद होता रहा है, हो रहा है और होता रहेगा - यह वस्तुस्वरूप, भगवान ने बताया है।

प्रश्न 77 - जैसा वस्तुस्वरूप भगवान बताया है, यदि ऐसा मान ले तो उसका फल क्या होगा ?

उत्तर - (1) पर पदार्थों में कर्ता-कर्म, भोक्ता-भोग्य की बुद्धि समाप्त हो जायेगी; (2) सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर, क्रम से मुक्ति सुन्दरी का नाथ बन जावेगा।

प्रश्न 78 - भगवान ने ऐसा वस्तुस्वरूप किन शास्त्रों में बताया है ?

उत्तर - चारों अनुयोगों के शास्त्रों में बताया है। (1) श्री प्रवचनसार गाथा 93 में इसे 'पारमेश्वरी व्यवस्था' कहा है। (2) श्री तत्त्वार्थसूत्र में 'सत् द्रव्य लक्षणम्; उत्पाद व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्' के नाम से वस्तुस्वरूप समझाया है।

प्रश्न 79 - ऐसी विश्व व्यवस्था को जानने से क्या होता है ?

उत्तर - सम्पूर्ण दु:खों का अभाव होकर, पूर्ण सुख की प्राप्ति होती है - ऐसा आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने श्री मोक्षमार्ग -प्रकाशक, पृष्ठ 52 में बताया है। ●●

14

प्रमेयत्वगुण

सब द्रव्य-गुण, प्रमेय से बनते विषय हैं ज्ञान के,
रुकता न सम्यग्ज्ञान पर से, जानियों यों ध्यान से;
आत्मा अरूपी ज्ञेय निज, यह ज्ञान उसको जानता,
है स्व-पर सत्ता विश्व में, सुदृष्टि उनको जानता॥

प्रश्न 1 – प्रमेयत्वगुण क्या है ?

उत्तर – प्रमेयत्वगुण, सभी द्रव्यों में पाया जानेवाला सामान्य-गुण है।

प्रश्न 2 – प्रमेयत्वगुण किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस शक्ति के कारण, द्रव्य 'किसी ने किसी ज्ञान' का विषय हो, उसे प्रमेयत्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 3 – 'किसी न किसी ज्ञान' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, और केवलज्ञान, इन पाँचों में से कोई भी एक ज्ञान से तात्पर्य है।

प्रश्न 4 – जगत में कोई ऐसा पदार्थ हैं, जिसमें प्रमेयत्वगुण न हो ?

उत्तर – जगत में ऐसा एक भी पदार्थ नहीं है, जिसमें प्रमेयत्वगुण न हो, क्योंकि प्रमेयत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 5 – प्रमेयत्व का मतलब क्या है ?

उत्तर – ज्ञात होनेयोग्य, जाननेयोग्य, ज्ञेय, Knowable

प्रश्न 6 – प्रमेयत्व का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उत्तर – प्र = अर्थात्, विशेषरूप से। मेय = अर्थात्, ज्ञान में आने योग्य। त्व=अर्थात्, पना। विशेषरूप से ज्ञान में आने योग्यपना।

प्रश्न 7 – रूपीपदार्थ ज्ञात होते हैं और अरूपीपदार्थ ज्ञात नहीं होते – क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल गलत है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में, प्रमेयत्वगुण है; इस कारण प्रत्येक पदार्थ किसी न किसी ज्ञान का विषय होता है; इसलिए रूपी और अरूपी, दोनों पदार्थ अवश्य ही ज्ञान में ज्ञात होते हैं।

प्रश्न 8 – ज्ञान करने की और ज्ञात होने की, यह दोनों शक्तियाँ एक साथ किसमें हैं ?

उत्तर – एकमात्र जीवद्रव्य में ही हैं।

प्रश्न 9 – क्या पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल में भी ये दोनों शक्तियाँ हैं ?

उत्तर – नहीं है। पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल में, मात्र ज्ञेयपने की शक्ति है; ज्ञान करने की नहीं है।

प्रश्न 10 – हम ऐसा कार्य करें, किसी को भी पता न चले –ऐसा कहनेवाला क्या भूलता है और किसको नहीं मानता है ?

उत्तर – (1) प्रमेयत्वगुण को भूलता है; (2) अरहन्त–सिद्ध को नहीं मानता, क्योंकि संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं जो अरहन्त –सिद्ध नहीं जानते हों; (3) अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी को नहीं मानता; (4) छदमस्थ भावश्रुतज्ञानी को भी नहीं मानता।

प्रश्न 11 – प्रमेयत्वगुण को जानने से क्या लाभ होता है?

उत्तर – सब पापों से छूट जाता है।

प्रश्न 12 – प्रमेयत्वगुण को जानने से सब पापों से कैसे छूट जाता है?

उत्तर – जो जीव, पाप करता है, वह यह जानकर करता है कि उसे कोई देखता नहीं है। यदि उसे यह पता लग जाए कि अरहन्त –सिद्ध भगवान सब जानते हैं, तो वह उन पापों को न करे।

प्रश्न 13 – प्रमेयत्वगुण के रहस्य को जाननेवाला सब पापों से कैसे छूट जाता है, दृष्टान्त देकर समझाओ?

उत्तर – एक आदमी ने 50 भैंसें खरीदी, उसने भैंसों का दूध निकाल कर जमा करके घी निकाल कर बेचने का काम शुरु किया। घी का भाव, बाजार में 200 रुपया किलो, वह 150 रुपया किलो बेचता था। बाजार में लोग जानते हैं कि मिलावट का घी होता है, किन्तु इसने तो भैंसें भी रक्खी हैं और 50 रुपया किलो कम बेचता है, तो उसका घी रोज सुबह ही बिक जाता और वह जल्दी ही मालदार हो गया। एक दिन उसका खास रिश्तेदार आया– अरे भाई! तुम एक किलो घी, 50 रुपये कम में बेचते हो, तब तुम इतने जल्दी मालदार कैसे हो गये? उसने कहा – देखो, मुझे सब ईमानदार जानते हैं। मैं रोज एक डिब्बे असली घी में पाँच डिब्बे नकली घी मिलाकर रात को रख देता हूँ, वह सुबह ही सब बिक जाता है, इस बात को कोई नहीं जानता है; इस तरह से मैं जल्दी मालदार बन गया हूँ। उसने कहा, भाई! तुम तो जैन हो, अरहन्तभगवान तो इस बात को जानते हैं और अवधिज्ञानी, मन:पर्यज्ञानी भी बतला सकते हैं, तब तुम कैसे कहते हो कि इस बात को कोई नहीं जानता? उस दिन से

उसने यह बेईमानी का कार्य छोड़ दिया, क्योंकि उसने प्रमेयत्वगुण का रहस्य जान लिया।

प्रश्न 14 – (1) मैं जुआ खेलता हूँ, कोई नहीं जानता है; (2) मैं टैक्स की चोरी करता हूँ, कोई नहीं जानता; (3) मैं सिगरेट पीता हूँ, किसी को क्या पता है; (4) मैं शराब पीता हूँ, लेकिन किसी को पता नहीं; (5) मैं हिंसा, चोरी करता हूँ, किन्तु किसी को पता नहीं चलता; (6) मैं नकल करता हूँ, किसी को पता नहीं चलता; (7) मैं व्यापार में सबको मूर्ख बना देता हूँ, कोई नहीं जानता हैं; (8) मैं ऐसा छल करता हूँ, सब दंग रह जाते हैं; (9) मैंने इलेक्शन में सभी वोट अपनी पेटी में डाल दिये, किसी ने देखा ही नहीं; इन नौ वाक्यों में (अ) प्रमेयत्वगुण को कब माना और प्रमेयत्वगुण को माननेवाले ने किस-किस का आदर किया, तब माना। (आ) और प्रमेयत्वगुण को कब नहीं माना तथा प्रमेयत्वगुण को न माननेवालों ने किस-किस का निरादर किया, तब नहीं माना, समझाइये ?

उत्तर – (अ) मैं जुआ खेलता हूँ, कोई नहीं जानता – इस वाक्य में जो जीव ऐसा जाने-माने कि जुआ खेलने का कार्य आहारवर्गणा का है, मुझ जीव का नहीं है। मैं तो ज्ञायक भगवान हूँ, और ज्ञानपर्याय, व्यवहार से ज्ञान का ज्ञेय है; उसने प्रमेयत्वगुण को माना और प्रमेयत्व-गुण माननेवाले ने पञ्च परमेष्ठियों का आदर किया – तब माना। (आ) मैं जुआ खेलता हूँ, कोई नहीं जानता — इस वाक्य में भगवान को भूलकर, जुआ खेलने के कार्य को आत्मा का कार्य माने, उसने प्रमेयत्वगुण को नहीं माना और प्रमेयत्वगुण न माननेवाले ने पञ्च परमेष्ठियों का निरादर किया, तब नहीं माना। इसी प्रकार आठ प्रश्नों को समझ लेना चाहिए।

प्रश्न 15 – मैं रोटी खाता हूँ – इस वाक्य में (1) प्रमेयत्वगुण को कब माना, (2) और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) मैं रोटी खाता हूँ— इस वाक्य में रोटी खाने का कार्य आहारवर्गणा का है; मुझ ज्ञायक भगवान का नहीं है। मैं ज्ञायक हूँ और रोटी, व्यवहार से मेरे ज्ञान का ज्ञेय है – ऐसी मान्यतावाले ने प्रमेयत्वगुण को माना। और (2) अपने ज्ञायक भगवान को भूलकर, रोटी खाने का कार्य आत्मा का माने तो उसने प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 16 – मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में (1) प्रमेयत्वगुण को कब माना और (2) कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गल परमाणु कायम रहते हुए, अपनी–अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करते हुए, निरन्तर बदल रहे हैं। ये सब व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय हैं और मैं आत्मा ज्ञायक हूँ – ऐसा अनुभव–ज्ञान वर्ते, तो प्रमेयत्वगुण को माना। (2) मैं आत्मा ज्ञायक हूँ। संयोगरूप –औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गल, परमाणु व्यवहारनय से ज्ञाय का ज्ञेय हैं; इस बात को भूलकर औदारिक–तैजस–कार्माण–भाष–मन के अनन्त पुद्गलों का कर्ता–भोक्ता आत्मा को माननेवाले ने प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 17 – संयोगरूप शरीरों में व्यवहार से ज्ञेयबुद्धि को छोड़ कर, मैं मनुष्य हूँ – ऐसी मान्यता का क्या फल है।

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद ऐसी मिथ्यामान्यता का फल है।

प्रश्न 18 – संयोगरूप औदारिक आदि शरीरों में — मैं

मनुष्य हूँ – ऐसी निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब प्रमेयत्वगुण को माना कहा जावे ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में जितने परमाणु हैं, वे सब व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय हैं; मैं तो मात्र ज्ञायक हूँ – ऐसा माने–जाने तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो, तब प्रमेयत्वगुण को माना; फिर अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से, मैं मनुष्य हूँ – ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 19 – मैं देव हूँ; मैं नारकी हूँ; मैं तिर्यंच हूँ; मैं जवान हूँ; मैं स्त्री हूँ; मैं रथ बनाता हूँ; मैं शरीर की सेवा करता हूँ; अरहन्त भगवान ने चार घातियाकर्मों का अभाव किया; इन वाक्यों में प्रमेयत्वगुण को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – इन सभी वाक्यों पर पूर्व 14 से 18 प्रश्नोत्तरानुसार स्वयं अभ्यास करें।

प्रश्न 20 – दिगम्बरधर्मी कौन है और उसका कार्य क्या है ?

उत्तर – ज्ञानी, दिगम्बरधर्मी है और उसका कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।

प्रश्न 21 – जो सप्तव्यसन का सेवन करते हैं, हिंसादि पाप करते हैं, वह अपने को दिगम्बरधर्मी कहते हैं, यह क्या ठीक है ?

उत्तर – वे सब दिगम्बरधर्मी नहीं हैं और चारों गतियों में घूमते हुए निगोदगामी हैं। चारों गति के भक्त हैं; पंचम गति के भक्त नहीं हैं।

प्रश्न 22 – विश्व के सम्पूर्ण पदार्थों के साथ आत्मा का कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – एकमात्र ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है; अन्य किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 23 – कोई संसार के पदार्थों के साथ करने–भोगने का सम्बन्ध माने तो वह कहाँ का पात्र है?

उत्तर – जैसे, माता का पुत्र के साथ जैसा सम्बन्ध है, वैसा ही माने तो ठीक है; यदि उल्टा सम्बन्ध माने तो निन्दा का पात्र होता है; उसी प्रकार संसार के पदार्थों के साथ ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है। इसके बदले कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध माने तो जिनवाणीमाता के साथ अनर्थ है और वह निगोदरूप संसार का पात्र है।

प्रश्न 24 – ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध किसने माना, किसने नहीं माना?

उत्तर – ज्ञानी ने माना; अज्ञानी ने नहीं माना।

प्रश्न 25 – प्रमेयत्वगुण, रूपी है या अरूपी?

उत्तर – दोनों हैं; पुद्गल का प्रमेयत्वगुण, रूपी है, बाकी के द्रव्यों का अरूपी है, क्योंकि प्रमेयत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्य–गुण है।

प्रश्न 26 – प्रमेयत्वगुण, जड़ है या चेतन है?

उत्तर – दोनों है; जीव का प्रमेयत्वगुण चेतन है, बाकी का जड़ है, क्योंकि प्रमेयत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 27 – प्रमेयत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों?

उत्तर – जितना द्रव्य का क्षेत्र है, उतना बड़ा क्षेत्र, प्रमेयत्वगुण का है क्योंकि प्रमेयत्वगुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में पाया जाता है।

प्रश्न 28 – प्रमेयत्वगुण का काल कितना है?

उत्तर – जितना द्रव्य का काल है, उतना ही प्रमेयत्वगुण का काल है, क्योंकि प्रमेयत्वगुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 29 – क्या पुद्गलपरमाणु भी ज्ञान का ज्ञेय हो सकता है ?

उत्तर – हाँ; वह भी ज्ञान का ज्ञेय है क्योंकि उसमें भी प्रमेयत्वगुण है। परमाणु, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी तथा केवलज्ञानी के ज्ञान का ज्ञेय होता है।

प्रश्न 30 – क्या सभी द्रव्यों के गुणों की भूत-भविष्यत -वर्तमान, सब पर्यायें, ज्ञान का ज्ञेय हो सकती हैं ?

उत्तर – हाँ, वह सब केवलज्ञानी के केवलज्ञान की पर्याय में एक समय में एक साथ ज्ञेय होती हैं।

प्रश्न 31 – सब द्रव्यों की भूत-भविष्यत-वर्तमान पर्यायें केवलज्ञानी एक साथ एक समय में जानते हैं, यह कहाँ आया है ?

उत्तर – सम्पूर्ण जिनागम में आया है। जैसे, (1) श्री प्रवचनसार गाथा 37, 38, 21, 47 तथा 200 में; (2) श्री तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय पहला, सूत्र 29वाँ; (3) श्री रत्नकरण्डश्रावकाचार, पहला श्लोक; (4) श्री छहढ़ाला की चौथी ढ़ाल में आया है कि 'सकल द्रव्य के गुण अनन्त पर्याय अनन्ता। जानै एकै काल प्रगट केवलि भगवन्ता॥' (5) श्री धवला पुस्तक 13 पृ० 346 से 353 में आया है।

प्रश्न 32 – कितने ही विद्वान, दिगम्बरधर्मी कहलाने पर भी ऐसा क्यों कहते हैं कि — (1) केवलीभगवान भूत और वर्तमान पर्यायों को ही जानते हैं और भविष्यत पर्यायों को वे हों, तब जानते हैं; (2) सर्वज्ञभगवान अपेक्षित धर्मों को नहीं जानते; (3) केवलीभगवान, भूत-भविष्यत पर्यायों को सामान्यरूप से जानते हैं; किन्तु विशेषरूप से नहीं जानते; (4) केवली-भगवान, भविष्य की पर्यायों को समग्ररूप से जानते हैं; भिन्न-भिन्न रूप से नहीं जानते; (5) ज्ञान, मात्र ज्ञान को ही जानता

है; (6) सर्वज्ञ के ज्ञान में पदार्थ झलकते हैं, किन्तु भूत-भविष्य की पर्यायें स्पष्टरूप से नहीं झलकती आदि।

उत्तर - उनका ऐसा कहना बिल्कुल गलत हैं; (1) शास्त्र, भावलिङ्गी मुनियों के बनाए हुए हैं, उनमें भूत और भविष्यत की पर्यायों का स्पष्ट उल्लेख है। जबकि अवधिज्ञानी, मनःपर्यय ज्ञानी तो भूत-भविष्य की पर्यायों को जाने, केवली न जाने - देखो! कितना अनर्थ है। (2) भरतजी ने भूत-भविष्यत-वर्तमान चौबीसी की स्थापना की, वह कहाँ से आयी? (3) मारीच चौबीसवाँ तीर्थङ्कर होगा; द्वारिका में बारह वर्ष बाद आग लगेगी — यह बात कहाँ से आयी; (4) करणानुयोग में, जीव ऐसे भाव करता है, तब ऐसा-ऐसा कर्म का निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध होगा, यह कहाँ से आया है; (5) चरणानुयोग में जीव ने ऐसे व्रत का भाव किया है, उसके फल से देव हुआ, यह कहाँ से आया; (6) प्रथमानुयोग तो भूत-भविष्यत -वर्तमान सबको बताता है - यह उसका जीता-जागता प्रमाण है; (7) श्री समयसार, गाथा 308 से 311 तक स्पष्ट आया है; वास्तव में आजकल भगवान की आज्ञा न माननेवाले विद्वानों में सर्वज्ञ के विषय में उल्टी धारणा है; इसलिए उनको वर्तमान में सच्चे ज्ञानियों का समागम करके अपनी भूल मिटा लेनी चाहिए। यादि रहे - प्रश्न में छह बातें आयी हैं, उसमें उन्होंने सर्वज्ञ को अल्पज्ञ माना और यह उनकी चारों गतियों में घूमने की बातें हैं।

प्रश्न 33 - जब ज्ञान में अनादि और अनन्त पर्याय एक साथ आ जाती हैं, तब तो उनका आदि और अन्त भी आ गया?

उत्तर - नहीं आया, अनादि कहने से आदि नहीं है और अनन्त कहने से अन्त नहीं है।

प्रश्न 34 – अनादि कहने से आदि क्यों नहीं और अनन्त कहने से अन्त क्यों नहीं ?

उत्तर – केवलज्ञानी, अनादि को अनादिरूप से और अनन्त को, अनन्तरूप से जानते हैं।

प्रश्न 35 – जिसमें ज्ञानगुण हो, उसमें प्रमेयत्वगुण होगा या नहीं और क्यों ?

उत्तर – अवश्य ही होगा, क्योंकि प्रमेयत्व, सामान्यगुण है।

प्रश्न 36 – ज्ञानी, सुखी क्यों है; अज्ञानी, दुःखी क्यों हैं ?

उत्तर – ज्ञानी, संसार के पदार्थों के साथ ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध मानता है; इसलिए सुखी है और अज्ञानी, परपदार्थों के साथ कर्ता –कर्म, भोक्ता–भोग्यसम्बन्ध मानता है; इसलिए दुःखी है।

प्रश्न 37 – सातवें नरक में सम्यग्दृष्टि जीव, सुखी हैं, क्या उन्होंने ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध माना ?

उत्तर – हाँ, उन्होंने ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध माना है, तभी तो सुखी हैं।

प्रश्न 38 – हमको तो परपदार्थों के साथ कर्ता–कर्म, भोक्ता –भोग्य सम्बन्ध ही जान पड़ता है; ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध नहीं, इसका क्या कारण है ?

उत्तर – (1) अज्ञानी को पीलिया रोग हो गया है; इसलिए उसे उल्टा मासूम पड़ता है। (2) जैसे — रेल में पेड़ चलते दिखते हैं; उसी प्रकार अज्ञानी को परद्रव्यों के साथ कर्ता–कर्म–भोक्ता –भोग्य सम्बन्ध दिखता है। वास्तव में रेल चलती है; पेड़ नहीं चलते; उसी प्रकार वास्तव में व्यवहारनय से ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है; कर्ता–कर्मसम्बन्ध नहीं है। (3) 'बछेरे के अण्डे' के समान आत्मा ने किया, ऐसा मानता है। बछेरे के अण्डे का दृष्टान्त निम्न प्रकार से है :—

एक बार एक दरबारी सुन्दर थोड़े के बछेरों को खरीदने के लिए बाहर निकला। दरबारी पहले कभी महल से बाहर नहीं निकला था; इसलिए उसे दुनिया का कोई अनुभव नहीं था। वह बछेरे खरीदने एक गाँव से दूसरे गाँव में जा रहा था, रास्ते में उसे कुछ ठग मिले। बातचीत में उन ठगों ने जान लिया, कि दरबारी बिल्कुल अनुभवहीन है और बछेरे खरीदने बाहर निकला है। उन ठगों ने दरबारी को ठगने का निश्चय किया और काशीफल लेकर एक पेड़ पर टाँग दिए। उसी पेड़ के पासवाली झाड़ी में दो खरगोश के बच्चे छिपे बैठे थे। उन ठगों ने दरबारी से कहा – हमारे पास बछेरों के दो अण्डे हैं, उनमें से दो सुन्दर बछेरे निकलेंगे। दरबारी से सौदा तय करके दो हजार रुपये ले लिए। फिर उस पेड़ पर छिपाकर रखे हुए दोनों काशीफलों को नीचे गिरा दिया। नीचे गिरते ही वे फूट गए और जोर से धमाका हुआ। उस धमाके की आवाज सुनकर खरगोश के बच्चे, झाड़ी में निकलकर भागे। तब वे ठग ताली बजा कर हँसें और बोले — महाराज! महाराज! अण्डे तो फूट गये। वे तुम्हारे दोनों बछेरे भागे जा रहे हैं, पकड़ो, पकड़ो। दरबारी उन्हें सचमुच बछेरे जानकर उन्हें पकड़ने दौड़ा, परन्तु वे खरगोश किसी झाड़ी में छिप गए; इसलिए हाथ न आए। दरबारी मन मारकर घर आ गया। घर आने पर अन्तःपुर के लोगों ने पूछा कि महाराज! बछेरों का क्या हुआ? तब दरबारी ने अण्डे खरीदने की समस्त वार्ता कह सुनायी और कहने लगा कि इतने सुन्दर बछेरे, अण्डा से निकले कि निकलते ही दौड़ पड़े। अन्तुःपुर के लोगों ने कहा महाराज! आप मूर्ख हो गये हैं — कहीं बछेरों के भी अण्डे होते हैं; दरबारी ने कहा – अरे भाई! मैंने अपनी आँखें से देखे हैं। अरे! जब बछेरे के अण्डे होते ही नहीं, तो तुमने देखे कहाँ से हैं? उसी प्रकार अज्ञानी जीव कहता है कि

'आत्मा, परद्रव्य के कार्य को करता देखा जाता है।' अरे भाई! जब आत्मा, परद्रव्य का कुछ कर ही नहीं सकता तो तूने देखा कहाँ से। खोटी दृष्टि से अज्ञानी को जड़ की क्रिया, चेतन करता हुआ भासित होता है। आत्मा ने यह क्रिया की, यह तो नजर नहीं आता।

यह देखो, हाथ में लकड़ी है। अब यह ऊँची हो गयी, इसमें आत्मा ने क्या किया? आत्मा ने यह जाना तो सही कि लकड़ी पहले नीचे थी और अब ऊपर हो गयी है, परन्तु आत्मा, लकड़ी को ऊँचा करने में समर्थ नहीं है। अज्ञानी मानता है - मैंने लकड़ी को ऊँची की है सो विपरीत मान्यता है। इसलिए याद रखो — (1) एक आत्मा, दूसरे आत्मा का कुछ नहीं कर सकता है; (2) एक आत्मा, जड़ का कुछ नहीं कर सकता है; (3) एक पुद्गल, दूसरे पुद्गल का कुछ नहीं कर सकता है; (4) एक पुदगल, आत्मा का कुछ नहीं कर सकता है - ऐसा मानना सम्यग्ज्ञान है; इससे उल्टा मानना, महान पाप मिथ्यात्व है क्योंकि आत्मा के साथ परपदार्थों का ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध है किन्तु कर्ता-कर्म मान लिया है।

प्रश्न 39 - ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध किसने माना?

उत्तर - जिसने अपने आश्रय से सम्यग्दर्शनादि प्रगट किये, उसने जाना और माना।

प्रश्न 40 - संसार में ज्यादातर जनता, पर में कर्ता-कर्म, भोक्ता भोग्य की ही बातें करती है - क्या वे सब पागल हैं?

उत्तर - वास्तव में निगोद से लगाकर चारों गतियों के सब मिथ्यादृष्टि जीव, पर में कर्ता-कर्म की बातें करने के कारण, पागल ही हैं।

प्रश्न 41 - मैं सब कैसे जान सकता हूँ - ऐसी मान्यतावाला क्या भूलता है?

उत्तर – प्रमेयत्वगुण को भूलता है।

प्रश्न 42 – मैं शरीर का, बाल–बच्चों का कुछ कर सकता हूँ – ऐसी मान्यतावाला क्या भूलता है।

उत्तर – प्रमेयत्वगुण को भूलता है, क्योंकि शरीर और बच्चों के साथ ज्ञेय–ज्ञायकपने का सम्बन्ध है; मानता है कर्ता–कर्मपने का।

प्रश्न 43 – मैं पर का कर्ता–भोक्ता हूँ – ऐसी मान्यतावाला कौन है और उसने किस गुण को नहीं माना ?

उत्तर – (1) जिनमत से बाहर द्विक्रियावादी है। (2) पर के साथ ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है; माना कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध, तो उसने प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 44 – क्या आत्मा का और द्रव्यकर्मों का कर्ता–कर्म सम्बन्ध है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, मात्र ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है; अथवा निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध है, जो दोनों की स्वतन्त्रता का ज्ञान कराता है।

प्रश्न 45 – शास्त्रों में कथन आता है कि (1) कर्म, जीव को चक्कर कटाता है; (2) ज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान होता है; (3) दर्शनमोहनीय के सद्भाव से मिथ्यात्व रहता है और अभाव से क्षायिकसम्यक्त्व होता है – क्या यह कथन झूठा है ?

उत्तर – यह व्यवहारकथन है; इसका अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है' – ऐसा जानना चाहिए। क्योंकि व्यवहारनय किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है, इसके श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है; इसलिए व्यवहार के कथन को सच्चा कथन मानने का त्याग करना चाहिए।

प्रश्न 46 – लड़का आज्ञा न माने, स्त्री हमारे अनुरूप न चले – ऐसी स्थिति में क्या माने तो क्रोध नहीं आवेगा और कब किस गुण को माना, कब नहीं माना ?

उत्तर – लड़का आज्ञा न माने, स्त्री हमारे मुताबिक न चले, वह हमारे ज्ञान का ज्ञेय है – ऐसा माने तो क्रोध नहीं आवेगा, तब प्रमेयत्वगुण को माना और उनके कारण क्रोध आया तो प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 47– प्रमेयत्वगुण का मर्म समझने के लिए किसका आदर्श सामने रखें ?

उत्तर – (1) सिद्धभगवान का और मन्दिर में अरहन्तभगवान को अपना आदर्श माने तो प्रमेयत्वगुण का मर्म समझ में आवे। जैसे, मन्दिर में कोई चोरी करे, किसी का बुरा विचारे तो भगवान अरहन्त कहते हैं – जानो और देखो, क्योंकि वह तुम्हारे ज्ञान का ज्ञेय है। साक्षात समवसरण में अनेक जीव होते हैं, पर्याय में अप्रगट विरोध भी होता है, तो क्या भगवान नहीं जानते ? जानते तो हैं। उन्हें क्रोधादि क्यों नहीं होते ? उन्हें वे ज्ञेय जानते हैं। हम भी सब को ज्ञेय माने तो भगवान की आज्ञा मानी और प्रमेयत्वगुण को माना।

प्रश्न 48 – देव-गुरु-शास्त्र क्या बताते हैं ?

उत्तर – तेरा संसार के पदार्थों के साथ मात्र ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध है; कर्ता-कर्म, भोक्ता-भोग्यसम्बन्ध नहीं है। कहा भी है कि:— सकल ज्ञेय-ज्ञायक तदपि, निजानन्द रसलीन; सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि रज रहस विहीन।

प्रश्न 49 – संसार में जीव दु:खी क्यों हैं ?

उत्तर – भगवान की आज्ञा नहीं मानने से दु:खी है, क्योंकि वास्तव

में अनादि काल से यह जीव आज तक भगवान की आज्ञानुसार चला ही नहीं। इस जीव ने अपनी प्रवृत्ति के अनुसार भगवान की आज्ञा का पालन अनन्त बार किया, परन्तु भगवान की आज्ञानुसार आज्ञा का पालन एक समय भी नहीं किया; इसलिए जीव, संसार में दुःखी है।

प्रश्न 50 – प्रमेयत्वपना किस-किस में है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य-गुण और पर्याय में प्रमेयत्वपना है।

प्रश्न 51 – प्रमेय (ज्ञेय) क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) छह द्रव्य, उनके गुण और पर्याय, ज्ञेय हैं। (2) विकारीभाव और अपूर्ण-पूर्ण शुद्धपर्यायें सब ज्ञेय हैं। श्री समयसार कलश 50 में कहा है कि ज्ञानी तो अपनी और पर की परणति को जानता हुआ प्रवर्तता है।

प्रश्न 52 – हमें भगवान से और शुभभावों से लाभ है – ऐसी मान्यतावाले ने किस गुण को नहीं माना ?

उत्तर – उसने प्रमेयत्वगुण को नहीं माना, क्योंकि भगवान और शुभभाव, ज्ञान का ज्ञेय हैं; माना लाभ तो, प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 53 – ज्ञानी क्या जानता है ?

उत्तर – मैं,आत्मा ज्ञायक और लोकालोक व्यवहार से ज्ञेय है। मैं ज्ञायक-ज्ञायक हूँ – ऐसा ज्ञानी जानता-मानता है।

प्रश्न 54 – विश्व में जाति अपेक्षा प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इसलिए विश्व में जाति अपेक्षा छह प्रमेयत्वगुण हैं।

प्रश्न 55 – विश्व में संख्या अपेक्षा प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – विश्व में संख्या अपेक्षा जीवों के अनन्त; पुद्गलों के

अनन्तानन्त; धर्म-अधर्म-आकाश के एक-एक और कालद्रव्य के लोकप्रमाण असंख्यात प्रमेयत्वगुण हैं।

प्रश्न 56 – संख्या अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जीवों के अनन्त असंख्यात प्रदेशी प्रमेयत्वगुण हैं और धर्म-अधर्मद्रव्य के एक-एक असंख्यात प्रदेशी प्रमेयत्वगुण हैं।

प्रश्न 57– जाति अपेक्षा किन द्रव्यों का प्रमेयत्वगुण असंख्यात प्रदेशी है ?

उत्तर – जीव-धर्म-अधर्म, इन तीन द्रव्यों के प्रमेयत्वगुण असंख्यात प्रदेशी हैं।

प्रश्न 58 – अनन्त प्रदेशी प्रमेयत्वगुण कितने और किस द्रव्य के हैं ?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी प्रमेयत्वगुण एक ही है और वह आकाशद्रव्य का है।

प्रश्न 59– संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के एक प्रदेशी प्रमेयत्वगुण अनन्तानन्त हैं और कालद्रव्य के एक प्रदेशी प्रमेयत्वगुण लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 60– जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का प्रमेयत्वगुण एक प्रदेशी है ?

उत्तर – जाति अपेक्षा पुद्गल और कालद्रव्य का प्रमेयत्वगुण एक प्रदेशी है।

प्रश्न 61– किन द्रव्यों का प्रमेयत्वगुण, गति करता है ?

उत्तर – जीव-पुद्गल का प्रमेयत्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 62– किन द्रव्यों का प्रमेयत्वगुण, गति नहीं करता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्म–आकाश और काल – इन चार द्रव्यों का प्रमेयत्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 63– एक जीव में प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – एक जीव में एक ही प्रमेयत्वगुण है।

प्रश्न 64– संयोगरूप औदारिक, तैजस, कामर्णशरीर में प्रमेयत्व–गुण कितने हैं ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक तैजस, कार्माणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रमेयत्व गुण हैं।

प्रश्न 65– शब्द में प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं।

प्रश्न 66– द्रव्यमन में प्रमेयत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं।

प्रश्न 67– विश्व में जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं – ऐसा किसने बताया है ?

उत्तर – जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 68– जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों के इस कथन से क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – अनन्त ज्ञानियों का एक ही मत है।

प्रश्न 69– जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं – ऐसा सुनकर ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – जितने प्रमेयत्वगुण हैं, उनका केवली के समान सही ज्ञान हो जाता है। अपने प्रमेयत्वगुणरूप अभेद ज्ञायक का पूर्ण आश्रय लेकर, श्रेणी माँडकर, निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 70 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं – यह सुनकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – अहो ! जिनवचन महान उपकारी हैं – ऐसा जानकर, ज्ञानी बनकर, ज्ञानी की तरह क्रम से निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 71– जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं – यह सुनकर अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – जिनवाणी का निषेध करके, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 72– प्रमेयत्वगुण कैसे सम्बन्ध का ज्ञान कराता है ?

उत्तर – हे आत्मा ! तेरा विश्व के पदार्थों के साथ मात्र व्यवहार से ज्ञेय–ज्ञायकसम्बन्ध है – ऐसा ज्ञान कराता है।

प्रश्न 73– संक्षिप्त में, प्रमेयत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – विश्व में जीव अनन्त; पुद्गल अनन्तानन्त; धर्म–अधर्म आकाश एक–एक; कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। सब द्रव्य अनादि काल से कायम रहते हुए, अपनी–अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करते हुए निरन्तर बदल रहे हैं। ये सब व्यवहार से ज्ञेय हैं और आत्मा, ज्ञायक है; वास्तव में आत्मा, ज्ञायक और ज्ञानपर्याय, ज्ञेय है; यथार्थ में तो तू ज्ञायक..... तू ज्ञायक – बस ! थोड़े में प्रमेयत्वगुण यह बताता है।

प्रश्न 74– प्रमेयत्वगुण को जानने से क्या–क्या लाभ इस प्रकरण में बताये हैं ?

उत्तर – (1) अनादि से परपदार्थों में, शुभाशुभभावों में कर्ता –कर्म, भोक्ता–भोग्य की मिथ्याबुद्धि का अभाव हो जाता है;

(2) परपदार्थों में, शुभाशुभभावों में ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध स्थापित हो जाता है; (3) संसार में जितने भी पदार्थ हैं, वे मात्र ज्ञेय हैं और मुझ आत्मा, ज्ञायक है - ऐसा पता चल जाता है; (4) परपदार्थ और शुभाशुभभाव जो ज्ञेय हैं, वे व्यवहार से हैं; वास्तव में तो मुझ आत्मा, ज्ञायक और ज्ञानपर्याय ज्ञेय है; (5) यथार्थ में मुझ आत्मा, ज्ञायक और ज्ञानपर्याय, ज्ञेय इस भेद से भी कोई सिद्धि नहीं है - बस मैं ज्ञायक, मैं ज्ञायक...., मैं ज्ञायक हूँ - ऐसा पता चल जाता है; (6) प्रमेयत्वगुण के मानने से लौकिक में भी सब पापों और सप्त व्यसनों से छूट जाता है; (7) प्रमेयत्वगुण का रहस्य जानते ही चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक क्या करते हैं - यह सब पता चल जाता है; (8) निगोद से लगाकर चारों गतियों के मिथ्यादृष्टि जीव, संसार में क्यों पागल हैं - यह भी प्रमेयत्वगुण का रहस्य जानने से पता चल जाता है; (9) परपदार्थों में तथा शुभाशुभभावों में स्व-स्वामीसम्बन्ध का अभाव हो जाता है; (10) शरीर में रोग हो जावे; अन्धा हो जावें; हाथ कट जावें; ब्लैड प्रेशर हो जावे; टी०वी० हो जावे तो भी प्रमेयत्वगुण का रहस्य जानने से शान्ति की प्राप्ति हो जाती है; (11) धन चोरी हो जावे; कारखाना फेल हो जावे; देश पर बम पड़ने लगे; कोई गाली दे या प्रशंसा करे; लड़का भाग जावे; स्त्री आज्ञा में न चलें; स्त्री मर जावें; नोट जल जावें; विवाह हो जावे; बच्चे न होवें; तो भी प्रमेयत्वगुण का रहस्य जानने से आकुलता का अभाव हो जाता है; (12) प्रमेयत्वगुण का रहस्य जानते ही चौथे गुणस्थानवाले का सिद्ध के साथ सम्बन्ध हो जाता है; (13) जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रमेयत्वगुण हैं - ऐसा पता चल जाता है। ●●

15

अगुरुलघुत्वगुण

यह गुण अगुरुलघु भी सदा, रखता महत्ता है महा,
गुण-द्रव्य को पररूप यह, होने न देता है अहा;
निज गुण-पर्यय सर्व ही, रहते सतत् निज भाव में,
कर्ता न हर्ता अन्य कोई, यों लखो स्व-स्वभाव में॥

प्रश्न 1 – अगुरुलघुत्वगुण किसे कहते हैं?

उत्तर – जिस शक्ति के कारण, द्रव्य का द्रव्यत्व बना रहे, अर्थात्

(1) एक द्रव्य, दूसरे द्रव्यरूप नहीं हो;

(2) एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं हो;

(3) द्रव्य में विद्यमान अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग न हो जाएँ, उस शक्ति को अगुरुलघुत्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 2 – अपने जीवद्रव्य में अगुरुलघुत्वगुण के कारण उसके द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की मर्यादा क्या है?

उत्तर – (1) अनन्त गुणों का पिण्ड मुझ जीवद्रव्य का स्वद्रव्यपना स्थायी रहता है। वह कभी भी दूसरे अनन्त जीवरूप; अनन्तानन्त पुद्गलरूप; धर्म, अधर्म, आकाश और कालरूप; द्रव्यकर्मरूप; आँख-नाक-शरीररूप; मन-वाणीरूप नहीं होता है।

(2) मुझ जीवद्रव्य का असंख्यात प्रदेशी स्वक्षेत्र, द्रव्यकर्म के

क्षेत्ररूप, पुद्गल आदि दूसरे द्रव्यों के क्षेत्ररूप; आँख-नाक-शरीर के क्षेत्ररूप; सम्मेदशिखर, गिरनार आदि क्षेत्ररूप कभी भी नहीं होता है।

(3) मुझ जीव के गुणों की पर्यायें अपने-अपनेरूप होती हैं; परद्रव्य के गुणों की पर्यायोंरूप नहीं होती हैं। मेरे एक गुण की पर्याय, दूसरे गुणों की पर्यायरूप नहीं होती हैं। जिस गुण की पर्याय है, वह पर्याय आगे-पीछे नहीं होती है। (4) मुझ जीवद्रव्य में अनन्त गुण हैं, वह जिसरूप हैं, सदा काल उसी रूप रहते हैं; कभी बिखरकर अलग-अलग नहीं होते हैं।

प्रश्न 3 – यह तो आपने अपने जीवद्रव्य में अगुरुलघुत्वगुण के कारण द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की बात की, अब प्रत्येक द्रव्य के विषय में क्या मर्यादा है, जरा स्पष्टरूप से समझाओ ?

उत्तर – विश्व में जीव अनन्त, जीव से अनन्तगुने अधिक पुद्गलद्रव्य हैं, धर्म-अधर्म – आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इनमें एक द्रव्य से दूसरे द्रव्य का किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य की अपेक्षा अद्रव्य, अक्षेत्र, अकाल और अभावरूप है। जैसे, एक पुद्गलपरमाणु है, उसका दूसरे पुद्गलों से, जीवों से, अन्य द्रव्यों से कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि 'अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा लिये परिणमै हैं, कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाहीं।'

प्रश्न 4 – छह द्रव्यों के गुण-पर्यायों की मर्यादा की स्वतन्त्रता जानने से क्या-क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) प्रत्येक द्रव्य अपने स्वचतुष्टय से है, परचतुष्टय से नहीं है। इससे अपना हित और अहित अपने से ही होता है – ऐसा यथार्थ ज्ञान हो जाता है। (2) मुझे संसार का कोई भी द्रव्यकर्म,

नोकर्म, हानि–लाभ नहीं कर सकता। (3) मैं अनादि–अनन्त भगवान हूँ; मेरा किसी से भी सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अपने स्वभाव का आश्रय लें, तो धर्म की प्राप्ति हो।

प्रश्न 5 – क्या द्रव्यकर्म के अनुसार जीवों में कार्य होता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि ऐसी उल्टी मान्यतावाले ने दो द्रव्यों को स्वतन्त्र नहीं जाना और द्रव्य में अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 6 – छह द्रव्यों के गुण–पर्यायों की मर्यादा की स्वतन्त्रता किस गुण से है ?

उत्तर – अगुरुलगुत्वगुण से है।

प्रश्न 7 – अगुरुलघुत्वगुण से क्या–क्या पता चलता है ?

उत्तर – (1) एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है; (2) एक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं; उन अनन्त गुणों का आपस में भी सम्बन्ध नहीं है क्योंकि प्रत्येक गुण का भाव पृथक–पृथक है; (3) एक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, वे बिखरकर अलग–अलग नहीं होते हैं क्योंकि उन गुणों का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है; (4) एक गुण की पर्याय का, उसी गुण की भूत–भविष्य की पर्यायों से भी सम्बन्ध नहीं है; इस प्रकार अगुरुलघुत्वगुण से स्वतन्त्रता का पता चलता है।

प्रश्न 8 – क्या एक द्रव्य में रहनेवाले अनन्त गुण परस्पर एक दूसरे का कार्य करते हैं ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि अगुरुलघुत्वगुण के कारण एक गुण, दूसरे गुणरूप नहीं होता; इसलिए एक गुण का कार्यक्षेत्र दूसरे गुण में नहीं आता है।

प्रश्न 9 – एक द्रव्य के आश्रित एक गुण, दूसरे गुण में कार्य क्यों नहीं करता है ?

उत्तर – प्रत्येक गुण नित्य परिणमनस्वभावी होने से प्रति समय अपनी नयी–नयी पर्यायें उत्पन्न करता है। इस प्रकार एक द्रव्य के आश्रित गुणों में भी स्वतन्त्रता होने से एक गुण का, दूसरे गुण के साथ कर्ता–कर्मसम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 10 – एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य से सम्बन्ध नहीं है परन्तु अन्दर अनन्त गुणों से भी सम्बन्ध नहीं है, इस बाता को स्पष्ट करिए ?

उत्तर – (1) जैसे, किसी जीव को सम्यग्दर्शन हो गया तो वहाँ अभी चारित्र, ज्ञान, दर्शन, वीर्यगुण की पर्यायों में कमी है; (2) चारित्रगुण, पर्याय में पूर्ण हो गया तो ज्ञान, दर्शन, वीर्यगुणों की पर्यायें अपूर्ण हैं; (3) ज्ञान, दर्शन, वीर्यगुण की पर्यायें पूर्ण हो गयी, तो योगगुण की पर्याय, विकारी हैं; (4) योगगुण, पर्याय में शुद्ध हो गया तो क्रियावती–शक्ति आदि गुणों की पर्यायों में अशुद्धि है। उसी प्रकार पुद्गल में स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण हैं; आम खट्टा हो, ऊपर से पीला हो; और मीठा हो, ऊपर से हरा हो; इसलिए एक गुण का, दूसरे गुण से सम्बन्ध नहीं है। जब एक ही द्रव्य में पाये जानेवाले गुणों में आपस में एक दूसरे का कर्ता–कर्मसम्बन्ध नहीं है, तो हम पर का करें, यह कैसे हो सकता है ? ऐसा जानकर, अपने स्वभाव का आश्रय लेना ही पात्र जीव का कर्तव्य है।

प्रश्न 11 – (1) गुरु से ज्ञान की प्राप्ति हुई; (2) मैं चश्मे से पुस्तक को पढ़कर ज्ञान करता हूँ; (3) ब्राह्मी तेल के प्रयोग से ज्ञान बढ़ता है; (4) दूध में दही मिलाने से दही जम जाता है;

(5) शास्त्र से ज्ञान होता है – आदि वाक्यों में कौन से गुण को नहीं माना और कब माना, स्पष्ट करो ?

उत्तर – (1) 'गुरु को ज्ञान की प्राप्ति हुई'– इस वाक्य में गुरु और शिष्य की आत्मा में एक द्रव्य से, दूसरे द्रव्य का सम्बन्ध नहीं है। यदि गुरु से ज्ञान माने तो अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना और ज्ञान की प्राप्ति, अपने ज्ञानगुण में से हुई; गुरु से नहीं, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना। (2) मैं चश्मे से पुस्तक पढ़कर ज्ञान करता हूँ – तो अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना और ज्ञान, ज्ञानगुण से होता है; चश्मा या पुस्तक से नहीं, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना। (3) ब्राह्मी तेल से ज्ञान बढ़ता है – अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना और ज्ञान, ज्ञानगुण से बढ़ता है; तेल से नहीं, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना है। (4) दूध में दही मिलाने से दही जमता है – अगुरु-लघुत्वगुण को नहीं माना और दूध अपनी योग्यता से जमता है; दही से नहीं, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना। (5) शास्त्र से ज्ञान होता हैं – अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना और ज्ञान, ज्ञान से होता है; शास्त्र से नहीं, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना।

प्रश्न 12 – जीव, पुद्गल में करता है – ऐसा माने तो किस-किस को नहीं माना ?

उत्तर – (1) जीव और पुद्गल का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक है। जब द्रव्य में रहनेवाले अनन्त गुण आपस में एक-दूसरे का कुछ नहीं करते, तब पृथक्-पृथक् द्रव्य एक-दूसरे का कार्य करें, यह बात ही मिथ्या है। (2) जीव, पुद्गल में कुछ करता है – ऐसी मान्यतावाले ने अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना (3) जीव और पुद्गल अपना-अपना अस्तित्व रखते हुए, अपना प्रयोजनभूत कार्य करते हुए, निरन्तर बदलते है; जीव, पुद्गल में करता है – ऐसी

मान्यतावाले ने दोनों के (जीव-पुद्गल के) अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्वगुण को भी नहीं माना।

प्रश्न 13 – एक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; उनका द्रव्य क्षेत्र-काल एक ही है, तब एक गुण, दूसरे गुण में कार्य क्यों नहीं कर सकता?

उत्तर – प्रत्येक गुण के भाव में अन्तर होने से एक गुण, दूसरे गुण में कुछ भी कार्य नहीं कर सकता है।

प्रश्न 14 – द्रव्य के विद्यमान अनन्त गुण, बिखर कर अलग-अलग क्यों नहीं होते हैं?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य के गुणों का द्रव्य-क्षेत्र-काल एक ही होने से वह द्रव्य से बिखरकर अलग-अलग नहीं हो सकते हैं।

प्रश्न 15 – मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में (1) अगुरुलघुत्वगुण को कब माना, और (2) कब नहीं माना?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में जितने पुद्गल परमाणु हैं, वे सब मुझ आत्मा से पृथक हैं, क्योंकि इन सबका और मुझ निज आत्मा का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक-पृथक है – ऐसा अनुभव-ज्ञान वर्ते तो अगुरुलघुत्वगुण को माना (2) संयोगरूप पुद्गल परमाणुओं में ही आत्मपने की बुद्धि होना, अर्थात् मैं मनुष्य हूँ, तो अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 16 – संयोगरूप पुद्गलों में ही अपनेपने की, अर्थात् मैं मनुष्य हूँ – ऐसी बुद्धि का क्या फल है?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस खोटी बुद्धि का फल है।

प्रश्न 17 – संयोगरूप पुद्गलों में – मैं मनुष्य हूँ – ऐसी

निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना कहा जाए ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गल परमाणु हैं; इन परमाणुओं में आपस में एक जाति होते हुए भी किसी प्रकार का कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, तब फिर ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी मुझ निज आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है। प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–का–भाव पृथक्–पृथक् है – ऐसा जानकर, ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का आश्रय ले तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो, तब अगुरुलघुत्वगुण को माना। फिर अनुपचरितअसदभूतव्यवहानय से, मैं मनुष्य हूँ — ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 18 – आदिनाथ भगवान ने दूसरे जीवों का कल्याण किया; मैं दूसरों का भला कर सकता हूँ; दिव्यध्वनि से ज्ञान की प्राप्ति होती है; नेमिनाथ भगवान ने राजुल का भला किया; धर्मद्रव्य ने जीव को चलाया; दर्शनमोहनीय के उपशम से औपशामिकसम्यक्त्व की प्राप्ति हुई; अन्तरायकर्म के क्षय से क्षायिकवीर्य प्रकट हुआ; आँखों से ज्ञान होता है; निमित्त से उपादान में कार्य होता है; एक परमाणु दूसरे परमाणु में कुछ करता है। इन वाक्यों पर अगुरुलघुत्वगुण को स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर – इन सभी वाक्यों पर पूर्व 14 से 18 प्रश्नोत्तरानुसार स्वयं अभ्यास करें।

प्रश्न 19 – भगवान महावीर स्वामी ने दूसरे जीवों का कल्याण किया

– ऐसा मानने से (1) क्या–क्या दोष आता है; और (3)

कौन-कौन से सामान्यगुणों को नहीं माना ?

(3) क्या मानने से कोई दोष नहीं आता है; और (4) क्या मानने से कौन-कौन से सामान्यगुणों को माना ?

उत्तर - (1) भगवान महावीरस्वामी तथा दूसरे जीवों का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है, तब भगवान दूसरे जीवों का कल्याण करे तो भगवान के स्वचतुष्टय के अभाव का प्रसङ्ग उपस्थित होता है। (2) भगवान महावीरस्वामी ने दूसरे जीवों का कल्याण किया - ऐसी मान्यतावाले ने अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना। (3) भगवान महावीरस्वामी कायम रहते हुए, अपनी जाननेरूप प्रयोजनभूतक्रिया करते हुए; निरन्तर जाननेरूप कार्य कर रहे हैं और दूसरे जीव भी कायम रहते हुए; अपनी-अपनी जाननेरूप क्रिया करते हुए; निरन्तर जाननेरूप कार्य कर रहे हैं। भगवान महावीरस्वामी तथा दूसरे जीवों का कार्य अपने-अपने अस्तित्व-वस्तुत्व-द्रव्यत्वगुण से हो रहा है, परन्तु महावीरस्वामी ने दूसरे जीवों का भला किया -ऐसी मिथ्या मान्यतावाले ने भगवान महावीरस्वामी के साथ, दूसरे जीवों के अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्वगुण को नहीं माना।

(1) भगवान महावीरस्वामी का तथा दूसरे जीवों का द्रव्य -क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है, तब दोनों की सत्ता भिन्न-भिन्न मानी। (2) भगवान् महावीरस्वामी ने दूसरे जीवों का कल्याण किया ही नहीं - ऐसी मान्यतावाले ने अगुरुलघुत्वगुण को माना। (3) भगवान महावीरस्वामी तथा दूसरे जीव अपने-अपने से कायम रहते हुए; अपनी-अपनी प्रयोजनभूतक्रिया करते हुए; अपने-अपने से निरन्तर बदल रहे हैं - ऐसी मान्यतावाले ने भगवान महावीरस्वामी तथा दूसरे जीवों के अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्वगुण को माना।

प्रश्न 20 - (1) शान्तिनाथ भगवान दूसरे जीवों को शान्ति

देते है; (2) पार्श्वनाथ भगवान दूसरे जीवों के संकट मिटा देते हैं; (3) महावीर भगवान जीवों को धन देते हैं; (4) एक परमाणु, दूसरे परमाणु में कुछ करता है; (5) निमित्त से उपादान में कार्य होता है; (6) दिव्यध्वनि सुनने से सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है।

– ऐसी मान्यता में क्या-क्या दोष आता है और कौन-कौन से सामान्यगुण को नहीं माना ?

कैसी मान्यता में कोई दोष नहीं आता है और कैसा मानने से सामान्यगुणों को माना ?

उत्तर – इन सभी प्रश्नों पर पूर्व प्रश्नोत्तरानुसार स्वयं अभ्यास करें।

प्रश्न 21 – श्रद्धान पूर्ण होते ही चारित्र पूर्ण हो जाना चाहिए – ऐसी मान्यतावाला क्या भूलता है ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वगुण के दूसरे नम्बर को भूलता है और श्रद्धान पूर्ण होते ही चारित्र पूर्ण हो जाना चाहिए तो उसने श्रावकदशा, और मुनिदशा, श्रेणी को भी उड़ा दिया।

प्रश्न 22 – जब जिनेन्द्र भगवान ने द्रव्य-गुण-पर्याय की इतनी स्वतन्त्रता बतायी है, तब यह अज्ञानी जीव क्यों विश्वास नहीं करता है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है, इसलिए विश्वास नहीं करता है।

प्रश्न 23 – एक गुण, दूसरे गुण में कुछ नहीं करता है तो अस्तित्वगुण कायम रखता है; वस्तुत्वगुण सबका प्रयोजनभूत कार्य कराता है और द्रव्यत्वगुण निरन्तर बदलाता है – ऐसा क्यों कहा जाता है ?

उत्तर – यह व्यवहारकथन है। एक गुण की वर्तमान पर्याय होने में, दूसरे गुण की वर्तमान पर्याय निमित्त कहलाती है।

प्रश्न 24 – एक गुण की पर्याय का, दूसरे गुण की पर्याय के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – निमित्ति–नैमित्तिकसम्बन्ध है; कर्ता–कर्मसम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न 25 – निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध तो दो द्रव्यों की स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में आपने बताया था; अब आपस में एक गुण की पर्याय का, दूसरे गुण की पर्याय में भी निमित्त–नैमित्तिक–सम्बन्ध है – ऐसा आप कहते हो ? दोनों में सत्य क्या है ?

उत्तर – दोनों ही सत्य हैं।

प्रश्न 26 – क्या ज्ञानगुण, अस्तित्वगुण से कायम है ?

उत्तर – ज्ञानगुण अपने से कायम है; अस्तित्वगुण उसमें निमित्त है।

प्रश्न 27 – क्या ज्ञानगुण, वस्तुत्वगुण से अपना प्रयोजनभूत कार्य कराता है ?

उत्तर – ज्ञानगुण अपना प्रयोजनभूत कार्य अपने से करता है; वस्तुत्वगुण उसमें निमित्त है।

प्रश्न 28 – क्या ज्ञानगुण, द्रव्यत्वगुण के कारण निरन्तर बदलता है ?

उत्तर – ज्ञानगुण स्वयं से बदलता है; उसमें द्रव्यत्वगुण निमित्त है।

प्रश्न 29 – (1) क्या श्रद्धागुण, अस्तित्वगुण से कायम है ? (2) क्या श्रद्धागुण का प्रयोजनभूत कार्य, वस्तुत्वगुण से है ? (3) क्या श्रद्धागुण, निरन्तर द्रव्यत्वगुण से बदलता है ? (4) क्या शुभभाव से चारित्र की शुद्धि होती है ? (5) क्या सब गुण, प्रमेयत्वगुण के कारण ज्ञेय हैं ?

उत्तर – (1) श्रद्धागुण, अपने से कायम है, अस्तित्वगुण निमित्त है; इसी प्रकार शेष चार प्रश्नों के उत्तर समझना चाहिए।

प्रश्न 30 – अगुरुलघुत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों है ?

उत्तर – जितना बड़ा द्रव्य का क्षेत्र है, उतना बड़ा क्षेत्र अगुरु –लघुत्वगुण का है क्योंकि अगुरुलघुत्वगुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में होता है।

प्रश्न 31 – अगुरुलघुत्वगुण का काल कितना है और क्यों है ?

उत्तर – जितना काल, द्रव्य का है, उतना ही काल अगुरुलघुत्वगुण का है क्योंकि अगुरुलघगुत्वगुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल पाया जाता है।

प्रश्न 32 – एक परमाणु के अगुरुलघुत्वगुण का क्षेत्र कितना है ?

उत्तर – एक प्रदेशी है।

प्रश्न 33– आकाश के अगुरुलघुत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है ?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी है।

प्रश्न 34 – क्या धर्मादि द्रव्यों में भी अगुरुलघुत्वगुण है ?

उत्तर – हाँ है, क्योंकि धर्मादि भी द्रव्य हैं। अगुरुलघुत्वगुण, प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है; इसलिए धर्मादि द्रव्यों में भी अगुरुलघुत्वगुण है।

प्रश्न 35 – संसारदशा में गुण कम हों और सिद्धदशा होने पर ज्यादा हो जावें –क्या ऐसा होता है ?

उत्तर – कभी नहीं, क्योंकि द्रव्य में अगुरुलघुत्वगुण होने से गुणों की संख्या और शक्ति कम–ज्यादा नहीं होती है और गुण, सर्व अवस्थाओं में जितने हैं, उतने ही रहते हैं।

प्रश्न 36 – अगुरुलघुत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – द्रव्य–गुण–पर्याय की स्वतन्त्रता को बताता है।

प्रश्न 37 – विश्व में जाति अपेक्षा अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इसलिए जाति अपेक्षा छह अगुरुलघुत्वगुण हैं।

प्रश्न 38 – विश्व में संख्या अपेक्षा अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जीवों के अगुरुलघुत्वगुण अनन्त; पुद्गलों के अनन्तानन्त; धर्म–अधर्म–आकाश के एक–एक, और कालद्रव्य के लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 39 – अगुरुलघुत्वगुण, जड़ है या चेतन है।

उत्तर – जीव का अगुरुलघुत्वगुण चेतन है, बाकी द्रव्यों का जड़ है।

प्रश्न 40 – संख्या अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जीवों के असंख्यात प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण, अनन्त हैं और धर्म–अधर्मद्रव्य के असंख्यात प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण, एक –एक हैं।

प्रश्न 41 – जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण असंख्यात प्रदेशी है ?

उत्तर – जीव–धर्म–अधर्म, इन तीन द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण असंख्यात प्रदेशी है।

प्रश्न 42 – अनन्त प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं और किस द्रव्य के हैं ?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण एक ही है और आकाश–द्रव्य का है।

प्रश्न 43 – संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के एक प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण, अनन्तानन्त हैं और कालद्रव्य के एक प्रदेशी अगुरुलघुत्वगुण, लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 44 – जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण, एक प्रदेशी है ?

उत्तर – पुद्गल और कालद्रव्य का अगुरुलघुत्वगुण, एक प्रदेशी है।

प्रश्न 45 – किन द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण, गति करता है ?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का अगुरुलघुत्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 46 – किन द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण, गति नहीं करता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्म–आकाश और काल, इन चार द्रव्यों का अगुरुलघुत्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 47 – एक आत्मा में अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – एक आत्मा में एक ही अगुरुलघुत्वगुण है।

प्रश्न 48 – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर में अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही अगुरुलघुत्वगुण हैं।

प्रश्न 49 – शब्द में अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु हैं, उतने ही अगुरुलघुत्वगुण हैं।

प्रश्न 50 – द्रव्यमन में अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु है, उतने ही अगुरुलघुत्वगुण हैं।

प्रश्न 51 – विश्व में अगुरुलघुत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – जितने विश्व में द्रव्य हैं, उतने ही सामान्य अगुरुलघुत्व-गुण हैं।

प्रश्न 52 – विश्व में जितने द्रव्य, उतने ही सामान्य अगुरुलघुत्वगुण हैं – यह किसने बताया है ?

उत्तर – जिन-जिनवर-जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 53 – जिन-जिनवर-जिनवरवृषभों के इस कथन से क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – अनन्त ज्ञानियों का एक मत है।

प्रश्न 54 – इस बात को सुनकर ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – केवली के समान विश्व के अगुरुलघुत्वगुणों को जानता है और अगुरुलघुत्वगुणरूप अभेद आत्मा में विशेष एकाग्रता करके, श्रेणी माँडकर, निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 55 – अनन्त ज्ञानियों की इस बात सुनकर, सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – अहो ! जिनवचन महान उपकारी हैं ! – ऐसा जानकर, अगुरुलघुत्वगुणरूप निज आत्मा का आश्रय करके, ज्ञानी बनकर, ज्ञानी की तरह निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 56 – अनन्त ज्ञानियों की इस बात को सुनकर, अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है?

उत्तर – जिनेन्द्र की वाणी का निषेध करके निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 57 – संक्षिप्त में, सामान्य अगुरुलघुत्वगुण क्या बताता है?

उत्तर – (1) विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक, कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। इनमें आपस में किसी भी प्रकार का कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक्–पृथक् है। (2) प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण का भाव अलग–अलग है। (3) प्रत्येक द्रव्य में जितने गुण हैं, उतने सदैव ऐसे के ऐसे रहते हैं; किसी भी अवस्था में पृथक्पना नहीं होता है क्योंकि द्रव्य के गुणों का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है – ऐसा अगुरुलघुत्वगुण बताता है।

प्रश्न 58 – अगुरुलघुत्वगुण को जानने से क्या–क्या लाभ इस पाठ में बताये हैं?

उत्तर – (1) एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्यों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है। (2) एक द्रव्य में अनन्त गुण हैं; एक गुण का, दूसरे गुणों के साथ सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक गुण का भाव पृथक्–पृथक् है। (3) द्रव्य के अनन्त गुण बिखरकर अलग–अलग नहीं होते हैं, क्योंकि द्रव्य और गुण का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है। (4) प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान है, यह पता चल जाता है। (5) एक गुण की पर्याय का, दूसरे गुणों की पर्यायों से

सम्बन्ध नहीं हैं, क्योंकि प्रत्येक गुण की पर्याय का कार्य पृथक्-पृथक् है। (6) एक गुण की वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्याय से सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक पर्याय का भाव पृथक्-पृथक् है तथा वर्तमान पर्याय का भूत की पर्याय में प्रागभाव है। (7) एक गुण की वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्याय से सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक पर्याय का भाव पृथक्-पृथक् है तथा वर्तमान पर्याय का भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है। (8) जितने द्रव्य हैं, उतने ही सामान्य अगुरुलघुत्वगुण हैं।

प्रश्न 59 - अगुरुलघुत्वगुण का रहस्य जानने के लिए पाँच बोल क्या-क्या हैं?

उत्तर - (1) अनादि काल से आज तक किसी भी परद्रव्य ने मेरा भला-बुरा किया ही नहीं। (2) अनादि काल से आज तक मैंने भी किसी परद्रव्य को भला-बुरा किया ही नहीं। (3) अनादि काल से आज तक नुकसानी का ही धन्धा किया है; यदि नुकसानी नहीं की होती, तो संसार परिभ्रमण मिट गया होता, सो हुआ नहीं। (4) वह नुकसानी, मात्र एक समय की पर्याय में ही है; द्रव्य-गुण में नहीं। (5) पर्याय की नुकसानी मिटानी हो और पर्याय में शान्ति लानी हो तो एकमात्र अपने अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड ज्ञायकस्वभाव का आश्रय कर। ●●

16

प्रदेशत्वगुण

प्रदेशत्वगुण की शक्ति से, आकार द्रव्य धरा करे,
निज क्षेत्र में व्यापक रहें, आकार भी पलटा करे;
आकार हैं सब के अलग, हो लीन अपने ज्ञान में,
जानों इन्हें सामान्यगुण, रक्खो सदा श्रद्धान में॥

प्रश्न 1 – प्रदेशत्वगुण किसे कहते हैं?

उत्तर – जिस शक्ति के कारण, द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है, उस शक्ति को प्रदेशत्वगुण कहते हैं।

प्रश्न 2 – प्रदेशत्वगुण क्या है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 3 – सिद्धभगवान निराकार हैं या साकार हैं?

उत्तर – सिद्धभगवान दोनों हैं क्योंकि पुद्‌गल जैसा आकार नहीं है, इस अपेक्षा सिद्धभगवान निराकार हैं और प्रदेशत्वगुण के कारण उनका आकार है; इसलिए साकार हैं।

प्रश्न 4 – प्रत्येक आत्मा, साकार-निराकार किस-प्रकार से है?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण के कारण प्रत्येक आत्मा का अरूपी आकार है; इसलिए साकार है और आत्मा का पुद्‌गल जैसा रूपी आकार नहीं है; इसलिए निराकार है।

प्रश्न 5 – क्या द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों का आकार भिन्न-भिन्न अथवा छोटा-बड़ा है ?

उत्तर – नहीं; द्रव्य का आकार ही गुण-पर्याय का आकार है; तीनों का क्षेत्र एक है; इसलिए द्रव्य-गुण और पर्याय का आकार एक समान है; छोटा-बड़ा नहीं है।

प्रश्न 6 – द्रव्य-गुण, अनादि-अनन्त हैं; पर्याय, एक समय की है तो उसमें किसका आकार बड़ा है ?

उत्तर – दोनों का, अर्थात् द्रव्य-गुण का और पर्याय का आकार एक-सा है।

प्रश्न 7 – कुछ चीजों का आकार दीर्घकाल तक एक-सा दिखायी देता है, तो उसे परिवर्तित होने में कितना समय लगता है ?

उत्तर – प्रति समय आकार निरन्तर बदलते ही रहते हैं, किन्तु स्थूलदृष्टि से उनका आकार दीर्घकाल तक एक-सा दिखायी देता है।

प्रश्न 8 – सोने में से मुकुट बना, तो उसमें कौन-सा गुण कारण है ?

उत्तर – आकार बदला, उसमें प्रदेशत्वगुण कारण है और पुरानी अवस्था बदली, इसमें द्रव्यत्वगुण कारण है।

प्रश्न 9 – प्रदेशत्वगुण का शुद्धपरिणमन अनादि-अनन्त किस द्रव्य में होता है ?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्य में प्रदेशत्वगुण का अनादि-अनन्त शुद्धपरिणमन होता है।

प्रश्न 10 – प्रदेशत्वगुण के परिणमन को क्या कहते हैं ?

उत्तर – व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 11 – प्रदेशत्वगुण का सादि-अनन्त शुद्धपरिणमन किस द्रव्य में, किस समय होता है ?

उत्तर – जीवद्रव्य में, 14वें गुणस्थान के बाद सिद्धदशा में प्रदेशत्वगुण का सादि–अनन्त शुद्धपरिणमन होता है।

प्रश्न 12 – प्रदेशत्वगुण का सादि–सान्त शुद्धपरिणमन का किस द्रव्य में, कब और किस समय होता है ?

उत्तर – परमाणु में होता है। परमाणु, वापस स्कन्ध और स्कन्ध से छूटकर परमाणु हो जाने से उसके प्रदेशत्वगुण का शुद्ध परिणमन सादि–सान्त है।

प्रश्न 13 – अरहन्तदशा में प्रदेशत्वगुण का परिणमन कैसा है ?

उत्तर – विभावरूप परिणमन है।

प्रश्न 14 – जीवद्रव्य में प्रदेशत्वगुण का विभावरूप परिणमन कब से और कहाँ तक है ?

उत्तर – जीवद्रव्य में निगोद से लगाकार 14वें गुणस्थान तक प्रदेशत्वगुण का परिणमन, विभावरूप ही रहता है।

प्रश्न 15 – प्रत्येक द्रव्य में व्यंजनपर्याय कितनी होती हैं ?

उत्तर – एक ही होती है।

प्रश्न 16 – क्या सिद्धदशा में प्रदेशत्वगुण के कारण सब का आकार एक सा होता है ?

उत्तर – नहीं, क्योंकि सिद्धदशा में सबका आकार छोटा–बड़ा, अलग–अलग होता है।

प्रश्न 17 – क्या परमाणु के प्रदेशत्वगुण का आकार एक –सा है ?

उत्तर – सब परमाणुओं का आकार एक सा ही है।

प्रश्न 18 – प्रदेशत्वगुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों है ?

उत्तर – जितना द्रव्य का क्षेत्र है, उतना ही क्षेत्र, प्रदेशत्वगुण का है, क्योंकि प्रदेशत्वगुण, द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में होता है।

प्रश्न 19 – प्रदेशत्वगुण का काल कितना है और क्यों है ?

उत्तर – जितना द्रव्य का काल है, उतना ही काल, प्रदेशत्वगुण का है, क्योंकि प्रदेशत्वगुण, द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्रश्न 20 – मैं मनुष्य हूँ — इस वाक्य में (1) प्रदेशत्वगुण को कब माना, और (2) कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्मण-भाषा-मन में पुद्गलों के एक-एक प्रदेशी अनन्त आकारों से, मुझ चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार का, किसी भी अपेक्षा, किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा अनुभव-ज्ञान वर्तें तो प्रदेशत्वगुण को माना। (2) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक निज आकार को भूलकर, संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में पुद्गलों के अनन्त एक प्रदेशी आकारों में, मैं मनुष्य हूँ— ऐसी मान्यतावाले ने प्रदेशत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 21 – पुद्गलों के एक प्रदेशी अनन्त आकारों में, चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी निज आत्मा की कल्पना का क्या फल है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल है।

प्रश्न 22 – पुद्गलों के आकारों में आत्मापने की निगोदबुद्धि अभाव कैसे हो, तब प्रदेशत्वगुण को माना कहा जाए ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन के

एक प्रदेशी अनन्त आकारों का, मुझ चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक आकार का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक्–पृथक् है। ऐसा जानकर, निज चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकाररूप स्वभाव का आश्रय ले, तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो, तब प्रदेशत्वगुण को माना; फिर अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से, मैं मनुष्य हूँ – ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं ।

प्रश्न 23 – कुम्हार ने घड़ा बनाया; मैं मेज बनाता हूँ; मैं मकान बनाता हूँ; मैंने किताब बनायी; महावीर स्वामी ने कर्मों का नाश किया; सिद्ध भगवान ने आठ कर्मों का नाश किया; मैंने रोटी बनायी; सम्यग्दृष्टि जीव ने दर्शनमोहनीयकर्म का क्षय किया; मैं जोर शोर से बोलता हूँ; मैं काला हूँ — इन वाक्यों में प्रदेशत्वगुण को स्पष्ट समझाइए ?

उत्तर – इन वाक्यों पर पूर्व प्रश्नोत्तरानुसार स्वयं अभ्यास करें।

प्रश्न 24 – प्रदेशत्वगुण को छोड़कर, बाकी गुणों के परिणमन को क्या कहते हैं ?

उत्तर – अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 25 – प्रदेशत्वगुण क्या सूचित करता है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य के आकार को सूचित करता है।

प्रश्न 26 – यह मेज है – क्या इसका एक ही आकार है ?

उत्तर – नहीं; मेज में जितने परमाणु हैं, उतने आकार हैं।

प्रश्न 27 – प्रदेशत्वगुण, रूपी है या अरूपी है ?

उत्तर – पुद्गल का प्रदेशत्वगुण, रूपी है; बाकी द्रव्यों का अरूपी है।

प्रश्न 28 – प्रदेशत्वगुण जड़ है या चेतन है ?

उत्तर – दोनों हैं; आत्मा का प्रदेशत्वगुण, चेतन है; बाकी द्रव्यों का जड़ है।

प्रश्न 29 – प्रदेशत्वगुण के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – आकार, क्षेत्र, किलेबन्दी – सब प्रदेशत्वगुण के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 30 – लकड़ी के टुकड़े में कितने ही परमाणु हैं – क्या वे एक दूसरे में घुस गये हैं ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; पञ्चास्तिकाय, गाथा 81 में कहा है –लकड़ी के टुकड़े में एक-एक परमाणु पृथक्-पृथक् अपने-अपने गुण-पर्याय में वर्त रहा है – ऐसा ज्ञानी जानते हैं।

प्रश्न 31 – निमित्त, उपादान में घुसकर काम करता है – ऐसी मान्यतावाले ने किस गुण को नहीं माना ?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 32 – शास्त्रों में आता है कि जहाँ एक सिद्ध विराजमान हैं, वहाँ अनन्त सिद्ध विराजमान हैं, क्या सिद्धजीव एक दूसरे में मिल गये हैं ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; प्रत्येक सिद्धजीव अपने-अपने असंख्यात-प्रदेशी आकार में रहते हैं; एक-दूसरे में मिलते नहीं हैं। कोई कहे, मिल जाते हैं तो प्रदेशत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 33 – महावीर भगवान का आकार सात हाथ का, आदिनाथ भगवान का पाँच सौ धनुष का – ऐसा क्यों है ?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण के कारण है।

प्रश्न 34 – जिस स्थान में धर्मद्रव्य है, उसी स्थान में अधर्मद्रव्य है – क्या दोनों एक-दूसरे में मिल गये हैं ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि दोनों अपने-अपने असंख्यात -प्रदेशी आकार में, अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र, काल, भाव में रह रहे हैं। कोई कहे – मिल गये हैं तो प्रदेशत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 35 – किन-किन द्रव्यों का आकार नहीं होता है ?

उत्तर – ऐसा कोई भी द्रव्य नहीं है, जिसका आकार न हो, क्योंकि प्रदेशत्वगुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्यगुण है।

प्रश्न 36 – परमाणु और कालद्रव्य के प्रदेशत्वगुण का आकार कितना बड़ा है ?

उत्तर – प्रत्येक परमाणु और कालद्रव्य का आकार एक-एक प्रदेशी है।

प्रश्न 37 – द्रव्यों का आकार, रूपी है या अरूपी है ?

उत्तर – पुद्गल का आकार, रूपी है; बाकी द्रव्यों का आकार, अरूपी है।

प्रश्न 38 – आकार की अपेक्षा सबसे बड़ा कौन द्रव्य है ?

उत्तर – आकाशद्रव्य है।

प्रश्न 39 – आकार की अपेक्षा समान द्रव्य कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – धर्म-अधर्म, जीवद्रव्य – इन सब का असंख्यात प्रदेशी आकार है।

प्रश्न 40 – जीव का आकार तो छोटा-बड़ा होता है, वह धर्म -अधर्मद्रव्य के आकार के समान कैसे है ?

उत्तर – आकार तो एक-सा ही है, परन्तु जीवद्रव्य में संकोच

–विस्तार की शक्ति है; अतः संकोच–विस्तार होने पर भी जीव सदैव असंख्यात–प्रदेशी आकारवाला ही होता है।

प्रश्न 41 – प्रदेशत्वगुण और द्रव्यत्वगुण में क्या अन्तर है ?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण आकार को बताता है और द्रव्यत्वगुण, निरन्तर परिणमन को बताता है।

प्रश्न 42 – विश्व में आकार कितने हैं ?

उत्तर – जितने द्रव्य हैं, उतने ही आकार हैं।

प्रश्न 43 – जीव का आकार बड़ा हो तो लाभ हो और छोटा हो तो नुकसान हो – क्या ऐसा होता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; आकार, सुख–दुःख का कारण नहीं है।

प्रश्न 44 – जीव का प्रदेशत्वगुण शुद्ध हो जावे और गुणों में अशुद्धता रहे – क्या ऐसा होता है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं होता है, क्योंकि सिद्धदशा में प्रदेशत्वगुण, शुद्ध होता है और इसके साथ ही सब गुणों का परिणमन शुद्ध हो जाता है।

प्रश्न 45– प्रदेशत्वगुण को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – निज, चैतन्य अरूपी अपने असंख्यात प्रदेशों में एकत्व–बुद्धि करके लीन हो जाना, यह प्रदेशत्वगुण को जानने का लाभ है।

प्रश्न 46– प्रदेशत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – कोई भी वस्तु अपने स्वक्षेत्र/आकार के बिना नहीं होती और आकार छोटा हो या बड़ा हो, वह हानि–लाभ का कारण नहीं है, तथापि प्रत्येक द्रव्य का स्व–अवगाहनरूप अपना स्वतन्त्र आकार अवश्य होता है। एक के आकार से, दूसरे के आकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अपने असंख्यात प्रदेशी एक निज आकार

की ओर दृष्टि करके भगवान बनें – यह प्रदेशत्वगुण बताता है।

प्रश्न 47 – विश्व में जाति अपेक्षा प्रदेशत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इसलिए विश्व में जाति अपेक्षा छह प्रदेशत्वगुण हैं।

प्रश्न 48 – विश्व में संख्या अपेक्षा प्रदेशत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जीवों के अनन्त; पुद्गलों के अनन्तानन्त; धर्म-अधर्म द्रव्य के एक-एक; आकाशद्रव्य का एक; और कालद्रव्य के प्रदेशत्वगुण, लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 49 – संख्या अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी प्रदेशत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – जीवों के अनन्त हैं और धर्म-अधर्मद्रव्य के असंख्यात प्रदेशी प्रदेशत्वगुण एक-एक हैं।

प्रश्न 50 – जाति अपेक्षा कितने द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण असंख्यात प्रदेशी हैं?

उत्तर – जीव-धर्म-अधर्म इन तीन द्रव्यों के प्रदेशत्वगुण असंख्यात प्रदेशी हैं।

प्रश्न 51 – अनन्त प्रदेशी प्रदेशत्वगुण कितने और किसके हैं?

उत्तर – अनन्त प्रदेशी प्रदेशत्वगुण एक ही है और वह आकाशद्रव्य का है।

प्रश्न 52 – संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी प्रदेशत्वगुण कितने हैं?

उत्तर – पुद्गल के एक प्रदेशी प्रदेशत्वगुण अनन्तानन्त हैं और कालद्रव्य के एक प्रदेशी प्रदेशत्वगुण लोकप्रमाण असंख्यात हैं।

प्रश्न 53 – जाति अपेक्षा किन द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण एक प्रदेशी है ?

उत्तर – पुद्‌गल और कालद्रव्य, इन दो द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण एक प्रदेशी है।

प्रश्न 54 – किन द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण, गति करता है ?

उत्तर – जीव–पुद्‌गल का प्रदेशत्वगुण, गति करता है।

प्रश्न 55 – किन द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण, गति नहीं करता है ?

उत्तर – धर्म–अधर्म–आकाश और काल, इन चार द्रव्यों का प्रदेशत्वगुण, गति नहीं करता है।

प्रश्न 56 – एक जीव में प्रदेशत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – एक जीव में एक ही प्रदेशत्वगुण है।

प्रश्न 57 – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर में प्रदेशत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं।

प्रश्न 58 – शब्द में प्रदेशत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – शब्द में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं।

प्रश्न 59 – द्रव्यमन में प्रदेशत्वगुण कितने हैं ?

उत्तर – द्रव्यमन में जितने परमाणु हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं।

प्रश्न 60 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण क्यों हैं ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य में एक–एक ही प्रदेशत्वगुण होता है; इसलिए जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण होते हैं।

प्रश्न 61 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं, यह किसने बताया है ?

उत्तर – जिन–जिनवर–जिनवरवृषभों ने बताया है।

प्रश्न 62 – इससे क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – अनन्त ज्ञानियों का एक मत होता है –यह सिद्ध होता है।

प्रश्न 63 – अनन्त ज्ञानियों के इस कथन को सुनकर, ज्ञानी क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – केवली के समान विश्व के प्रदेशत्वगुणों को जान लेता है, तथा चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकाररूप स्वभाव में विशेष लीनता करके, श्रेणी माँडकर, निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 64 – इस कथन को सुनकर सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि जीव क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – अहो ! जिनवचन महान उपकारी हैं ! और अपने चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार की ओर दृष्टि करके, ज्ञानी बनकर, ज्ञानी की तरह निर्वाण को प्राप्त कर लेता है।

प्रश्न 65 – इस कथन को सुनकर अपात्र मिथ्यादृष्टि क्या जानता है और क्या करता है ?

उत्तर – जिनेन्द्र की वाणी का निषेध करके, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद चला जाता है।

प्रश्न 66 – जितने द्रव्य हैं, उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं – इस वाक्य से चार बातें कौन–कौन सी निकालनी चाहिए ?

उत्तर – (1) जिन–जिनवर–जिनवर वृषभ क्या कहते हैं ? (2) जिन–जिनवर–जनवर वृषभों के कथन को सुनकर ज्ञानी, क्या जानता है और क्या करता है। (3) सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि भव्य जीव, क्या जानता है और क्या करता है ? (4) मिथ्यादृष्टि अपात्र जीव, क्या जानता है और क्या करता है ?

प्रश्न 67 – संक्षिप्त में प्रदेशत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर – विश्व में जीवों के असंख्यात प्रदेशी अनन्त आकार हैं। पुद्गलों में एक-एक प्रदेशी अनन्तानन्त आकार हैं। धर्म-अधर्मद्रव्य के असंख्यात प्रदेशी एक-एक आकार है। आकाशद्रव्य का अनन्त प्रदेशी एक प्रकार है और कालद्रव्य के एक प्रदेशी लोकप्रमाण असंख्यात आकार हैं। प्रत्येक द्रव्य के आकार का द्रव्य-क्षेत्र-काल -भाव पृथक्-पृथक् है – ऐसा जानकर अपने चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक निज आकार में लीन होना, प्रदेशत्वगुण बताता है।

प्रश्न 68 – इस पाठ में प्रदेशत्वगुण को जानने से क्या-क्या लाभ बताए हैं ?

उत्तर – (1) कोई भी वस्तु आकार के बिना नहीं होती है; (2) छोटा-बड़ा आकार, सुख-दुःख का कारण नहीं है; (3) निमित्त, उपादान में नहीं घुस सकता, क्योंकि दोनों का आकार पृथक्-पृथक् है; (4) समानजातीय द्रव्यपर्याय में एक वस्तु का आकार, दूसरी वस्तुओं में नहीं घुस सकता, क्योंकि दोनों का स्वचतुष्टय भिन्न-भिन्न है; (5) सिद्धभगवान, साकार-निराकार दोनों हैं; उसी प्रकार प्रत्येक आत्मा, साकार-निराकार दोनों है – ऐसा पता चल जाता हैं; (6) निज, चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार का आश्रय ले, तो धर्म की शुरुआत होकर, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है; (7) परद्रव्यों के आकार का आश्रय माने तो चारों गतियों में घूमकर निगोद की प्राप्ति होती है; (8) जितने द्रव्य है; उतने ही प्रदेशत्वगुण हैं। ●●

17

पर्याय : स्वरूप, भेद एवं लाभ

प्रश्न 1 – पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुणों के विशेष कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 2 – (1) पर्याय का सच्चा ज्ञान हो तो क्या हो ? (2) पर्याय का ज्ञान किसे है, किसे नहीं है ?

उत्तर – (1) पर से मेरी पर्याय आती है – ऐसी मिथ्याबुद्धि का अभाव होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है। (2) पर्याय का सच्चा ज्ञान, सम्यग्दृष्टियों को ही होता है; मिथ्यादृष्टियों को नहीं होता है।

प्रश्न 3 – पर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं – व्यंजनपर्याय और अर्थपर्याय।

प्रश्न 4 – व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – द्रव्य के प्रदेशत्वगुण के कार्य को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 5 – अर्थपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण के अतिरिक्त शेष गुणों के कार्यों को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 6 – व्यंजनपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं – स्वभावव्यंजनपर्याय और विभावव्यंजन-पर्याय।

प्रश्न 7 – स्वभावव्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – परद्रव्य के सम्बन्धरहित द्रव्य का जो आकार हो, उसे स्वभावव्यंजनपर्याय कहते हैं; जैसे– सिद्धभगवान का आकार और परमाणु का आकार।

प्रश्न 8 – विभावव्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – परनिमित्त के सम्बन्धसहित द्रव्य का जो आकार हो, उसे विभावव्यंजनपर्याय कहते हैं; जैसे–जीव की नर–नारकादि पर्याय।

प्रश्न 9 – अर्थपर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं – स्वभावअर्थपर्याय और विभावअर्थपर्याय।

प्रश्न 10 – स्वभावअर्थपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – परनिमित्त के सम्बन्धरहित जो अर्थपर्याय होती है, उसे स्वभावअर्थपर्याय कहते हैं; जैसे – जीव का केवलज्ञान, क्षायिक –सम्यग्दर्शन आदि।

प्रश्न 11 – विभावअर्थपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – परनिमित्त के सम्बन्धसहित जो अर्थपर्याय होती है, उसे विभावअर्थपर्याय कहते हैंद्य जैसे – जीव में राग–द्वेषादिक।

प्रश्न 12 – जीव और पुद्गल में कौन–सी पर्यायें हो सकती हैं?

उत्तर – चारों प्रकार की पर्यायें, जीव और पुद्गल में हो सकती हैं। (1) स्वभावअर्थपर्यायें, (2) विभावअर्थपर्यायें, (3) स्वभाव–व्यंजनपर्याय, (4) विभावव्यंजनपर्यायें।

प्रश्न 13 – धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों में कौन–सी पर्यायें होती हैं?

उत्तर – इन चार द्रव्यों में मात्र स्वभावअर्थपर्यायें और स्वभाव–

व्यंजनपर्यायें ही होती हैं; विभावपर्यायें कभी नहीं होती हैं।

प्रश्न 14 – निगोद से लगाकर चारों गतियों के मिथ्यादृष्टि जीवों में कौन-सी पर्यायें होती हैं?

उत्तर – विभावअर्थपर्यायें और विभावव्यंजनपर्यायें ही होती हैं; स्वभावपर्यायें नहीं होती हैं।

प्रश्न 15 – सिद्धभगवान में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं?

उत्तर – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 16 – चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं?

उत्तर – विभावव्यंजनपर्याय, स्वभावअर्थपर्याय, और विभाव-अर्थपर्याय; इस प्रकार तीन प्रकार की पर्यायें होती हैं।

प्रश्न 17 – चौथे से चौदहवें गुणस्थान तक तीन पर्यायें एक-सी होती है या कुछ अन्तर है?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक जितनी शुद्धि है, वह स्वभावअर्थपर्याय है और जो अशुद्धि है, वह विभावअर्थपर्याय है। प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय ही है।

प्रश्न 18 – संसारदशा में चौथे से चौदहवें गुणस्थान तक अर्थपर्याय की शुद्धि और अशुद्धि को स्पष्ट समझाओ?

उत्तर – (1) चौथे गुणस्थान में श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय पूर्ण प्रगट हो जाती है; चारित्र में एकदेश स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो जाती है परन्तु पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट नहीं है। (2) बारहवें गुणस्थान में चारित्रगुण की पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो जाती है, किन्तु ज्ञान-दर्शन, वीर्य आदि गुणों में क्षयोपशमरूप एकदेश स्वभाव-अर्थपर्यायें प्रगट हैं, पूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (3) तेरहवें

गुणस्थान में ज्ञान-दर्शन, वीर्य की पूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट हो जाती हैं; योगगुण आदि में स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (4) चौदहवें गुणस्थान में योगगुण की पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो जाती है, किन्तु अभी वैभाविकगुण, क्रियावतीशक्ति, अव्यावाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणों की स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (5) चौदहवें गुणस्थान के अन्त में वैभाविकगुण, क्रियावतीशक्ति, अव्याबाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणों की परिपूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट हो जाती हैं।

प्रश्न 19 - शास्त्रों में आता है कि मिथ्यादृष्टि के भी अस्तित्वादि गुणों की शुद्ध पर्यायें होती हैं, तब आपने मिथ्यादृष्टि को स्वभावपर्यायें क्यों नहीं बतलायी?

उत्तर - जैसे - किसी के घर में खजाना दबा पड़ा है, परन्तु उसे मालूम नहीं है तो कहा जाता है, उसके पास खजाना नहीं है; उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि की अस्तित्वादि गुणों की शुद्धपर्यायें होने पर भी, उसे अपने आप का पता न होने से स्वभावअर्थपर्यायें कही नहीं जाती हैं।

प्रश्न 20 - परमाणु में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं?

उत्तर - स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 21 - स्कन्ध में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं?

उत्तर - विभावव्यंजनपर्यायें और विभावअर्थपर्यायें होती हैं।

प्रश्न 22 - जैसे - आत्मा में चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक स्वभावअर्थपर्यायें और विभाअर्थपर्यायें होती हैं; उसी प्रकार स्कन्ध में इस प्रकार का होता है या नहीं?

उत्तर - नहीं होता है। स्कन्धों में, चाहे दो परमाणु का स्कन्ध हो

या करोड़ों परमाणुओं का स्कन्ध हो, उसमें दोनों विभावपर्यायें ही होती हैं; स्वभावपर्यायें नहीं होती हैं।

प्रश्न 23 – द्रव्यलिङ्गी मुनि को कौन-सी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – विभावव्यंजनपर्याय और विभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 24 – एक द्रव्य में व्यंजनपर्याय कितनी होती हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य में एक ही व्यंजपर्याय होती है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक-एक ही प्रदेशत्वगुण होता है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 25 – एक द्रव्य में अर्थपर्यायें कितनी होती हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य में अर्थपर्यायें अनन्त होती हैं, क्योंकि प्रदेशत्वगुण छोड़कर बाकी गुणों के परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 26 – एक आत्मा में व्यंजनपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – एक ही है क्योंकि एक आत्मा में एक प्रदेशत्वगुण है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 27 – एक आत्मा में अर्थपर्यायें कितनी हैं ?

उत्तर – एक आत्मा में अनन्त गुण हैं। उनमें एक प्रदेशत्वगुण को छोड़कर, बाकी जितने गुण हैं, उतनी अर्थपर्यायें एक आत्मा में होती हैं क्योंकि प्रदेशत्वगुण को छोड़कर बाकी गुणों के परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 28 – एकक्षेत्रावगाही औदारिकशरीर में व्यंजनपर्यायें कितनी हैं ?

उत्तर – जितने परमाणु हैं, उतनी ही व्यंजनपर्यायें हैं क्योंकि एक परमाणु में एक व्यंजनपर्याय होती है।

प्रश्न 29 – जीवद्रव्य में विभावव्यंजनपर्याय कहाँ तक होती है ?

उत्तर – पहले से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक विभावव्यंजनपर्याय होती हैं, अर्थात् मात्र सिद्धभगवान को छोड़कर अन्य सब जीवों में विभावव्यंजनपर्याय होती है; स्वभावव्यंजनपर्याय नहीं होती है।

प्रश्न 30 – चारों प्रकार की पर्यायें किस द्रव्य में सम्भव है ?

उत्तर – जीव और पुद्गल में ही सम्भव है; अन्य चार द्रव्यों में नहीं।

प्रश्न 31 – धर्म, अधर्म, आकाश और काल में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही अनादि-अनन्त होती रहती हैं; इनमें कभी विभावदशा होती ही नहीं है।

प्रश्न 32 – तुम्हारी आत्मा में व्यंजनपर्याय कितनी और अर्थपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – मेरी आत्मा में व्यंजनपर्याय एक और अर्थपर्यायें अनेक हैं।

प्रश्न 33 – किताब में अर्थपर्याय कितनी और व्यंजनपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – किताब में जितने परमाणु हैं, उतनी व्यंजनपर्यायें हैं और एक-एक परमाणु में अनेक-अनेक अर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 34 – सादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय किस द्रव्य में होती है ?

उत्तर – जीव में सिद्धदशा में सादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय होती हैं।

प्रश्न 35 – स्वभावव्यंजनपर्याय में अन्तर और स्वभावअर्थ-पर्याय में समानता – क्या कभी ऐसा होता है ?

उत्तर – सिद्धदशा में किसी का आकार सात हाथ का, किसी का पाँच सौ धनुष का होने से स्वभावव्यंजनपर्याय में अन्तर होता है और स्वभावअर्थपर्याय में समानता होती है।

प्रश्न 36 – स्वभावव्यंजनपर्याय में समानता और स्वभाव-अर्थपर्याय में अन्तर होता हो – क्या ऐसा कभी किसी द्रव्य में होता है ?

उत्तर – परमाणु में सब का आकार एक प्रदेशी होने से स्वभाव-व्यंजनपर्याय में समानता है और स्वभावअर्थपर्यायों में अन्तर है।

प्रश्न 37 – पहले अर्थपर्याय शुद्ध हो, फिर व्यंजनपर्याय शुद्ध हो – ऐसा किन द्रव्यों में होता है ?

उत्तर – किसी-किसी गुण की अर्थपर्याय पहले शुद्ध होती है, परन्तु जब जीवद्रव्य के सब गुणों की अर्थपर्यायें परिपूर्ण शुद्ध हो जाएँ, उसी समय व्यंजनपर्याय भी शुद्ध हो जाती है।

प्रश्न 38 – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें किस द्रव्य में एक साथ होती हैं ?

उत्तर – पुद्गल परमाणु में एक साथ होती हैं।

प्रश्न 39 – सादि-सान्त स्वभावव्यंजनपर्याय किसमें हो सकती है ?

उत्तर – पुद्गल परमाणु में हो सकती है।

प्रश्न 40 – अनादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय किसमें होती है ?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश और काल में अनादि–अनन्त दोनों स्वभावपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 41 – केवलज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 42 – मिथ्यात्व क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 43 – यथाख्यातचारित्र क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चरित्रगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 44 – कम्पन क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के योगगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 45 – मनःपर्यायज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 46 – चीनी में मीठापन क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 47 – भगवान की प्रतिमा क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 48 – गोलू नीबू क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 49 – खट्टा नीबू क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 50 – अन्धेरा क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 51 – उजाला क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 52 – बर्फ क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 53 – बादलों का रङ्ग बदलना क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की भिन्न-भिन्न रङ्गरूप विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 54 – सम्यग्ज्ञान क्या है ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 55 – औपशमिकसम्यक्त्व क्या है ?

उत्तर – आत्मा के श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 56 – सिद्धदशा क्या है ?

उत्तर – आत्मा के सम्पूर्ण गुणों की स्वभावअर्थपर्यायें और स्वभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 57 – पूजा का भाव क्या है ?

उत्तर – आत्मा के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 58 – पूजा में सामग्री चढ़ाने की क्रिया क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के क्रियावतीशक्ति की विभावअर्थ-पर्यायें हैं।

प्रश्न 59 –केवलदर्शन क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के दर्शनगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 60 – दुर्गन्ध क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के गन्धगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 61 – सुगन्ध क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के गन्धगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 62 – गोल रसगुल्ला क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 63 – मीठा रसगुल्ला क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 64 – भावश्रुतज्ञान क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 65 – बुखार क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की उष्णरूप विभावअर्थ-पर्यायें हैं।

प्रश्न 66 – भारी क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 67 – शुभाशुभभाव क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 68 – देशचारित्र क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 69 – अनन्तानुबन्धीकषाय के अभावरूप स्वरूपा-चरणचारित्र क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 70 – रोटी क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 71 – बेलन क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 72 – कड़ुवा क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के रसगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 73 – घड़ा क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 74 – चश्मा क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 75 – मैं सुबह उठा – इस वाक्य में पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – शरीर, आहारवर्गणा की क्रियावतीशक्ति से उठा; मुझसे (आत्मा से) नहीं उठा, तब पर्याय को माना और शरीर के उठनेरूप क्रियावतीशक्ति के कार्य को आत्मा का कार्य माने तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 76 – शरीर के उठनेरूप पुद्गलों के कार्यों को आत्मा का कार्य माने तो इसका क्या फल होगा ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल होगा।

प्रश्न 77 – शरीर के उठने को आत्मा का कार्य माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – शरीर के उठनेरूप कार्य में, प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति की उस समय पर्याय की योग्यता से ही उठा है; मेरे से (आत्मा से) नहीं — ऐसा जानकर, ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी

निज आत्मा का आश्रय ले, तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से 'मैं सुबह उठा' – ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 78 – सुबह उठना – उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ, इसको जानने-मानने से धर्म की प्राप्ति कैसे हो गयी ?

उत्तर – जैसे, सुबह उठना – उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ है, वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे – ऐसा मानते ही धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 79 – दर्शनमोहनीयकर्म के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) श्रद्धागुण में से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, माना। (2) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 80 – क्षायिकसम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – कार्माणवर्गणा में से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) क्षायिकसम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 81 – केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान

की प्राप्ति हुयी – इसमें गुणों के कार्य को पयार्य कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) आत्मा के ज्ञानगुण में से केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) केवलज्ञानावरणीय–कर्म के अभाव से केवलज्ञान हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 82 – केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवलज्ञानावरणीय–कर्म का अभाव हुआ – इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं', कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) कार्माणवर्गणा में से केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' – नहीं माना।

प्रश्न 83 – आँख से ज्ञान होता है – पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में से ज्ञान आया – तो पर्याय को माना और आँख से ज्ञान हुआ – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 84 – गुरु से ज्ञान होता है – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना, कब नहीं माना ?

उत्तर – ज्ञान, आत्मा के ज्ञानगुण में से आया, तो पर्याय को माना और गुरु से ज्ञान हुआ – तो पर्याय की नहीं माना।

प्रश्न 85 – केवलज्ञान के कारण, दिव्यध्वनि होती है, इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – भाषावर्गणा से दिव्यध्वनि होती है – तो पर्याय को

माना और केवलज्ञान के कारण, दिव्यध्वनि होती है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 86 – दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – केवलज्ञान, आत्मा के ज्ञानगुण में से होता है – तो पर्याय को माना और दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 87 – चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथाख्यात-चारित्र होता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – यथाख्यातचारित्र, आत्मा के चारित्रगुण में से आता है – तो पर्याय को माना और चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथाख्यातचारित्र होता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 88 – यथाख्यातचारित्र होने से चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – कार्माणवर्गणा में से चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – तो पर्याय को माना और यथाख्यातचारित्र होने के कारण चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 89 – बाल-बच्चों से सुख मिलता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – सुख, आत्मा के सुखगुण में से आता है, तो पर्याय को माना; और बाल-बच्चों से सुख मिलता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 90 – केवली, श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिक-

सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – क्षायिकसम्यक्त्व, आत्मा के श्रद्धागुण में आता है – तो पर्याय को माना; और केवली–श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिकसम्यक्त्व की प्राप्ति होती है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 91 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – घड़ा, मिट्टी से बना तो पर्याय को माना; और कुम्हार ने घड़ा बनाया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 92 – घड़ा बनने के कारण, कुम्हार को राग आया – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – राग, चारित्रगुण में से आया – तो पर्याय को माना और घड़ा बनने के कारण, राग आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 93 – श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) समयसारशास्त्र, आहारवर्गणा से बना तो पर्याय को माना; (2) श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसारशास्त्र बनाया तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 94 – सीमन्धरभगवान से कुन्दकुन्द भगवान को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुई, इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) कुन्दकुन्द भगवान को अपने ज्ञानगुण में से विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुयी – तो पर्याय को माना; (2) सीमन्धरभगवान से

कुन्दकुन्द भगवान को विशेषज्ञान की प्राप्ति हुयी – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 95 – मैंने रुपया कमाया, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – (1) तिजोरी में रुपया आहारवर्गणा की क्रियावतीशक्ति से आया – तो पर्याय को माना; (2) मेरे कमाने से आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 96 – मैंने मकान बनाया, इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – (1) आहारवर्गणा से मकान बना – तो पर्याय को माना। (2) मैंने मकान बनाया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 97 – मैं जोर–शोर से बोलता हूँ, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं', कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – भाषावर्गणा से शब्द आया – तो पर्याय को माना और मेरे से शब्द आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 98 – उपरोक्त वाक्यों में त्रिकालीउपादान से कार्य हुआ; पर से नहीं – ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर – अज्ञानी जीव, अनादि से एक–एक समय करके पर से व निमित्त से कार्य हुआ – ऐसी मान्यता से, निमित्त मिलाने में पागल हो रहा था। जब उसे पता चला त्रिकाली में से कार्य होता है; पर से नहीं तो पर में से कर्ता–भोक्ताबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 99 – उपरोक्तानुसार पर्याय का सच्चा ज्ञान किसे होता है और किसे नहीं?

उत्तर – पर्याय का सच्चा ज्ञान, चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक के जीवों को ही होता है; मिथ्यादृष्टियों को पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं होता है।

प्रश्न 100 – द्रव्यलिङ्गी मुनि ने ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व का ज्ञान किया – तो क्या उसे पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं था ?

उत्तर – द्रव्यलिङ्गी का ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व का जो ज्ञान है, वह मिथ्याज्ञान है, वह ज्ञान नहीं है; इसलिए द्रव्यलिङ्गी मुनि को पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं है, क्योंकि सम्यग्दर्शन हुए बिना, पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं हो सकता है।

प्रश्न 101 – अपना ज्ञान हुए बिना, शास्त्र का ज्ञान, मिथ्या-ज्ञान है; कार्यकारी नहीं है – ऐसा कहीं योगसार में आया है ?

उत्तर – श्री योगसार, गाथा 53 में आया है कि 'शास्त्र पाठी भी मूर्ख है जो निजतत्त्व अजान। यही कारण जग जीव ये, पावे नहिं निर्वाण। यही बात समयसार, गाथा 274 तथा 317 में बतायी है।'

प्रश्न 102 – पर्याय की दूसरी परिभाषा क्या है ?

उत्तर – परि = समस्त प्रकार से। आय = लाभ, अर्थात् अपने में हो समस्त प्रकार से लाभ मानना, इसे पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 103 – परिणमन किसे कहते हैं ?

उत्तर – परि = समस्त प्रकार से। णमन = झुक जाना, अर्थात् समस्त प्रकार से अपने में झुक जाना, इसे परिणमन कहते हैं।

प्रश्न 104 – अवस्था किसे कहते हैं ?

उत्तर – अब = निश्चय। स्था = स्थिति करना, अर्थात् अपने में ही निश्चय से स्थिति करना, ठहरना, उसे अवस्था कहते हैं।

प्रश्न 105 – अखण्ड द्रव्य में अंश कल्पना करने को क्या कहते हैं ?

उत्तर – पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 106 – पर्याय के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – अंश, भाग, प्रकार, भेद, छेद, उत्पाद-व्यय, क्रमवर्ती; व्यतिरेकी, अनित्य, विशेष, अनवस्थित आदि पर्याय के नामान्तर हैं।

प्रश्न 107 – 'व्यतिरेकी' किसे कहते हैं ?

उत्तर – भिन्न-भिन्न को व्यतिरेकी कहते हैं।

प्रश्न 108 – व्यतिरेक कितने प्रकार का है ?

उत्तर – चार प्रकार का है। (1) देश व्यतिरेक, (2) क्षेत्र व्यतिरेक, (3) काल व्यतिरेक, (4) भाव व्यतिरेक।

प्रश्न 109 – देश व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुण-पर्याय के पिण्ड के भेद को 'देश व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 110 – क्षेत्र व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक-एक प्रदेश / क्षेत्र के भिन्नपने के भेद को 'क्षेत्र व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 111 – काल व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – पर्याय के भिन्नत्व के भेद को 'काल व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 112 – भाव व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुण के भिन्नत्व के भेद को 'भाव व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 113 – क्रमवर्ती किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक, फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी, फिर पाँचवीं इस प्रकार प्रवाहक्रम से जो वर्तन करे, उसे क्रमवर्ती कहते हैं।

प्रश्न 114 – पर्याय को उत्पाद-व्यय क्यों कहते हैं ?

उत्तर – पर्याय सदा उत्पन्न होती है और विनष्ट होती है; इसलिए पर्याय को उत्पाद-व्यय कहते हैं। कोई भी पर्याय, गुण की भाँति सदैव नहीं रहती है।

प्रश्न 115 – उत्पाद किसे कहते हैं ?

उत्तर – द्रव्य में नवीन पर्याय की उत्पत्ति को उत्पाद कहते हैं।

प्रश्न 116 – व्यय किसे कहते हैं ?

उत्तर – पूर्व पर्याय के नाश को व्यय कहते हैं।

प्रश्न 117 – ध्रौव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – उत्पाद और व्यय में द्रव्य की सदृशतारूप स्थायी रहने को ध्रौव्य कहते हैं।

प्रश्न 118 – नियमसार में पर्याय किसे कहा है ?

उत्तर – परि समतान्त भेदमेति गच्छतीति पर्याय, अर्थात् जो सर्व और से भेद को प्राप्त करे, वह पर्याय है। *(गाथा-14)*

प्रश्न 119 – पर्याय तो अनित्य है, तब पर्याय सत् है या असत् ?

उत्तर – पर्याय, एक समय पर्यन्त का सत् है और द्रव्य-गुण, त्रिकाल सत् है; इसलिए द्रव्य-गुण और पर्याय तीनों सत् हैं।

प्रश्न 120 – गुण, अंश है या अंशी ?

उत्तर – (1) द्रव्य की अपेक्षा से गुण, उस द्रव्य का अंश है; (2) पर्याय की अपेक्षा से गुण, अंशी है।

प्रश्न 121 – पर्याय किसका अंश है?

उत्तर – (1) पर्याय, गुण का एक समयपर्यन्त का अंश है। (2) पर्याय, द्रव्य का भी एक समयपर्यन्त का अंश है।

प्रश्न 122 – अंश-अंशी को संक्षिप्त में समझाइए?

उत्तर – (1) जब द्रव्य को अंशी कहा तो गुण को अंश कहा; (2) जब गुण को अंशी कहा तो पर्याय को अंश कहा।

प्रश्न 123 – पाँच अजीवद्रव्य हैं, वे जानते नहीं हैं तो वे (अजीव) किसी के आधार के बिना कैसे व्यवस्थित रह सकते हैं?

उत्तर – (1) पाँच अजीवद्रव्य, अस्तित्वादि सामान्यगुण और अपने-अपने विशेषगुणसहित हैं। (2) पाँचों अजीवद्रव्यों में सत्पना लक्षण होने से उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त है। उन्हें किसी प्रकार पर की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा लिए स्वयं परिणमती हैं, किसी की परिणमायी परिणमती नहीं हैं, क्योंकि स्वयं कायम रहकर बदलना, प्रत्येक वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 124 – पर्याय किससे होती हैं?

उत्तर – द्रव्य और गुणों से पर्याय होती है।

प्रश्न 125 – द्रव्य और गुणों से पर्याय होती हैं, इस अपेक्षा पर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं, द्रव्यपर्याय और गुणपर्याय।

प्रश्न 126 – द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान होना, द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 127 – द्रव्यपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं। समानजातीयद्रव्यपर्याय, असमानजातीय–द्रव्यपर्याय।

प्रश्न 128 – समानजातीयद्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक जाति के अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान, समानजातीयद्रव्यपर्याय हैं।

प्रश्न 129 – समानजातीयद्रव्यपर्याय के कुछ नाम बताओ ?

उत्तर – बिस्तर, कम्बल, रोटी, हलुवा, मेज, पुस्तक इत्यादि – इसमें अनेक पुद्‌गलों में एकपने का ज्ञान होता है, यह समानजातीय–द्रव्यपर्याय के उदाहरण हैं।

प्रश्न 130 – समानजातीयद्रव्यपर्याय में चार बातें कौन–कौन सी आयी ?

उत्तर – (1) एक जाति होनी चाहिए। (2) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (3) अनेक द्रव्यों में एकपने का कथन होना चाहिए। (4) जैसा–जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा–वैसा ही ज्ञान में आना चाहिए।

प्रश्न 131 – मेरा बिस्तरबन्द है – इस वाक्य में समानजातीय–द्रव्यपर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर – बिस्तरबन्द – समानजातीयद्रव्यपर्याय है – बिस्तरबन्द में (1) पुद्‌गल एक जाति के द्रव्य हैं। (2) अनेक परमाणु हैं। (3) मेरा बिस्तरबन्द है – ऐसा कथन किया जाता है। (4) [अ] बिस्तरबन्द में आहारवर्गणा के अनेक परमाणु हैं। एक–एक परमाणु का दूसरे परमाणुओं में अत्यन्ताभाव है। [आ] बिस्तरबन्द, स्कन्धरूपपर्याय में प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे

परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्यान्योभाव है। [इ] बिस्तरबन्द के प्रत्येक परमाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी -अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त-अनन्त अर्थपर्यायोंसहित विराज रहा है। [ई] जब बिस्तरबन्द में परमाणुओं की एक पुद्गल जाति होते हुए भी, परस्पर में कोई कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन जीवतत्त्व के साथ उनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा श्रद्धान-ज्ञान वर्तें तो उपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से मेरा बिस्तरबन्द है - ऐसे कथन को समानजातीयद्रव्यपर्याय कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 132 - असमानजातीयद्रव्यपर्याय किसे कहते हैं।

उत्तर - अनेक जाति के अनेक द्रव्यों में जिससे एकपने का ज्ञान हो, वह असमानजातीयद्रव्यपर्याय हैं; जैसे - मनुष्य, देव आदि।

प्रश्न 133 - असमानजातीयद्रव्यपर्यायों के कुछ नाम बताओ?

उत्तर - (1) अरहन्त भगवान (2) देव (3) मनुष्य (4) तिर्यंच (5) नारकी, (6) कुत्ता (7) चूहा (8) चींटी (9) पृथ्वीकायिक (10) जलकायिक (11) स्त्री (12) लड़का; इन्हें असमानजातीय-द्रव्यपर्यायें कहते हैं, क्योंकि इनमें अनेक जाति के अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान होता है।

आत्मा, द्रव्यकर्म और शरीर के सम्बन्ध को असमानजातीय-द्रव्यपर्याय कहते हैं। चारों गतियों के जीव, असमानजातीयद्रव्यपर्याय में आते हैं।

प्रश्न 134 - असमानजातीयद्रव्यपर्याय में चार बातें कौन-कौनसी होती हैं?

उत्तर – (1) अनेक जाति होनी चाहिए। (2) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (3) अनेक द्रव्यों में एकपने का कथन होना चाहिए। (4) जैसा-जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा-वैसा ही ज्ञान में आना चाहिए।

प्रश्न 135 – मैं कैलाशचन्द्र हूँ – इस वाक्य में असमान-जातीयद्रव्यपर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये?

उत्तर – कैलाशचन्द्र, असमानजातीयद्रव्यपर्याय है। कैलाशचन्द्र में (1) जीव-पुद्गल, ये अनेक जाति हुई। (2) जीव-पुद्गल, ये अनेक द्रव्य हुए। (3) जीव-पुद्गल, अनेक द्रव्यों में 'मैं' कैलाशचन्द्र हूँ – ऐसा कथन किया जाता है। (4) [अ] मैं एक ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी ज्ञायक जीवतत्त्व हूँ; संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माणशरीर, भाषा, मनरूप अनेक परमाणु, ये अजीवतत्त्व हैं। [आ] कैलाशचन्द्र अजीवतत्त्व में औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर-भाषा, मन में प्रत्येक परमाणुओं का आपस में अत्यन्ताभाव है और प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। [इ] औदारिक आदि शरीरों के प्रत्येक परमाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय व अनन्त-अनन्त अर्थपर्यायोंसहित संयोगरूप रह रहा है। [ई] जब औदारिक आदि शरीरों के परमाणुओं में एक पुद्गल जाति होते हुए भी, परस्पर में कर्ता-भोक्ता आदि का कोई सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व के साथ, कैलाशचन्द्र अजीवतत्त्व का सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा जानने-मानने ही आस्रव-बन्धतत्त्व का अभाव प्रारम्भ हो जाता है और तुरन्त संवर-निर्जरा की प्राप्ति हो जाती है; तब अनुपचरित-असद्भूतव्यवहारनय से मैं 'कैलाशचन्द्र हूँ' – ऐसे कथन को असमानजातीयद्रव्यपर्याय कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 136 – समानजातीय-असमानजातीयद्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान किसे होता है और किसे नहीं ?

उत्तर – ज्ञानियों को ही होता है; अज्ञानियों को नहीं होता है।

प्रश्न 137– समानजातीयद्रव्यपर्याय और असमानजातीय-द्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान, ज्ञानियों को ही क्यों होता है ?

उत्तर – (1) **समानजातीयद्रव्यपर्याय** में ज्ञानी जानते हैं कि एक-एक परमाणु, अपनी-अपनी एक व्यंजनपर्याय और अन्य गुणों की अर्थपर्यायों सहित बिराज रहा है। एक परमाणु का, दूसरे परमाणु से सम्बन्ध नहीं है परन्तु लोकव्यवहार में 'बिस्तरबन्द आदि' बोलने में आता है।

(2) **असमानजातीयद्रव्यपर्याय** में ज्ञानी जानता है कि आत्मा एक है और औदारिक, तैजस तथा कार्माणशरीर आदि में जितने परमाणु हैं, वह सब प्रत्येक अलग-अलग एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहे हैं। वह प्रत्येक द्रव्य को अलग-अलग जानता है, तथापि लोकव्यवहार में 'मनुष्य-देव' आदि बोला जाता है; इसलिए ज्ञानियों को समानजातीय, असमानजातीय द्रव्य-पर्याय का सच्चा ज्ञान होता है।

प्रश्न 138 – अज्ञानी को समानजातीयद्रव्यपर्याय और असमानजातीय-द्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान क्यों नहीं होता है ?

उत्तर – अज्ञानी (1) पृथक्-पृथक् द्रव्यों को एक मानते हैं। (2) दोनों के मिलने से पर्याय हुयी है – ऐसा मानते हैं। (3) एक -एक द्रव्य का सच्चा ज्ञान न होने से; अर्थात् अपना ज्ञान न होने से द्रव्यलिङ्गी आदि सब मिथ्यादृष्टियों का समानजातीय और असमानजातीयद्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं होता है।

प्रश्न 139 – शास्त्र के अनुसार द्रव्यलिङ्गी कहे कि एक –एक द्रव्य अलग–अलग है और प्रत्येक द्रव्य, एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित बिराज रहा है तो उसका ज्ञान सच्चा होगा या नहीं ?

उत्तर – अपनी आत्मा का ज्ञान न होने से, शास्त्र के अनुसार कहने पर भी मिथ्यादृष्टियों का सब ज्ञान, मिथ्याज्ञान और सब चारित्र, मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न 140 – अपना ज्ञान हुए बिना, मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान मिथ्या है – ऐसा कहाँ आया है ?

उत्तर – भगवान उमास्वामी ने तत्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय के 32वें सूत्र में कहा है कि 'सद् सतोर विशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्', अर्थात् (1) सत् = विद्यमान वस्तु। (2) असत् = अविद्यमान् वस्तु (3) अविशेषात् = इन दोनों का यथार्थ विवेक ना होने से (यदृच्छ) विपर्यय, उपलब्धे = अपनी मनमानी इच्छा अनुसार कल्पनाएँ करने से वह ज्ञान, मिथ्याज्ञान है। (4) 'उन्मत्तवत्' शराब पिये हुए के समान मिथ्यादृष्टि को कारणविपरीतता, स्वरूपविपरीतता और भेदाभेद–विपरीतता तीनों बर्तती हैं; इसलिए मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान, झूठा है।

प्रश्न 141 – मिथ्यादृष्टि का सर्व ज्ञान, झूठा है, तब उसे सच्चा करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर – सच्चे धर्म की यह परिपाटी है कि पहले जीव, सम्यक्त्व प्रगट करता है, पश्चात् व्रतरूप शुभभाव होते हैं और सम्यक्त्व स्व –पर का श्रद्धान होने पर होता है; स्व–पर का श्रद्धान, द्रव्यानुयोग का अभ्यास करने से होता है; इसलिए पहले जीव को द्रव्यानुयोग के अनुसार श्रद्धा करके सम्यग्दृष्टि होना चाहिए, तब मिथ्यादृष्टि का सर्व

ज्ञान, जो मिथ्यात्व अवस्था में झूठा था; सम्यक्त्व होने पर उसका सारा ज्ञान सच्चा हो जाता है।

प्रश्न 142 – बिस्तरा किस-किस अपेक्षा क्या-क्या है ?

उत्तर – (1) समानजातीयद्रव्यपर्याय है। (2) पहिले, जीव के साथ सम्बन्ध होने से असमानजातीयद्रव्यपर्याय है। (3) आकार की अपेक्षा विचार किया जावे तो विभावव्यंजनपर्याय है। (4) रङ्ग की अपेक्षा विचार किया जाए तो विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 143 – बिस्तरा, समानजातीयद्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है ?

उत्तर – 'बिस्तरा' में आहारवर्गणा के जितने परमाणु हैं, वे सब परमाणु, एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहे हैं; इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; मैं तो ज्ञायक भगवान हूँ – ऐसा जिसको अपना ज्ञान हो, वह जीव 'बिस्तरा' को समानजातीयद्रव्यपर्याय कह सकता है, क्योंकि उसे भेदविज्ञान है।

प्रश्न 144 – मनुष्य क्या है ?

उत्तर – असमानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 145 – मनुष्य असमानजातीयद्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है और कौन कह सकता है ?

उत्तर – (1) 'मनुष्य' – आत्मा, ज्ञायकस्वभावी है। पर्याय में मूर्खता है और मूर्खता एक समय की है। यह अपने ज्ञायकस्वभावी आत्मा का आश्रय ले, तो मूर्खता उसी समय दूर हो जाती है। (2) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कर्माणशरीर, भाषा और मन में एक -एक परमाणु, अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है। आत्मा से इन सबका निश्चय-व्यवहार से

कोई सम्बन्ध नहीं है। (3) जो ऐसा जानता हो और अपनी आत्मा का अनुभव हो तो उसका कथन 'मनुष्य' असमानजातीयद्रव्यपर्याय है – कहा जावेगा।

प्रश्न 146 – श्री भावपाहुड़, गाथा 114 के भावार्थ में असमानजातीयद्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर – स्त्री आदि पदार्थ के ऊपर से भेदज्ञानी का विचार — इसका उदाहरण इस प्रकार है कि जब स्त्री आदि इन्द्रियगोचर हों (दिखायी दे), तब उसके विषय में तत्त्वविचार करना, कि यह स्त्री है, वह क्या है ? जीव नामक तत्त्व की (असमानजातीय) एक पर्याय है। इसका शरीर है, वह तो पुद्‌गलतत्त्व की पर्याय है। यह हाव –भाव चेष्टा करती है, वह इस जीव के विकार हुआ है, यह आस्रवतत्त्व है और बाह्य चेष्टा पुद्‌गल की है। इस विकार से इस स्त्री की आत्मा के कर्म का बन्ध होता है। यह विकार इसके न हो तो 'आस्रव –बन्ध' इसके न हो। कदाचित् मैं भी इसको देखकर विकाररूप परिणमन करूँ तो मेरे भी 'आस्रव–बन्ध' हो; इसलिए मुझे विकाररूप न होना, यह 'संवरतत्त्व' है। बन सके तो कुछ उपदेश देकर इसका विकार दूर करूँ (ऐसा विकल्प, राग है) यह राग भी करने योग्य नहीं है – स्वसम्मुख ज्ञातापने में धैर्य रखना योग्य है। इस प्रकार तत्त्व को भावना से अपना भाव अशुद्ध नहीं होता है। इसलिए जो दृष्टिगोचर पदार्थ (समानजातीय–असमानजातीय) हों, उनमें इस प्रकार तत्त्व की भावना रखना, यह तत्त्व की भावना का उपदेश है।

प्रश्न 147 – श्री प्रवचनसार, गाथा 94 में असमानजातीय–द्रव्यपर्याय के विषय में भगवान कुन्दकुन्दस्वामी ने क्या बताया है ?

उत्तर – जो अज्ञानी संसारी जीव, मनुष्यादि असमानजातीयपर्यायों

में लवलीन हैं, वे परसमय में रागयुक्त हैं – ऐसा भगवन्त जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

इसी गाथा की टीका में कहा है कि — 'मैं मनुष्य हूँ; शरीरादि की समस्त क्रियाओं को मैं करता हूँ; स्त्री-पुत्र धनादि के ग्रहण -त्याग का मैं स्वामी हूँ' इत्यादि मानना, सो मनुष्यव्यवहार (मनुष्यरूप प्रवृत्ति) है। जो मनुष्यादि असमानजातीयद्रव्यपर्यायों-समानजातीय-द्रव्यपर्यायों में लीन हैं; वे एकान्तदृष्टिवाले लोग, मनुष्यव्यवहार का आश्रय करते हैं। इसलिए रागी-द्वेषी होते हैं। उन्हें नपुंसक कहा है।

प्रश्न 148 – श्री प्रवचनसार, गाथा 154 में भगवान कुन्दकुन्दस्वामी ने असमानजातीय और समानजातीयद्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है?

उत्तर – जो पुरुष, उस पूर्व कथित द्रव्य के स्वरूपअस्तित्व कर संयुक्त और द्रव्य -गुण-पर्याय अथवा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य ऐसे तीन प्रकार कहे हुए द्रव्य के निज लक्षण को भेदसहित जानता है, वह भेदज्ञानी, अपने से भिन्न अचेतनद्रव्यों में मोह को प्राप्त नहीं होता है। इसी गाथा की टीका में कहा है –

मनुष्य-देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीयद्रव्यपर्यायों में भी, जीव का स्वरूप-अस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूप-अस्तित्व सर्वथा भिन्न-भिन्न है। सूक्ष्मता से देखने पर वहाँ जीव और पुद्गल का स्वरूप-अस्तित्व, अर्थात् अपने-अपने द्रव्य-गुण -पर्याय और ध्रौव्य-उत्पाद-व्यय, स्पष्टतया भिन्न-भिन्न जाना जा सकता है। स्व-पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के इस स्वरूप अस्तित्व को पद-पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है। यथा – यह जानने में आता हुआ चेतन द्रव्य-गुण पर्याय और चेतन ध्रौव्य-उत्पाद -व्यय जिसका स्वभाव है – ऐसा मैं (भगवान आत्मा) इस पुद्गल

से भिन्न रहा और यह अचेतन द्रव्य–गुण–पर्याय और अचेतन ध्रौव्य –उत्पाद–व्यय जिसका स्वभाव है – ऐसा पुद्गल, मुझ भगवान आत्मा से भिन्न रहा; इसलिए मुझे पर के प्रति मोह नहीं है। यह स्व–पर का भेद है।

प्रश्न 149 – यह नींबू का पेड़ है – इस वाक्य पर किस–किस अपेक्षा कौन–कौन सी पर्याय घटित हो सकती है और कब ?

उत्तर – (1) नींबू का पेड़ – असमानजातीयद्रव्यपर्याय है, कब ? जबकि – ऐसा जाने कि नींबू का पेड़ में एक ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व है; जीव के संयोगरूप औदारिक–तैजस –कार्माणशरीररूप अनन्त पुद्गल परमाणु, यह अजीवतत्त्व हैं। वह अपने को भूलकर, इन अनन्त पुद्गल परमाणुओं में एकत्वबुद्धि से पागल है – यह आस्रव–बन्धतत्त्व है – ऐसा जाननेवाला ज्ञानी, नींबू के पेड़ को असमानजातीयद्रव्यपर्याय कह सकता है।

(2) पेड़ से तोड़ने पर नींबू – समानजातीयद्रव्यपर्याय है। कब ? जबकि ऐसा जाने (अ) नींबू में आहारवर्गणा के अनेक परमाणु हैं। एक–एक परमाणु का, दूसरे परमाणुओं में अत्यन्ताभाव है और नींबू का स्कन्धरूप पर्याय में प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। (आ) प्रत्येक परमाणु में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी–अपनी एक–एक विभावव्यंजनपर्याय और अनन्त विभाव–अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है। (इ) जब परमाणुओं की एक पुद्गल जाति होते हुए भी, परस्पर में किसी भी प्रकार का कर्ता –भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन जीवतत्त्व के साथ नींबू का सम्बन्ध कैसे हो सकता हैं ? कभी नहीं हो सकता है। ऐसा ज्ञान

वर्ते तो ज्ञानी के कथन को, नींबू पेड़ से टूटने पर, समानजातीय-द्रव्यपर्याय है - ऐसा कहा जाता है।

(3) गोल नींबू, आकार की अपेक्षा विभावव्यंजनपर्याय कहा जाता है। कब ? जबकि ऐसा जाने - गोल नींबू में जितने परमाणु हैं, उतने एक-एक प्रदेशी विभावव्यंजनरूप अनन्त रूपी आकार हैं। अनन्त रूपी आकारों से मेरा किसी भी अपेक्षा, किसी भी प्रकार का कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जानकर, निज चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी, एक आकाररूप स्वभाव का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब गोल नींबू को विभावव्यंजनपर्याय कह सकता है।

(4) खट्टा नींबू - रस की अपेक्षा विभावअर्थपर्याय है। कब ? जब ऐसा जाने कि नींबू में जितने परमाणु हैं, उतनी खट्टारूप रस की विभावअर्थपर्यायें हैं। नींबू के खट्टे रस की पर्यायों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जानकर निज अरसस्वभावी ज्ञायक जीवतत्त्व का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब खट्टा नींबू को, यह विभावअर्थपर्याय हैं - ऐसा कह सकता है।

प्रश्न 150 - 'औपशामिकसम्यक्त्व' क्या है ? इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - (1) औपशमिकसम्यक्त्व, जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय है। (2) इसका कर्ता, जीव का श्रद्धागुण है। (3) दर्शनमोहनीय का उपशम, इसका कर्ता नहीं है।

प्रश्न 151 - 'सम्यग्ज्ञान' क्या है ? इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - (1) सम्यग्ज्ञान, जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभाव-अर्थपर्याय है। (2) इसका कर्ता, आत्मा का ज्ञानगुण है।

(3) ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम तथा देव-शास्त्र-गुरु, इसके कर्ता नहीं हैं।

प्रश्न 152 - (1) सम्यक्चारित्र, (2) तैजसशरीर, (3) सिद्धदशा, (4) कम्पन क्या है ? (5) वीर्य की पूर्णता, (6) यथाख्यातचारित्र, (7) पाँच इन्द्रियों के भोग का भाव, (8) फूल में सुगन्ध, (9) बुखार, (10) खाँसी की आवाज, (11) आठों कर्मों का उदय क्या है ? इनका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ? (12) मोहनीयकर्म का उपशम क्या है ? (13) मतिज्ञान क्या है ?

उत्तर - उक्त सभी प्रश्नों के उत्तर पूर्व प्रश्नों के अनुसार घटित करें।

प्रश्न 153 - द्रव्यसंग्रह में पुद्गल की पर्यायें किसे कहा है ?

उत्तर - श्री द्रव्यसंग्रह, गाथा 16 में (1) शब्द, (2) बन्ध, (3) सूक्ष्म, (4) स्थूल, (5) संस्थान (आकार), (6) भेद (खण्ड), (7) तम (अन्धकार), (8) छाया, (9) उद्योत, (10) आताप आदि को पुद्गल की पर्यायें कहा है और ये सब समानजातीयद्रव्यपर्यायें हैं और जिसमें जीव का एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है, वह असमान-जातीयद्रव्यपर्यायें हैं।

प्रश्न 154 - ज्ञानगुण की पर्यायें कितनी और कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर - ज्ञानगुण की आठ पर्यायें हैं । मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, ये पाँच सम्यक्पर्यायें हैं। कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, ये तीन मिथ्यापर्याय हैं।

प्रश्न 155 - इन ज्ञानगुण की आठ पर्यायों के जानने से ज्ञानी-अज्ञानी को क्या-क्या लाभ या नुकसान है ?

उत्तर – (1) जिसमें त्रिकाल ज्ञानगुण हैं, ऐसे अभेद आत्मा का आश्रय लेकर मिथ्यापर्यायों का अभाव करके, सम्यक्पर्यायों को उत्पन्न करना, यह प्रथम इनको जानने का लाभ पात्र जीवों को होता है।(2) ज्ञानी अपने अभेद ज्ञानस्वरूप का आश्रय बढ़ाकर, केवलज्ञान प्राप्त करता है। (3) मिथ्यादृष्टि, ज्ञान की आठ पर्यायों को जानकर, शास्त्राभिनिवेश करता है, जो अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 156 – दर्शनगुण की पर्यायें कितनी हैं और कौन-कौनसी हैं?

उत्तर – चार हैं – चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवल-दर्शन।

प्रश्न 157 – दर्शनगुण की इन पर्यायों को जानकर पात्र जीव क्या करता है; ज्ञानी क्या करता है और अज्ञानी क्या करता है?

उत्तर – पात्र जीव इन चार पर्यायों से लक्ष्य हटाकर, अपने दर्शनरूप अभेदस्वभाव की दृष्टि करके सच्चा क्षयोपशम प्राप्त करता है। (1) ज्ञानी, निज अभेद दर्शनस्वभाव का पूर्ण आश्रय लेकर, पर्याय में केवलदर्शन की प्राप्ति करता है। (2) अज्ञानी इन चार पर्यायों को जानकर शास्त्राभिनिवेश में पागल बना रहता है।

प्रश्न 158 – चारित्रगुण का परिणमन कितने प्रकार का है?

उत्तर – शुद्ध और अशुद्ध दो प्रकार का है; तथा अशुद्ध के शुभ और अशुभ दो प्रकार हैं।

प्रश्न 159 – चारित्रगुण के परिणमन को जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – पर्याय में अशुद्धपरिणमन है; स्वभाव में शुद्ध और अशुद्ध का भेद नहीं है – ऐसा जानकर, अभेदस्वभाव का आश्रय

लेकर, अशुद्धपरिणमन का अभाव और शुद्धपरिणमन की प्राप्ति, इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 160 – स्पर्श क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 161 – स्पर्शगुण की कितनी पर्यायें हैं?

उत्तर – हल्का–भारी, ठण्डा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम – ये आठ पर्यायें हैं।

प्रश्न 162 – स्पर्शगुण की आठ पर्यायों के जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – यह आठों पर्यायें, पुद्गल के स्पर्शगुण की हैं। अनादि से अज्ञानी, अपने को हल्का–भारी; मुझे गर्मी–सर्दी का बुखार आदि मिथ्यामान्यता से पागल हो रहा था। तब सद्गुरु ने कहा तू तो अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा है; हल्का–भारी आदि पुद्गल के स्पर्शगुण की पर्यायें हैं – ऐसा जानकर, अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले, तो स्पर्श की आठ पर्यायों से सम्बन्ध नहीं है, यह अनुभव होना, यह स्पर्श की आठ पर्यायों को जानने से लाभ है।

प्रश्न 163 – रस क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 164 – रसगुण की कितनी पर्यायें हैं?

उत्तर – पाँच हैं – खट्टा, मीठा, कडुवा, कषायला, और चरपरा।

प्रश्न 165 – रसगुण की पाँच पर्यायों को जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – अज्ञानी जीव, अनादि से खट्टे–मीठे को अपना स्वाद

मान रहा था। सद्गुरु ने कहा – तू तो अरसस्वभावी भगवान आत्मा है और खट्टा-मीठा आदि पुद्गल के रसगुण की पर्यायें हैं, तेरा इनसे सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानकर, अरसस्वभावी भगवान आत्मा की ओर दृष्टि दे, तो रस की पाँच पर्यायों को जाना कहा जाएगा।

प्रश्न 166 – गन्ध क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 167 – गन्धगुण की कितनी पर्यायें हैं?

उत्तर – दो हैं – सुगन्ध, और दुर्गन्ध।

प्रश्न 168 – गन्धगुण की दो पर्यायों को जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – मैं, अगन्धस्वभावी भगवान आत्मा हूँ; सुगन्ध-दुर्गन्ध, पुद्गल के गन्धगुण की पर्यायें हैं। ऐसा जानकर, अगन्धस्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले तो धर्म की शुरुआत होकर फिर क्रम से वृद्धि होकर निर्वाण का पात्र बने।

प्रश्न 169 – वर्ण क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 170 – वर्णगुण की कितनी पर्यायें हैं?

उत्तर – पाँच हैं – काला, पीला, नीला, लाल, सफेद।

प्रश्न 171 – वर्णगुण की पाँच पर्यायों को जानने से क्या लाभ हैं?

उत्तर – मैं, अवर्णस्वभावी भगवान आत्मा हूँ। काला-पीला आदि पुद्गल के वर्णगुण की पर्यायें हैं; इससे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानकर, अपने अवर्णस्वभाव का आश्रय ले तो

वर्णगुण की पर्यायों से भेदज्ञान हुआ, कहा जावेगा, तभी मुक्तिमार्ग प्रारम्भ होगा।

प्रश्न 172 – शब्द क्या है ?

उत्तर – भाषावर्गणा का कार्य है और समानजातीयद्रव्यपर्याय है; जीव के संयोग की अपेक्षा विचारा जावे तो असमानजातीयद्रव्य-पर्याय है।

प्रश्न 173 – शब्द कितने प्रकार का है ?

उत्तर – सात प्रकार का है। षडज, ऋषभ, गन्धार, मध्यम, पञ्चम, थैवत, और निषाद।

प्रश्न 174 – सात प्रकार के शब्द को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर – सात प्रकार के शब्दों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं अशब्दस्वभावी भगवान आत्मा हूँ। ऐसा जानकर, अपना आश्रय ले, तो शान्ति प्राप्त हो और कर्ण इन्द्रियों के विषयों की एकत्वबुद्धि का अभाव हो।

प्रश्न 175 – समयसार की 49वीं गाथा में जीव का स्वरूप कैसा बताया है ?

उत्तर –

'जीव चेतना गुण, शब्द-रस-रूप-गन्ध-व्यक्ति विहीन है।'
निर्दिष्ट नहीं संस्थान उसका, ग्रहण है नहिं लिंग से॥

अर्थात्, हे भव्य! तू जीव को रसरहित, रूपरहित, गन्धरहित, इन्द्रियगोचर नहीं, शब्दरहित है –ऐसा जान। वह चेतनागुण द्वारा दृष्टि में आता है, किसी पर चिह्नों से, किसी के आकार से दृष्टि में नहीं आ सकता है।

प्रश्न 176 – गाथा 49 में जीव को स्पर्शादि से रहित क्यों कहा है?

उत्तर – स्पर्श-रसादि की सत्ताईस पर्यायों में जीव पागल है, उससे दृष्टि हटाकर अपने स्वभाव पर दृष्टि दे; इसलिए कहा है।

प्रश्न 177 – गाथा 49 की टीका में स्पर्श-रस आदि के कितने-कितने बोल दिये हैं और उनमें क्या-क्या समझाया है?

उत्तर – रस, रूप, गन्ध, स्पर्श और शब्द – प्रत्येक के छह-छह बोलों से इनका निषेध करके, आत्मा को अरस, अरूप, अगन्ध, अस्पर्श, अशब्द बताया है, क्योंकि अज्ञानी, पुद्गल की इन सत्ताईस पर्यायों में पागल है। उसका पागलपन मिटे और शान्ति प्राप्त हो, यह समझाया है।

प्रश्न 178 – गाथा 49 की टीका में छह-छह बोलों से अलग किया है, उसका एक उदाहरण बताओ, ताकि सब समझ में आ सके?

उत्तर – (1) पुद्गलद्रव्य से अलग किया है। (2) पुद्गलद्रव्य के गुण से अलग किया है। (3) पुद्गलद्रव्य की पर्याय, द्रव्येन्द्रिय के आलम्बन से अलग किया है। (4) क्षयोपशमरूप ज्ञान से अलग किया है। (5) अखण्डपने सबको सर्वथा जाननेवाला स्वभाव होने से मात्र रस को जाने, इससे अलग किया है। (6) रससम्बन्धी ज्ञान होने पर भी, रसरूप नहीं होता है। इस प्रकार आत्मा को इन सबसे पृथक् बताकर, चेतनागुण के द्वारा ही अनुभव में आता है – ऐसा बताया है। इसलिए हे आत्मा! तू 'एक टंकोत्कीर्ण परमार्थस्वरूप का आश्रय ले तो शान्ति प्रगटे।'

प्रश्न 179 – क्रियावतीशक्ति क्या है?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 180 – क्रियावतीशक्ति का परिणमन कितने प्रकार का है ?

उत्तर – दो प्रकार का है – गमनरूप और स्थिररूप।

प्रश्न 181 – क्रियावतीशक्ति को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) अज्ञानी, अनादि से यह मानता था कि मैं शरीर को चलाता हूँ और शरीर मुझे चलाता है। (2) गुरुगम के बिना, शास्त्र पढ़ा तो कहने लगा – धर्मद्रव्य, जीव–पुद्गल को चलाता है और अधर्मद्रव्य, ठहराता है। (3) सच्चे सद्गुरु का समागम हुआ तो जाना कि – आत्मा में और प्रत्येक परमाणु में क्रियावतीशक्ति गुण है। ये दोनों अपनी–अपनी योग्यता से चलते हैं और ठहरते हैं; धर्म–अधर्म तो निमित्तमात्र है – ऐसा जानकर, अपनी ओर दृष्टि दे तो क्रियावतीशक्ति को जाना।

प्रश्न 182 – वैभाविकशक्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर – यह एक विशेष भाववाला गुण है। जिस गुण के कारण, परद्रव्य के सम्बन्धपूर्वक स्वयं अपनी योग्यता से अशुद्धपर्याय होती है।

प्रश्न 183 – वैभाविकशक्ति कितने द्रव्यों में हैं ?

उत्तर – जीव और पुद्गल, दो द्रव्यों में ही है।

प्रश्न 184 – वैभाविकशक्ति की शुद्धपर्याय कब प्रगट होती है ?

उत्तर – सिद्धदशा में इस गुण की शुद्ध–स्वाभाविकदशा प्रगट होती है।

प्रश्न 185 – प्रत्येक गुण में कितनी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – तीन काल के जितने समय हैं, उतनी–उतनी ही पर्याय प्रत्येक गुण में होती हैं।

प्रश्न 186 – एक गुण में एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद और स्वयं ध्रौव्य, इन तीनों में कितना समय लगता है ?

उत्तर – मिथ्यात्व का अभाव, सम्यक्त्व की उत्पत्ति और श्रद्धा–गुण ध्रौव्य, यह एक समय में ही होता है। ऐसा ही प्रत्येक गुण में अनादि–अनन्त होता है। यह वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 187 – उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य का एक ही समय है या भिन्न–भिन्न समय है ?

उत्तर – तीनों एक ही समय में एक साथ बर्तते हैं।

प्रश्न 188 – अज्ञान दूर होकर, सच्चा ज्ञान होने में कितना काल लगता है ?

उत्तर – एक समय ही लगता है। मिथ्याज्ञान का व्यय, सम्यग्ज्ञान का उत्पाद और ज्ञानगुण, ध्रौव्य है।

प्रश्न 189 – अनादि–अनन्त कौन है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य और उनके गुण अनादि–अनन्त होते हैं।

प्रश्न 190 – प्रत्येक द्रव्य और गुण अनादि–अनन्त हैं, इसे जानने से क्या नुकसान और क्या लाभ हैं।

उत्तर – (1) परद्रव्य और उनके गुण अनादि–अनन्त हैं, उनका आश्रय माने तो चारों गतियों में घूमकर निगोद की प्राप्ति होती है। (2) अपना द्रव्य और गुण अनादि–अनन्त हैं, उसका आश्रय ले तो मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 191 – सादि-अनन्त कौन है ?

उत्तर – क्षायिकपर्याय, सादि-अनन्त है।

प्रश्न 192 – पर्याय तो कोई भी हो, एक समयमात्र की होती है, फिर आपने क्षायिकपर्याय को 'सादि-अनन्त' क्यों कहा ?

उत्तर – वह बदलने पर भी, जैसी की तैसी रहती है; वह की वह नहीं। 'जैसी की तैसी', अर्थात् शुद्ध-शुद्ध रहने से सादि-अनन्त कहा है।

प्रश्न 193 – क्षायिकपर्याय, सादि-अनन्त है, इसे जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – अपने द्रव्य-गुण अभेद अनादि-अनन्त स्वभाव का आश्रय लेकर, क्षायिकपर्याय प्रगट करनेयोग्य है – ऐसा जानकर, क्षायिकपर्याय प्रगट करे, यह लाभ है।

प्रश्न 194 – अनादि-सान्त क्या है ?

उत्तर – जो जीव, अनादि-अनन्त अपने स्वभाव का आश्रय लेता है, उस जीव का संसार जो अनादि से है, उसको सांत कर देता है; इसलिए संसारपर्याय को अनादि-सांत कहा है।

प्रश्न 195 – सादि-सांत क्या है ?

उत्तर – मोक्षमार्ग, अर्थात् साधकदशा।

प्रश्न 196 – मोक्षमार्ग, सादि-सांत है – इसे जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) ज्ञानी जीव, साधकदशा का अभाव करके साध्यदशा, जो सादि-अनन्त है, उसको प्रगट करते हैं। (2) अज्ञानी पात्र जीव,

अपने स्वभाव का आश्रय लेकर सादि–सांत मोक्षमार्ग प्रगट करें, यह जानने का लाभ है।

प्रश्न 197 – समयसार का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – समयसार का कर्ता, शब्दों की अपेक्षा भाषावर्गणा और पुस्तक की अपेक्षा आहारवर्गणा है। श्री कुन्दकुन्दभगवान, अमृतचन्द्राचार्य भगवान और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 198 – रोटी का कर्ता कौन है और कौन नहीं ?

उत्तर – रोटी का कर्ता, आहारवर्गणा है। बाई, चकला, बेलन, तथा और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 199 – शब्द का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – शब्द का कर्ता, भाषावर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 200 – मन का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – मन का कर्ता, मनोवर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 201 – अलमारी का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – अलमारी का कर्ता, आहारवर्गणा है। बढ़ई, औजार, और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 202 – (1) सम्यग्दर्शन, (2) सम्यग्ज्ञान, (3) सम्यकचारित्र, (4) केवलज्ञान, (5) केवलदर्शन, (6) पलंग, (7) मीठाआम, (8) तैजसशरीर, (9) कार्माणशरीर, (10) ज्ञानावरणीयकर्म का क्षायोपशम, (11) दिव्यध्वनि, (12) रसगुल्ला, (13) दान का भाव आदि का (अ) कर्ता कौन है ? (आ) कर्ता कौन नहीं है ? (इ) यह क्या है ? (ई) पर्याय

को कब माना ? (उ) और पर्याय को कब नहीं माना ?

उत्तर – (अ) सम्यग्दर्शन का कर्ता, आत्मा का श्रद्धागुण है, (आ) और कोई दूसरा गुण, कर्म या विकार नहीं है, (इ) यह पर्याय है (ई) श्रद्धागुण में से आयी, तब पर्याय को माना (उ) कहीं और से आयी – ऐसा माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार शेष प्रश्नों पर स्वयं लगायें।

प्रश्न 203 – समानजातीयद्रव्यपर्यायों के नाम शास्त्रों में कहाँ आये हैं और उनके कुछ नाम बताओ ?

उत्तर – द्रव्यसंग्रह के अजीव अधिकार में तथा तत्त्वार्थसूत्र में आये हैं। शब्द, बन्ध, स्थूल, संस्थान, तम, छाया आताप, उद्योत इत्यादि हैं।

प्रश्न 204 – आहारकशरीर; तैजसशरीर; कार्माणशरीर; वैक्रियकशरीर; औदारिकशरीर, (1) वह क्या है, (2) इनका कर्ता कौन है, (3) इनका कर्ता कौन नहीं है, (4) पर्याय को कब माना, (5) पर्याय को कब नहीं माना, इत्यादि प्रश्नों के उत्तर दो ?

उत्तर – (1) आहारकशरीर, मुनि की अपेक्षा विचार करें तो असमानजातीयद्रव्यपर्याय है और शरीर की अपेक्षा विचार करें तो समानजातीयद्रव्यपर्याय है। (2) इसका कर्ता, आहारवर्गणा है। (3) ऋद्धिधारी मुनि और दूसरी वर्गणाएँ इसका कर्ता नहीं हैं। (4) आहारकशरीर का कर्ता, आहारवर्गणा है, तब पर्याय को माना और (5) आहारकशरीर का कर्ता, मुनि को माने या दूसरी वर्गणाओं को माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार बाकी के प्रश्नों पर स्वयं घटित करें।

प्रश्न 205 – (1) मतिज्ञान, (2) श्रुतज्ञान, (3) चक्षुदर्शन, (4) अवग्रह, (5) ध्वनि, (6) छाया, (7) मिथ्यादर्शन, (8) मिथ्याज्ञान, (9) मिथ्याचारित्र, (10) क्रोध, (11) लोभ, (12) दया, (13) दान का भाव आदि का (अ) कर्ता कौन हैं ? (आ) कर्ता कौन नहीं है ? (इ) यह क्या है ? (ई) पर्याय को कब माना ? (उ) और पर्याय को कब नहीं माना ?

उत्तर – (अ) मतिज्ञान का कर्ता, आत्मा का ज्ञानगुण है, (आ) और कोई दूसरा गुण, कर्म या विकार नहीं है, (इ) यह पर्याय है, (ई) ज्ञानगुण में से आयी, तब पर्याय को माना, (उ) कही ओर से आयी – ऐसा माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार शेष प्रश्नों का उत्तर स्वयं दें।

प्रश्न 206 – द्रव्य की पर्याय कितनी बड़ी है ?

उत्तर – जितना बड़ा द्रव्य है, उतनी ही बड़ी उसकी पर्याय है। जैसे– आत्मा असंख्यात प्रदेशी है, वैसे ही असंख्यात प्रदेशी उसके गुण और पर्यायें हैं।

प्रश्न 207 – प्रत्येक पर्याय की स्थिति कितनी है ?

उत्तर – कोई भी पर्याय हो, उसकी स्थिति एक समयमात्र ही होती है।

प्रश्न 208 – (1) शक्कर में मीठापना, (2) बर्फ, (3) अन्धेरा, (4) उजाला, (5) समवसरण, (6) बादलों में रंग का बदलना, (7) मेघगर्जना, (8) स्याही, (9) शीशे का प्रतिबिम्ब, यह क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) शक्कर = पुद्गलद्रव्य के रसगुण की विभाव-अर्थपर्यायें है। (2) बर्फ = पुद्गलद्रव्य के स्पर्शगुण की शीतल

विभावअर्थपर्याय है। (3) अन्धेरा = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (4) उजाला = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (5) समवसरण = पुद्गल के प्रदेशत्वगुण की विभाव-व्यंजनपर्याय है। (6) बादलों के रंग = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (7) मेघगर्जना= भाषावर्गणा के शब्दरूप समानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 209 - क्या द्रव्य-गुण-पर्याय, तीनों सत् हैं?

उत्तर - हाँ, तीनों सत् हैं; द्रव्य-गुण त्रिकाल सत् हैं और पर्याय, एक समय का सत् है।

प्रश्न 210 - वर्तमान में अज्ञान दूर होकर, सच्चा ज्ञान होने में कितना समय लगता है?

उत्तर - एक समय लगता है।

प्रश्न 211 - द्रव्य की भूतकाल की पर्यायों की संख्या अधिक है या भविष्यकाल की पर्यायों की संख्या अधिक है?

उत्तर - द्रव्य की भूतकाल की पर्यायें अनन्त हैं और भविष्य की पर्यायें उनसे भी अनन्त गुनी अधिक हैं।

प्रश्न 212 - ज्ञानगुण और दर्शनगुण की पर्यायों के नाम बताओ?

उत्तर - (1) मति, श्रुति, अवधि, मन:पर्याय, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, ये ज्ञानगुण की आठ पर्यायें हैं। (2) चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवलदर्शन - ये दर्शनगुण की चार पर्यायें हैं।

प्रश्न 213 - गुणपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर - गुण के द्वारा पर्याय में अनेकपने की प्रतिपत्ति, वह गुणपर्याय है।

प्रश्न 214 – गुणपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं – (1) स्वभावपर्याय, और (2) विभावपर्याय।

प्रश्न 215 – स्वभावपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुण की जो शुद्धपर्याय होती है, उसे स्वभावपर्याय कहते हैं – जैसे, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिकसम्यक्त्व आदि।

प्रश्न 216 – द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – अनेक द्रव्यात्मक एकता की प्रतिपत्ति के कारणभूत द्रव्यपर्याय है, अर्थात् अनेक द्रव्यों में जिससे एकपने का ज्ञान हो, वह द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 217 – उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य जानने के लिए श्री प्रवचनसार की किस-किस गाथा का विशेषरूप से रहस्य जानना चाहिए ?

उत्तर – श्री प्रवचनसार, गाथा 99, 100 तथा 101 का रहस्य जानना चाहिए।

प्रश्न 218 – श्री प्रवचनसार की 99वीं गाथा का क्या रहस्य है – संक्षिप्त में बताइये ?

उत्तर – सब द्रव्य, सत् हैं। उत्पाद-व्यय-ध्रुवसहित परिणाम प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है। ऐसे स्वभाव में निरन्तर वर्तता हुआ होने से द्रव्य भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला है। ऐसा गाथा में सिद्ध किया है। टीका में पाँच बातें की हैं। (1) द्रव्य में अभेदरूप से अनादि-अनन्त प्रवाह की एकता बतायी और प्रवाहक्रम के सूक्ष्म अंश, वह परिणाम हैं, यह बताया है। (2) प्रवाहक्रम में प्रवर्तता परिणाम का परस्पर व्यतिरेक बताया। (3) सम्पूर्णरूप से द्रव्य के त्रिकाली परिणामों को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप सिद्ध किया। दृष्टान्त में द्रव्य

के सब प्रदेशों को क्षेत्र अपेक्षा, उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य बताया। (4) एक ही परिणाम में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यपना बताया है। दृष्टान्त में एक–एक प्रदेश में क्षेत्र अपेक्षा के प्रवाह में द्रव्य सदा वर्तता है, यह वस्तु का स्वभाव है – यह सिद्ध किया है।

प्रश्न 219 – श्री प्रवचनसार की 100वीं गाथा में क्या बताया है?

उत्तर – उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य एक दूसरे के बिना होते नहीं हैं, परन्तु एक ही साथ तीनों होते हैं; जैसे – आत्मा में सम्यक्त्व का उत्पाद; मिथ्यात्व के व्यय बिना नहीं होता है; मिथ्यात्व का नाश, सम्यक्त्व के उत्पाद बिना नहीं होता; और सम्यक्त्व का उत्पाद तथा मिथ्यात्व का व्यय, यह दोनों आत्मा की ध्रुवता बिना होते नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक वस्तु में और उसके गुणों में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य तीनों एक ही साथ होते हैं, यह बताया है।

प्रश्न 220 – श्री प्रवचनसार, गाथा 101 में क्या बताया है?

उत्तर – (1) उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य किसके हैं? पर्याय के हैं। (2) पर्याय किसमें होती है? द्रव्य में होती; इस प्रकार सबको एक द्रव्य में ही बताया है, बाहर नहीं।

प्रश्न 221 – बाई ने रोटी बनायी – इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ?

उत्तर – रोटी का उत्पाद, लोई का व्यय, आहारवर्गणा ध्रौव्य है – तो बाई ने रोटी बनायी, यह बुद्धि उड़ गयी। इसी प्रकार विश्व में प्रत्येक कार्य ऐसे ही होता है, होता रहा है, और होता रहेगा – ऐसा मानते ही दृष्टि, स्वभाव पर जाए तो धर्म की प्राप्ति होना, इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 222 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ ?

उत्तर – घड़े का उत्पाद, पिण्ड का व्यय, आहारवर्गणा के स्कन्ध मिट्टी ध्रौव्य है; कुम्हार, चाक, कीली, डण्डे से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 223 – केवलज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ ?

उत्तर – केवलज्ञान का उत्पाद, भावश्रुतज्ञान का व्यय, आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; केवलज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ, यह दृष्टि छूट गयी।

प्रश्न 224 – मुझे आँख से ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद–व्यय –ध्रौव्य लगाओ और इससे क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मिथ्यात्व का उत्पाद, मिथ्यात्वरूप पहली पर्याय का व्यय, आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है। दर्शनमोहनीय के उदय से हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 225 – मुझे आँख से ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद–व्यय –ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – ज्ञानपर्याय का उत्पाद; पूर्व की ज्ञानपर्याय का व्यय; आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; आँख से ज्ञान हुआ – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 226 – दर्शनमोहनीय के उदय से मिथ्यात्व होता है, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मिथ्यात्व का उत्पाद; मिथ्यात्वरूप पूर्व पर्याय का व्यय; आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है; दर्शनमोहनीय के उदय से मिथ्यात्व हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 227 – कर्म, संसार–परिभ्रमण कराता है, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – संसार–परिभ्रमण का उत्पाद, पूर्व की पर्याय का व्यय; आत्मा, ध्रौव्य है; कर्म, संसार–परिभ्रमण कराता है, ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 228 – भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्तव हुआ, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – सम्यक्त्व का उत्पाद; मिथ्यात्व का व्यय; आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है; भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्त्व हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 229 – मैंने रोटी खायी, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – रोटी खायी का उत्पाद; पहली पर्याय का व्यय; आहार –वर्गणा के स्कन्ध, ध्रौव्य हैं; जीव ने रोटी खायी – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 230 – धर्मद्रव्य ने मुझे चलाया, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मेरे चलने का उत्पाद; स्थिररूप पर्याय का व्यय; आत्मा की क्रियावतीशक्तिगुण, ध्रौव्य है; धर्मद्रव्य तथा शरीर ने मुझे चलाया, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 231 – निमित्त–नैमित्तिक की चर्चा सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – सम्यग्ज्ञान का उत्पाद; मिथ्याज्ञान का व्यय; आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 232 – मैंने पानी गरम किया, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – गरम का उत्पाद; ठण्डे का व्यय; आहारवर्गणारूप पानी, ध्रौव्य है; जीव और आग ने पानी गरम किया – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 233 – श्री कुन्दकुन्दभगवान ने समयसारशास्त्र बनाया, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – समयसारशास्त्र का उत्पाद; पूर्व पर्याय का व्यय; आहारवर्गणारूप पत्र, ध्रौव्य हैं; श्री कुन्दकुन्दभगवान ने बनाया – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 234 – मैंने पुस्तक उठायी, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – पुस्तक उठने का उत्पाद; स्थिररूप पर्याय का व्यय; आहारवर्गणारूप कागज की क्रियाशक्तिगुण, ध्रौव्य है; जीव ने पुस्तक उठायी – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 235 – अधर्मद्रव्य ने मुझे ठहराया, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर – मेरे ठहरने का उत्पाद; चलने की पर्याय का व्यय; जीव की क्रियावतीशक्ति, ध्रौव्य है; अधर्मद्रव्य और शरीर ने मुझे ठहराया – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 236 – बढ़ई ने रथ बनाया, इसमें उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर – रथ बनने का उत्पाद; पूर्व पर्याय का व्यय; आहार–वर्गणारूप लकड़ी, ध्रौव्य है; बढ़ई ने रथ बनाया, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 237 – अन्तरायकर्म के क्षयोपशम से वीर्य में क्षयोपशम उत्पन्न हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर – क्षयोपशम का उत्पाद; पहली पर्याय का व्यय; आत्मा का वीर्यगुण, ध्रौव्य है; अन्यरायकर्म के क्षयोपशम से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 238 – पर्याय को कब जाना ?

उत्तर – अपने स्वभाव का आश्रय लिया, तो पर्याय को जाना।

●●

18

चार अभाव : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1 – अभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक पदार्थ का, दूसरे पदार्थ में अस्तित्व न होने को अभाव कहते हैं।

प्रश्न 2 – अभाव, अभावरूप है या सद्भावरूप हैं ?

उत्तर – अभाव, सद्भावरूप हैं क्योंकि इनकी सत्ता है।

प्रश्न 3 – अभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर – चार भेद हैं। (1) प्रागभाव, (2) प्रध्वंसाभाव, (3) अन्योन्याभाव, और (4) अत्यन्ताभाव।

प्रश्न 4 – प्रागभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में अभाव, वह प्रागभाव है। (वर्तमान, भूतकाल में नहीं था)

प्रश्न 5 – प्रध्वंसाभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, उसी द्रव्य की भविष्य की पर्याय में अभाव, वह प्रध्वंसाभाव है। (वर्तमान, भविष्यकाल में नहीं होगा।)

प्रागभाव – प्रध्वंसाभाव का स्पष्टीकरण :—

प्रश्न 6 – अवाय में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अवाय का, ईहा में अभाव, प्रागभाव है और अवाय का,

धारणा में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 7 – क्षायोपशमिकसम्यक्त्व में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का, औपशमिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रागभाव है और क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का, क्षायिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 8 – लड्डू में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – लड्डू का, पूर्व की पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और लड्डू का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 9 – भावश्रुतज्ञान में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – भावश्रुतज्ञान का, मतिज्ञान में अभाव, प्रागभाव है और भावश्रुतज्ञान का, केवलज्ञान में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 10 – केवलज्ञान में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – केवलज्ञान का, भावश्रुतज्ञान में अभाव, प्रागभाव है और केवलज्ञान का, भविष्य के केवलज्ञान में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 11 – दही में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – दही का, दूध में अभाव, प्रागभाव है और दही का, छाछ में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 12 – रोटी में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – रोटी का, लोई में अभाव, प्रागभाव है और रोटी का, वमन में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 13 – सिद्धदशा में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – सिद्धदशा का, संसारदशा में अभाव, प्रागभाव है और सिद्धदशा का, भविष्य की सिद्धदशा में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 14 – शब्द में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – शब्द का, पूर्व पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और शब्द का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 15 – औपशमिकसम्यक्त्व में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – औपशमिकसम्यक्त्व का, मिथ्यात्व में अभाव, प्रागभाव है और औपशमिकसम्यक्त्व का, क्षायोपशमिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 16 – ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम में प्रागभाव -प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम का, ज्ञानावरणीयकर्म के उदय में अभाव, प्रागभाव है और ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम का, केवलज्ञानावरणीयकर्म के क्षय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 17 – दर्शनमोहनीय के उपशम में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – दर्शनमोहनीय के उपशम का, दर्शनमोहनीय के उदय में अभाव, प्रागभाव है और दर्शनमोहनीय के उपशम का, दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 18 – रसगुल्ला में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है?

उत्तर – रसगुल्ले का, रसगुल्ले की पूर्व पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और रसगुल्ले का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 19 –अपूर्वकरण में प्रागभाव–प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अपूर्वकरण का, अधःकरण में अभाव, प्रागभाव है और अपूर्वकरण का, अनिवृत्तिकरण में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 20– अन्तरात्मा में प्रागभाव–प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अन्तरात्मा का, बहिरात्मने में अभाव, प्रागभाव है और अन्तरात्मा का, परमात्मापने में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

अन्योन्याभाव का स्पष्टीकरण :—

प्रश्न 21 – अन्योन्याभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव, वह अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 22– एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव, वह अन्योन्याभाव है, इसे स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर – जैसे : दूध, दही और मट्ठा, यह तीनों वर्तमान वस्तुएँ कहलाती हैं; यह तीनों पुद्गलद्रव्य की अलग–अलग वर्तमान पर्यायें हैं; इनमें अभाव, अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 23– अन्योन्याभाव के दृष्टान्त देकर समझाओ ?

उत्तर – जैसे, बाई ने रोटी बनायी, तो रोटी का तो बाई के साथ अत्यन्ताभाव है, परन्तु क्या हाथ, चकला, बेलन, तवे ने रोटी बनायी ?

नहीं! क्योंकि हाथ, चकला, बेलन, रोटी – ये सब पुद्गलद्रव्य की वर्तमान अवस्थाएँ हैं; इनमें अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 24– छप्पर को दीवार का आधार है – इसमें अन्योन्या–भाव को कब नहीं माना और कब माना?

उत्तर – छप्पर और दीवार दोनों अलग–अलग पुद्गलों की वर्तमान अवस्थाएँ हैं; इनमें अभाव, वह अन्योन्याभाव है। छप्पर को दीवार का आधार है – ऐसा माने तो अन्योन्याभाव को नहीं माना और दोनों अलग–अलग वर्तमान पर्यायें हैं, आपस में सम्बन्ध नहीं है – तो अन्योन्याभाव को माना।

प्रश्न 25 – तैजसशरीर और कार्माणशरीर में कौनसा अभाव है?

उत्तर – ये दोनों, पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 26 – घड़ा–चाक–डण्डा में कौनसा अभाव है?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 27– किताब–हाथ–पैन में कौन–सा अभाव है?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 28 – हाथ–स्टूल–औजार में कौनसा अभाव है?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

अत्यन्ताभाव का स्पष्टीकरण :

प्रश्न 29 – अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं?

उत्तर – एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य में (त्रिकाल) अभाव, वह अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 30 – कुम्हार और घड़े में कौनसा अभाव है?

उत्तर – कुम्हार और घड़े में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 31 – बाई और रोटी में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 32 – दो परमाणुओं में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 33 – अध्यापक और किताब में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 34 – भगवान और दिव्यध्वनि में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 35 – गुरु और गुरु के शब्द में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

कौनसा अभाव किसमें..........

प्रश्न 36 – अन्योन्याभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है ?

उत्तर – परस्पर पुद्‌गलद्रव्यों की वर्तमान पर्यायों में ही लागू होता है, अलग द्रव्यों में नहीं।

प्रश्न 37 – अत्यन्ताभाव कितने द्रव्यों में लगता है ?

उत्तर – छहों द्रव्यों में लगता है।

प्रश्न 38 – चारों अभाव किस–किस द्रव्य में लग सकते हैं ?

उत्तर – पुद्‌गल में चारों अभाव लग सकते हैं; बाकी द्रव्यों में तीन अभाव लगते हैं।

प्रश्न 39 – जीव–धर्म–अधर्म–आकाश और काल में कौनसा अभाव नहीं लगता है ?

उत्तर – अन्योन्याभाव नहीं लगता है, क्योंकि अन्योन्याभाव,

मात्र पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में ही परस्पर में लगता है।

प्रश्न 40 – इन चार अभावों में से पर्यायसूचक कौन-कौन से अभाव हैं?

उत्तर – प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव पर्यायसूचक हैं।

प्रश्न 41 – इन चार अभावों में से द्रव्यसूचक कौन-कौन से अभाव हैं?

उत्तर – मात्र अत्यन्ताभाव ही द्रव्यसूचक है।

प्रश्न 42 – प्रागभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है?

उत्तर – छहों द्रव्यों-गुणों की वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्यायों में लागू होता है।

प्रश्न 43 – प्रध्वंसाभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है?

उत्तर – छहों द्रव्यों-गुणों की वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में लागू होता है।

प्रश्न 44 – यदि प्रागभाव न माने तो क्या होगा?

उत्तर – कार्य, अनादि का सिद्ध होगा।

प्रश्न 45 – यदि प्रध्वंसाभाव न माने तो क्या होगा?

उत्तर – कार्य, अनन्त काल तक रहेगा।

प्रश्न 46 – यदि अन्योन्याभाव न माने तो क्या होगा?

उत्तर – एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल की वर्तमानपर्याय में अभाव है, वह नहीं रहेगा, अर्थात् सब पुद्गलों की पर्यायें मिलकर एक हो जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

प्रश्न 47 – अत्यन्ताभाव न माने तो क्या होगा?

उत्तर – प्रत्येक पदार्थ की भिन्नता नहीं रहेगी। जगत के सर्व द्रव्य एकरूप होने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

चार अभाव : परिज्ञान के लाभ

प्रश्न 48 – प्रागभाव से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – अनादि काल से जीव अज्ञान, मिथ्यात्व और रागादि नए–नए दोष करता आ रहा है; उसने धर्म कभी नहीं किया, तो भी वर्तमान में नए पुरुषार्थ से धर्म कर सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, पूर्व पर्याय में अभाव बर्तता है। प्रागभाव समझने से 'मैं पापी हूँ, मैंने बहुत पाप किए हैं, मैं कैसे तिर सकता हूँ' आदि हीनभावना निकल जाती है।

प्रश्न 49 – आत्मा, अनादि से केवलज्ञानपर्यायमय है – ऐसा माननेवाला कौन सा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि केवलज्ञान में ज्ञानगुण की पर्याय है; अतः केवलज्ञान होने से पूर्व की, मतिज्ञानादि पर्यायों में केवलज्ञान का अभाव है।

प्रश्न 50 – 'आत्मा, अनादि से सम्यग्दर्शनपर्यायमय है' – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि सम्यग्दर्शन, श्रद्धागुण की पर्याय है; अतः सम्यग्दर्शन होने से पूर्व की मिथ्यात्वादि पर्यायों में, सम्यग्दर्शन का अभाव है।

प्रश्न 51 – आत्मा, अनादि से यथाख्यातचारित्रमय है – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि यथाख्यातचारित्र, चारित्रगुण की पर्याय है; अतः यथाख्यातचारित्र होने से पूर्व की, सकलचारित्र आदि पर्यायों में, यथाख्यातचारित्र का अभाव है।

प्रश्न 52 – 'आत्मा, अनादि से केवलदर्शनपर्यायमय है' – ऐसा माननेवाला कौन सा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता क्योंकि केवलदर्शन, दर्शनगुण की पर्याय है; अतः केवलदर्शन होने से पूर्व की, अचक्षुदर्शनादि पर्यायों में, केवलदर्शन का अभाव है।

प्रश्न 53 – आत्मा, अनादि से सम्यग्ज्ञानपर्यायमय है – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता क्योंकि सम्यग्ज्ञान, ज्ञानगुण की पर्याय है; अतः सम्यग्ज्ञान होने से पूर्व की, मिथ्याज्ञानादि पर्यायों में, सम्यग्ज्ञान का अभाव है।

प्रश्न 54 – प्रध्वंसाभाव से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है?

उत्तर – वर्तमान अवस्था में धर्म नहीं किया है, फिर भी जीव, नवीन पुरुषार्थ से अधर्मदशा का तुरन्त ही अभाव करके, अपने में सत्य धर्म प्रगट कर सकता है। वर्तमान में कैसी भी हीनदशा हो, भविष्य में उत्तम से उत्तमदशा प्रगट हो सकती है क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है। प्रध्वंसाभाव के परिज्ञान से वर्तमान पामरता देखकर, भविष्य के प्रति निराश न होकर स्वसन्मुख होने का पुरुषार्थ प्रगट करने का उत्साह जागृत होता है। कोई कहे – मैंने तो बहुत पाप किए हैं, आगे पाप का उदय आ गया तो क्या होगा? भगवान कहते हैं कि भाई! वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्याय में अभाव है; तू स्वभाव का आश्रय लेकर तुरन्त धर्म कर! देर मत कर!

प्रश्न 55 – 'यह वर्तमान राग, मुझे जीवनभर परेशान करेगा' –ऐसा माननेवाले ने कौनसा अभाव नहीं माना?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव नहीं माना क्योंकि वर्तमान राग का, भविष्य की चारित्रगुण की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान राग, भविष्य के सुख–दुःख का कारण नहीं हो सकता।

प्रश्न 56– 'यह वर्तमान पाप, मुझे जीवनभर परेशान करेगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन–सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान पाप का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान पाप, भविष्य की परेशानी का कारण नहीं हो सकता।

प्रश्न 57 – 'इस वर्तमान अज्ञानदशा का कभी अभाव नहीं होगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन–सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान अज्ञानदशा का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान अज्ञानदशा, भविष्य के ज्ञान–अज्ञान का कारण नहीं हो सकती।

प्रश्न 58 – 'यह वर्तमान मिथ्यात्वभाव, मुझे हमेशा संसार परिभ्रमण करायेगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान मिथ्यात्वभाव का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान मिथ्यात्वभाव, भविष्य के सम्यक्त्व–मिथ्यात्व का कारण नहीं हो सकता है।

प्रश्न 59 – अन्योन्याभाव समझने से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में कुछ नहीं कर सकती है। जब पुद्गल की अवस्था, सजाति में कुछ नहीं कर सकती है तो पुद्गल, जीव का कुछ भी लाभ–हानि कैसे कर सकता है ? अर्थात्, कुछ नहीं कर सकता।

प्रश्न 60 – अत्यन्ताभाव समझने से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य में त्रिकाल अभाव है; इसलिए एक द्रव्य, अन्य द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता है – ऐसा समझने से 'दूसरे मेरा बुरा–भला कर देंगे' ऐसी पर में अपनेपने की भावना समाप्त हो जाती है।

प्रश्न 61 – सबसे पहले कौन से अभाव को जानना चाहिए ?

उत्तर – वैसे तो चारों अभाव जानना चाहिए। मुख्यरूप से प्रथम अत्यन्ताभाव को, फिर अन्योन्याभाव को, फिर बाकी दो अभावों को समझकर स्व–सन्मुख होना चाहिए।

प्रश्न 62 – चार अभावों को समझने से हमारा कल्याण कैसे हो ? सरल शब्दों में समझाइये।

उत्तर – (1) मैं ज्ञायकस्वभावी आत्मा, अनन्त गुणों का पिण्ड हूँ। मुझ निज ज्ञायकस्वभावी भगवान से भिन्न, दूसरे अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं, इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; इसलिए हटाओ दृष्टि, अत्यन्त भिन्न परपदार्थों– शरीर मन, वाणी से।

(2) जब एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में कुछ नहीं कर सकती है तो आठ कर्म, मुझे दुःख –सुख देंगे –ऐसी बुद्धि का अभाव हो जाना चाहिए, तो दृष्टि हटाओ द्रव्यकर्मों से।

(3) अब विचारो! पर से और द्रव्यकर्म से तो सम्बन्ध ही नहीं रहा। अब अपनी आत्मा की ओर देखो — तुम्हारी जो वर्तमान पर्याय है, उसका भूतकाल की पर्याय से कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि जब वह है ही नहीं – तो दृष्टि उठावो पिछली पर्यायों से।

(4) भविष्य की पर्याय अभी आयी ही नहीं। अब तुम अपनी वर्तमान ज्ञान की पर्याय को कहाँ ले जाओगे? पर, द्रव्यकर्म, भूत

और भविष्य की पर्यायों से तो सम्बन्ध रहा ही नहीं – तो एकमात्र जो अपना ज्ञायकस्वभाव है, उस पर दृष्टि देवें तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

चार अभाव : प्रयोगात्मक प्रश्नोत्तर

प्रश्न 63 – मैं सुबह उठा, अत्यन्ताभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्‌गल परमाणु हैं; उनकी क्रियावतीशक्ति की उस समय पर्याय की योग्यता से शरीर उठा। औदारिक आदि शरीर के उठने का, मुझ ज्ञान–दर्शन–उपयोगमयी निज जीवतत्त्व से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा अनुभव–ज्ञान वर्ते तो अत्यन्ताभाव को माना; और (2) संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मनरूप अनन्त पुद्‌गलों के उठने से मैं (आत्मा) उठा — ऐसी मान्यतावाले ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 64 – संयोगरूप अनन्त पुद्‌गलों के उठने को 'मैं (आत्मा) सुबह उठा' – इस मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस मान्यता का फल है।

प्रश्न 65 – संयोगरूप शरीर के उठने को, मैं (आत्मा) सुबह उठा –इस मान्यतारूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब अत्यन्ताभाव को माना कहा जावे ?

उत्तर – संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में जितने परमाणु हैं, वे सब क्रियावतीशक्ति की उस समय की पर्याय की योग्यता से उठे हैं। मुझ ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का, संयोगरूप शरीर के उठने से किसी भी प्रकार का, किसी भी अपेक्षा कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि शरीर के उठने का और

मुझ ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का, द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक्–पृथक् है – ऐसा जानकर, निज जीवतत्त्व की ओर दृष्टि करे तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो; तब अत्यन्ताभाव को माना। फिर अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से 'मैं सुबह उठा' – ऐसा कहा जा सकता है।

प्रश्न 66 – कोई चतुर कहे — संयोगरूप शरीर के उठने का तो आत्मा से सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि आत्मा का संयोगरूप शरीरों में अत्यन्ताभाव है, परन्तु द्रव्यकर्म के कारण तो शरीर उठा है न?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में जितने परमाणु हैं, उन सब परमाणुओं की स्कन्धरूप अवस्था में, एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है; इसलिए द्रव्यकर्म के कारण शरीर उठा — ऐसी मान्यतावाले ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 67 – संयोगरूप शरीर के उठने के कार्य में अन्योन्याभाव को माना कब कहा जाए?

उत्तर – जब संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गलों की स्कन्ध अवस्था में, एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है क्योंकि पुद्गलों की वर्तमान परस्पर अवस्थाओं में अन्योन्याभाव है, तब जीव के साथ संयोगरूप शरीर के उठने का सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा जाने–माने तो अन्योन्याभाव को माना।

प्रश्न 68 – शरीर के उठने का, आत्मा से अन्यन्ताभाव है और संयोगरूप स्कन्धों में एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय का,

दूसरे पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है - तो संयोगरूप औदारिक शरीर कैसे उठा ?

उत्तर - संयोगरूप औदारिकशरीर में उठनेरूप अवस्था का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है क्योंकि संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप वर्तमान पर्याय का, भूत की लेटनेरूप पर्यायों में प्रागभाव है और संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है। इसलिए यह सिद्ध हुआ कि संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप पर्याय का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 69 - संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप अवस्था का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही क्यों है; परद्रव्य, भूत-भविष्य की पर्याय क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - इसलिए कि (1) कार्य का सच्चा कारण परद्रव्य तो हो ही नहीं सकता है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है और एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्यों में अत्यन्ताभाव है। (2) शरीर के उठनेरूप उस समय पर्याय की योग्यता का, पूर्व पर्याय भी कारण नहीं हो सकती है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्यायों में प्रागभाव है। (3) शरीर के उठनेरूप उस समय पर्याय की योग्यता का, भविष्य की पर्याय भी कारण नहीं हो सकती है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 70 - शरीर के उठनेरूप कार्य का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है, इसे मानने-जानने से क्या सिद्ध हुआ ?

उत्तर - जैसे, संयोगरूप औदारिकशरीर के उठने का कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता से ही हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी

कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता से होते रहे हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे – यह सिद्ध हुआ।

प्रश्न 71 – विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से ही होते रहे हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे –इससे मानने–जानने से क्या लाभ हुआ, तब चारों अभावों को माना कहा जावे ?

उत्तर – ऐसा मानते ही पर में करूँ–करूँ की खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है; धर्म की प्राप्ति कर, क्रम से निर्वाण को प्राप्त करना – यह चारों अभावों के जानने का लाभ है।

प्रश्न 72 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में चार अभाव किस प्रकार हैं ?

उत्तर – (1) घड़े का हाथ–डण्डा–कीली–चाक–डोरी में अभाव, अन्योन्याभाव है; (2) घड़े का भूत काल की पिण्ड पर्याय में अभाव, प्रागभाव है; (3) घड़े का भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है और कुम्हार तथा घड़े में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 73 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में किस मान्यतावाले ने चार अभावों को नहीं माना ?

उत्तर – (1) कुम्हार ने घड़ा बनाया — ऐसी मान्यतावाले ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना। (2) कुम्हार की आत्मा से तो घड़ा नहीं बना, परन्तु हाथ, चाक, डोरी ने तो घड़ा बनाया –ऐसी मान्यतावाले ने अन्योन्याभाव को नहीं माना। (3) घड़ा बना – उसमें भूतकाल की पिण्ड पर्याय ने कुछ तो किया –इस मान्यतावाले ने प्रागभाव को नहीं माना। (4) घड़ा बना – उसमें भविष्य की पर्याय का भी कुछ सम्बन्ध है – ऐसी मान्यतावाले ने प्रध्वंसाभाव को नहीं माना।

प्रश्न 74 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में चार अभाव को कब माना ?

उत्तर – घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता से ही बना है; घड़ा बनने में कुम्हार–चाक–डोरी आदि का तथा भूत काल की पर्याय और भविष्य की पर्यायों का सम्बन्ध नहीं है – ऐसा माननेवाले ने चार अभावों को माना।

प्रश्न 75 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में चार अभावों को मानने से क्या–क्या लाभ होता है?

उत्तर – (1) संसार के पाँच कारणों का तथा पंच परावर्तन का अभाव हो जाता है; (2) पंच परमेष्टियों में उसकी गिनती होने लगती है; (3) पंचम पारिणामिकभाव का महत्त्व आ जाता है; (4) चारों गतियों के अभावरूप मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है; और (5) आठों कर्मों का अभाव हो जाता है।

चार अभाव : भ्रान्तियों का निराकरण

प्रश्न 76 – कोई चतुर कहता है कि द्रव्य में द्रव्य–गुण–पर्याय तीन बातें होती हैं; पर्याय में प्रागभाव–प्रध्वंसाभाव आ गया; द्रव्य में अत्यन्ताभाव आ गया; एक द्रव्य के गुणों में आपस में अन्योन्याभाव आ गया; – क्या उनका ऐसा कहना ठीक है?

उत्तर – बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि (1) प्रत्येक द्रव्य में द्रव्य–गुण–पर्याय होती है। एक द्रव्य के गुण और उनकी वर्तमान पर्यायों में इन चार अभावों का कोई सम्बन्ध नहीं है। (2) द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, भूतकाल की पर्यायों में प्रागभाव है और वर्तमान पर्याय का, भविष्य काल की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है। (3) द्रव्य का गुणों के साथ, नित्यतादात्म्यसम्बन्ध होने से, एक द्रव्य के गुणों का, दूसरे द्रव्य के गुणों के साथ अत्यन्ताभाव है। (4) अब जो वर्तमान में पुद्गलस्कन्ध हैं; अज्ञानी उस स्कन्ध को ही द्रव्य मानता है। अज्ञानी को मिथ्याबुद्धि हटाने के लिए, प्रत्येक स्कन्ध में भी प्रत्येक परमाणु

की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है – ऐसा बताना चार अभावों का तात्पर्य है। (5) एक द्रव्य के गुणों का आपस में अन्योन्याभाव मानना, वह जिनमत से बाहर है।

प्रश्न 77 – अन्योन्याभाव की क्या आवश्यकता थी?

उत्तर – जैसे, सुनार ने जेवर बनाया तो सुनार का जेवर में तो अत्यन्ताभाव हो गया। इसके बदले काई कहे, सुनार ने तो नहीं बनाया परन्तु हाथ–हथौड़ा आदि से तो बना तो उससे कहते हैं कि भाई! पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों का परस्पर में अभाव है – ऐसा अन्योन्याभाव बताता है। जब एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गलों की वर्तमान पर्याय में कुछ नहीं कर सकती है तो, तू तो विजातीय है, यह बताने के लिए अन्योन्याभाव को बताने की आवश्यकता थी।

प्रश्न 78 – जीव, दूसरे का तो न करे परन्तु पुद्गल तो पुद्गल का करता है?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; ऐसी मान्यतावालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 79 – जीव से तो भाषा नहीं निकली, परन्तु होंठ से तो निकली है न?

उत्तर – बिल्कुल नहीं; ऐसी मान्यतावालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना, क्योंकि होंठ, आहारवर्गणा के और भाषा, भाषावर्गणा के स्कन्ध हैं।

प्रश्न 80 – चार अभावों का स्वरूप किस शास्त्र में आया है?

उत्तर – सभी शास्त्रों में है परन्तु विशेषरूप से 'आप्तमीमांसा' में

आचार्य समन्तभद्रस्वामी ने श्लोक 9, 10, 11 में बताया है – जो इस प्रकार है। –

भावैकान्तै पदार्थानाम भावानाम पन्हवात।
सर्वात्मकमनाद्यन्तम स्वरूपमता वकम्॥9॥

अर्थ :— हे भगवान! पदार्थों का सर्वथा सद्भाव ही मानने पर, अभावों का अभाव (लोप) मानना होगा। इस प्रकार अभावों को नहीं मानने से, सर्व पदार्थ सर्वात्मक हो जावेंगे। सभी अनादि व अनन्त हो जाएँगे; किसी का कोई पृथक् स्वरूप ही न रहेगा, जो कि आपको स्वीकार नहीं है।

कार्य द्रव्यमनादि स्यात् प्रागभावस्य निन्हवे।
प्रध्वंसस्य च धर्मस्य प्रच्यवेऽनन्तां व्रजेत्॥10॥

अर्थ :— प्रागभाव का अभाव मानने पर, समस्त कार्य (पर्यायें) अनादि हो जाएँगे। इसी प्रकार प्रध्वंसाभाव नहीं मानने पर, सभी कार्य (पर्यायें) अनन्त हो जाएँगे।

सर्वात्मकं तदेकं स्यादन्यायोह व्यतिक्रमे।
अन्यत्र समवाये न व्यपदिश्येत सर्वथा॥11॥

अर्थ :— यदि अन्योन्याभाव को नहीं मानेंगे तो दृश्यमान सर्व पदार्थ (पुद्गल) वर्तमान में एकरूप हो जाएँगे और अत्यन्ताभाव न मानने पर, सर्व द्रव्य त्रिकाल एकरूप हो जाने से, किसी भी द्रव्य का व्यपदेश (कथन) भी नहीं बन सकेगा।

प्रश्न 81 – सातावेदनीयकर्म से पैसा आता है – कौन से अभाव को नहीं माना?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 82 – नामकर्म से शरीर की रचना होती है – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 83 – आत्मा ने तो सन्दूक नहीं उठाया, परन्तु हाथों ने तो उठाया – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 84 – मैं रोटी खाता हूँ — इस मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 85 – शरीर, रोटी खाता हूँ — ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 86 – मैं उठा — किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 87 – शरीर ने कुर्ता पहना – किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को भूलता है।

प्रश्न 88 – मेरा मकान है – किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर –अत्यन्ताभाव को भूलता है।

जय महावीर – जय महावीर

नोट्स

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

जन्म : सन् 1913

देह परिवर्तन : 19 दिसम्बर 2012

जन्मस्थान : ग्राम टिकरी, जिला मेरठ, उत्तरप्रदेश

पिता – श्री मिट्ठनलाल जैन

माता – श्रीमती भरतोदेवी जैन

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा, मथुरा-चौरासी एवं तत्पश्चात् जम्बू-विद्यालय, सहारनपुर में हुई। लघुवय में लाहौर में स्वतन्त्र व्यवसाय किया। देश के स्वाधीन होने के पश्चात्, स्वदेश वापिसी और बुलन्दशहर (उ०प्र०) में आजाद ट्रेडिंग कम्पनी के नाम से, पुस्तकों एवं स्टेशनरी का व्यवसाय किया। अपनी सहधर्मिणी श्रीमती विमलादेवी, चार पुत्रियों तथा एक पुत्र के साथ, पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए, धर्ममार्ग पर गतिशील रहे।

सिद्धक्षेत्र श्री गिरनारजी की यात्रा के समय, सोनगढ़ में विराजित दिव्यविभूति पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के मंगल साक्षात्कार के उपरान्त, आपके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ। फलस्वरूप, निरन्तर तत्त्वाराधना एवं तत्त्वप्रचार ही आपके जीवन के अभिन्न अंग बन गये और सम्पूर्ण देश में तत्त्वज्ञान की पताका फहराने के लिये, आप एकाकी निकल पड़े।

पूज्य गुरुदेवश्री के मंगल प्रवचनों एवं माननीय श्री रामजीभाई दोशी एवं खेमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं में जो कुछ सीखा, उसे 'जैन-सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के, आठ भाग के रूप में संकलन का कार्य कर, जन-जन को जिनधर्म के गूढ़ रहस्य को साधारण भाषा में प्रस्तुत करने का अपूर्व कार्य किया।

आपकी तत्त्वज्ञान की प्रचार-प्रसार की उत्कृष्ट भावनाओं के फलस्वरूप, उन्हें क्रियान्वित करने हेतु, **तीर्थधाम मङ्गलायतन** के रूप में आपके स्वप्न को आपके परिवार व समग्र मुमुक्षु-समाज ने साकार किया। यहाँ से प्रकाशित मासिक-पत्रिका, **मङ्गलायतन** के आप आजीवन प्रधान सम्पादक रहे।

स्वाभिमानीवृत्ति के साथ ही, निर्भीकता, निस्पृहता, सिद्धान्तों पर अडिगता आदि आपके व्यक्तित्व की उल्लेखनीय विशेषताएँ रही हैं।

आपके उपकारों के प्रति नतमस्तक होते हुए, आपके श्रीचरणों में वन्दन समर्पित करते हैं, और आपकी इस अनुपम कृति को समाज के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं।

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला